ONLYIAS
BY PHYSICS WALLAH

NCERT WALLAH

NCERT की पुस्तकों का सार

सिविल सेवा परीक्षाओं हेतु

ONLYIAS BY PHYSICS WALLAH

NCERT WALLAH

NCERT की पुस्तकों का सार

भारतीय कला एवं संस्कृति

सिविल सेवा परीक्षाओं हेतु

Join Telegram: @apna_library

EDITION: First

Published By: Physicswallah Private Limited

Physics Wallah

ISBN:

MRP:

Mobile App: Physics Wallah (Available on Play Store)

Website: www.pw.live

Youtube Channel: Physics Wallah - Alakh Pandey
Physics Wallah Foundation
Competition Wallah
NCERT Wallah

Email: publication@pw.live

SKU Code: 31a800cd-57d8-44a6-9b16-4c6731ef1ab0

अधिकार

इस मॉड्यूल के सभी अधिकार लेखक और प्रकाशक के पास सुरक्षित हैं। लेखक या प्रकाशक की लिखित अनुमति के बिना इसका किसी भी तरह से उपयोग या पुनरुत्पादन नहीं किया जाएगा।

अस्वीकरण: यह मॉड्यूल छात्रों को संबंधित विषय का अध्ययन करने के लिए सामग्री प्रदान करने के उद्देश्य से विभिन्न स्रोतों से बनाया गया संकलन है। सभी सामग्री/सूचना/डेटा में मानवीय त्रुटि के कारण कुछ प्रकार की गलतियाँ हो सकती हैं, इसलिए सरकारी प्रकाशन, पत्रिकाओं, अधिसूचनाओं और मूल पांडुलिपियों के साथ डेटा का संदर्भ लेना उचित है।

इस सामग्री/सूचना/डेटा का उद्देश्य बौद्धिक संपदा के वास्तविक स्वामी के मूल कार्य/पांडुलिपियों पर किसी भी प्रकार के कॉपीराइट का दावा करना नहीं है। साथ ही, जैसा कि इस मॉड्यूल में दिए गए लेखक द्वारा प्रदान की गई सामग्री/सूचना/डेटा के संकलन/संपादन में हर संभव प्रयास किया गया है, प्रकाशक मॉड्यूल की सामग्री/सूचना/डेटा से उत्पन्न किसी भी अशुद्धि या किसी भी कानूनी कार्यवाही के लिए कोई वारंटी और दायित्व नहीं लेता है।

(यह मॉड्यूल केवल शैक्षिक उद्देश्य के लिए उपयोग किया जाएगा)

Search On TG: @apna_pdf

Join Telegram: @apna_library

भूमिका

प्रिय पाठको

सिविल सेवा परीक्षा की तैयारी में NCERT की पुस्तकों का महत्त्व नाभिकीय है। यद्यपि NCERT की पुस्तकों का प्रकाशन सामान्यतः माध्यमिक एवं उच्चतर माध्यमिक में अध्ययनरत विद्यार्थियों के लिए किया जाता है, परंतु सिविल परीक्षा की तैयारी के लिए भी ये पुस्तकें केंद्रीय महत्त्व रखती हैं। इसका मूल कारण यह है कि माध्यमिक एवं उच्चतर माध्यमिक ही वे कक्षाएँ हैं, जहाँ से किसी भी विद्यार्थी के अध्ययन एवं समझ की बुनियाद निर्मित होती है। इन कक्षाओं में ही सामान्य अध्ययन के विभिन्न विषयों की एक समग्र समझ विद्यार्थियों में विकसित की जाती है। इसी बुनियाद के आधार पर आगे के अध्ययन की दुनिया के विभिन्न शिखर स्थापित होते हैं। अगर किंचित कारणों से यह बुनियाद कमजोर रह जाती है अथवा इनका यथोचित विकास नहीं हो पाता है, तो इस स्थिति में आगे के अध्ययन की दुनिया उतनी ही संकीर्ण नींव पर खड़ी दुर्बल प्रतीत होती है। माध्यमिक एवं उच्चतर माध्यमिक अध्ययन के दौरान विविध सामाजिक, आर्थिक तथा पृष्ठभूमिगत कारणों से विभिन्न विद्यार्थियों की बुनियादी समझ का स्तर भी समान नहीं होता। कुछ विद्यार्थियों को इस दौरान शीर्ष विद्यालय एवं श्रेष्ठ शिक्षकों से पढ़ने का अवसर मिलता है तो कई सारे विद्यार्थियों को ये सारे अवसर नहीं प्राप्त हो पाते, इसलिए आगे सिविल सेवा जैसे परीक्षाओं की तैयारी में भी वे शुरुआत में ही बुनियादी रूप से पिछड़ जाते हैं। तैयारी की शुरुआत में ही उत्पन्न इस गहरे अंतराल को पाटने के लिए NCERT की माध्यमिक एवं उच्चतर माध्यमिक की पुस्तकों को पुनः पढ़ने की सलाह दी जाती है ताकि छठी कक्षा से बारहवीं कक्षा के समय उत्पन्न हुआ बुनियादी अंतराल आगे अवरोधक न बने और तैयारी की शुरुआत समान स्तर से की जा सके। इसके अलावा जिन्होंने अपने माध्यमिक, उच्चतर माध्यमिक के दौरान बेहतर तरीके से अपनी बुनियाद तैयार की है, वे भी रिवीजन के द्वारा इसे और सुदृढ़ कर सकें ताकि आगे की यात्रा आसान हो सके। इसके अलावा पिछले कुछ वर्षों में ऐसे अभ्यर्थियों की संख्या काफी तेजी से बढ़ी है, जो दसवीं के बाद ही सिविल सेवा की तैयारी शुरू कर देते हैं। इन विद्यार्थियों के लिए यह स्वर्णिम अवसर होता है, जब वे अपनी बुनियादी समझ को बेहतर कर सकें और इसके लिए NCERT की पुस्तकें सर्वश्रेष्ठ माध्यम सिद्ध होती हैं।

NCERT की पुस्तकों की विशेषता यह है कि यह बिल्कुल आधारभूत स्तर से शुरुआत करती हैं। इनके मूल अध्येता छठी से बारहवीं स्तर के विद्यार्थी होते हैं, इसलिए इसकी संरचना में इस बात का विशेष ध्यान रखा जाता है कि यह उस कक्षा के विद्यार्थियों के लिए आसानी से ग्राह्य हो। इसलिए भी यह पुस्तक तैयारी के दौरान स्टार्टर की तरह कार्य करती है, जहाँ बिना अधिक बोझिल हुए आसानी से तैयारी की यात्रा में प्रवेश किया जा सके। चूँकि ये पुस्तकें विभिन्न कक्षाओं के लिए तैयार की गई हैं इसलिए एक ही विषय, यहाँ तक कि एक ही टॉपिक विभिन्न कक्षाओं में भिन्न-भिन्न स्तर के होते हैं। उदाहरण के लिए छठी कक्षा की सामाजिक विज्ञान की पुस्तक में इतिहास अथवा भूगोल का जो स्तर होगा वह बारहवीं कक्षा के उसी टॉपिक से बिल्कुल अलग होगा तथा मात्र प्रवेशकीय स्वरूप का होगा। एक सिविल सेवा की तैयारी करने वाले अभ्यर्थी के लिए अलग-अलग कक्षाओं की पुस्तकों से एक ही टॉपिक को अलग-अलग पढ़ना एक समय साध्य कार्य होता है। इसके अलावा, स्कूल के विद्यार्थियों की समझ के लिए प्रस्तुतीकरण के रोचक चित्र आदि भी इस समय उतने महत्त्वपूर्ण मालूम नहीं होते। इस स्थिति में जरूरत महसूस होती है एक ऐसी पुस्तक की जो एक ही विषय, यहाँ तक कि एक ही टॉपिक के विभिन्न महत्त्वपूर्ण बिंदुओं को अलग-अलग NCERT से एक जगह संकलित कर दे और उनका प्रवाह इतना गतिमान कर दे कि वह हमारी बुनियाद सुदृढ़ करने के साथ-साथ पढ़ने में भी रोचक प्रतीत हो। इसी उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए PWOnlyIAS द्वारा NCERT पुस्तकों की यह शृंखला तैयार की गई है। NCERT पुस्तकों की इस शृंखला को सिविल सेवा परीक्षा के पाठ्यक्रम के अनुसार विषयवार रूप से विभाजित किया गया है। इन पुस्तकों में इस बात का विशेष ध्यान रखा गया है कि छठी से लेकर बारहवीं तक की पुस्तकों में दी गई कोई भी अवधारणा या कोई भी बिंदु, जो सिविल सेवा परीक्षा के अनुरूप महत्त्वपूर्ण हो, वह न छूटे, बल्कि अगर कहीं अवधारणा समग्रता में स्पष्ट न हो पा रही हो तो उसे अपनी ओर से नोट्स, टेबल एवं रेखाचित्र आदि द्वारा समग्रता प्रदान की जा सके।

पुस्तकों को पढ़ना ही पर्याप्त नहीं होता, बल्कि पठित की जाँच के लिए उसका अभ्यास भी अनिवार्य होता है। इस उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए इस शृंखला में विषयवार रूप से विभाजित चार वर्क बुक को भी शामिल किया गया है, जिनमें सिविल सेवा परीक्षा के अनुरूप विभिन्न विषयों के अभ्यास-प्रश्नों को सम्मिलित किया गया है। ये अभ्यास-प्रश्न इस स्वरूप में तैयार किए गए हैं कि ये प्रश्न NCERT की पुस्तकों के रिवीजन की स्व-पुष्टि कर सकें तथा इस माध्यम से सिविल सेवा परीक्षा के प्रश्नों का अभ्यास भी हो सके।

अब आपको पुस्तक सौंपते हुए हम आशा कर रहे हैं NCERT पुस्तकों की यह सीरीज आपके लिए उपयोगी सिद्ध होगी। पुस्तक से संबंधित किसी भी प्रकार के सुझाव एवं शिकायतों के लिए हमें अवश्य लिखें। आपकी महत्त्वपूर्ण प्रतिक्रियाओं की प्रतीक्षा रहेगी।

शुभकामनाएँ!

Search On TG: @apna_pdf

Join Telegram: @apna_library

Search On TG: @apna_pdf

Join Telegram: @apna_library

विषय सूची

1.	प्रागैतिहासिक शैल-चित्र	1-5
2.	परवर्ती भित्ति-चित्रण परंपराएँ	6-10
3.	भारतीय चित्रकला की शैलियाँ	11-45
4.	भारत की जीवंत कला परंपराएँ	46-52
5.	आधुनिक भारतीय कला	53-65
6.	सिंधु घाटी की कलाएँ	66-71
7.	मौर्यकालीन कला	72-75
8.	भारतीय कला और स्थापत्य में मौर्योत्तर कालीन प्रवृत्तियाँ	76-93
9.	मंदिर स्थापत्य और मूर्तिकला	94-113
10.	इंडो-इस्लामिक वास्तुकला के कुछ कलात्मक पहलू	114-122

Search On TG: @apna_pdf

Join Telegram: @apna_library

Search On TG: @apna_pdf

Join Telegram: @apna_library

1 प्रागैतिहासिक शैल-चित्र

संदर्भ: इस अध्याय में NCERT पाठ्यपुस्तक की कक्षा-XI (भारतीय कला का परिचय: भाग-I) के अध्याय-1 का सारांश शामिल है।

परिचय

कागज़, भाषा या लिखित अभिलेखों के अस्तित्व से पूर्व के इतिहास को प्राक्-इतिहास या प्रागैतिहास (**Pre-history**) कहा जाता है। प्रारंभ में यह समझना चुनौतीपूर्ण था, कि प्रागैतिहासिक काल में लोग कैसे रहते थे। हालाँकि विद्वानों ने प्रागैतिहासिक स्थलों पर **खुदाई के माध्यम से जानकारी प्राप्त की** है, जिसमें औजार, मिट्टी के बर्तन, आवास स्थल, उस काल के मनुष्यों और पशुओं के अवशेष तथा गुफा चित्र आदि शामिल हैं। इन निष्कर्षों का विश्लेषण करके विद्वानों ने प्रागैतिहासिक जीवन की अपेक्षाकृत सटीक जानकारी प्राप्त की है। जब लोगों की भोजन, जल, वस्त्र और आवास जैसी बुनियादी आवश्यकताएँ पूरी होने लगीं, तो वे कला के माध्यम से विशेषकर **गुफाओं की दीवारों पर चित्र और रेखाचित्र बनाकर** अपने विचारों और मनोभावों को अभिव्यक्त करने का प्रयास करने लगे।

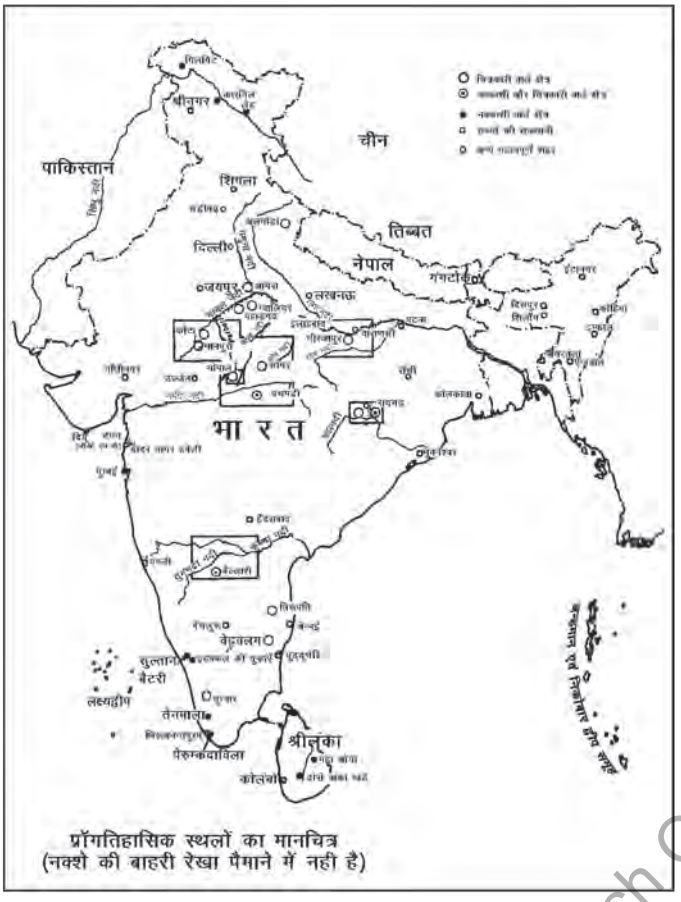

चित्र 1.1: प्रगितिहासिक स्थलों का एक मानचित्र

Search On TG: @apna_pdf

Join Telegram: @apna_library

प्रागैतिहासिक गुफा चित्र

- विश्व के अनेक भागों में **उत्तर-पुरापाषाण काल (Upper Palaeolithic era)** के प्रागैतिहासिक गुफा चित्र प्राप्त हुए हैं।
- भारत में शैल-चित्रों की सर्वप्रथम खोज वर्ष **1867-68** में पुरातत्त्वविद् **आर्किबोल्ड कार्लाइल (Archibold Carlleyle) ने स्पेन में हुई आल्तमीरा (Altamira)** की खोज से पूर्व की थी।

चित्र 1.2: प्रागैतिहासिक गुफा चित्र

- **कार्लाइल, कॉकबर्न, एंडरसन, मित्र और घोष** जैसे पुरातत्त्वविदों ने मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश, आंध्र प्रदेश, कर्नाटक, बिहार और उत्तराखंड जैसे क्षेत्रों में शैलचित्रों वाले अनेक स्थल खोजे थे।
- इन चित्रों में छड़ी जैसी मानव आकृतियाँ, लम्बे थूथन वाले जीव, लोमड़ी और कई पैरों वाली छिपकलियों जैसे जंतु; साथ ही सफेद, काले और लाल गेरू रंग में ज्यामितीय प्रतिरूप भी शामिल थे।
- कुछ दृश्यों में तो **मानव आकृतियों को हाथ पकड़कर नाचते हुए दर्शाया गया है। कुछ चित्र पहले से बने चित्रों पर बने पाए गए हैं। वहाँ सबसे पहले** काले चित्र, फिर उन पर लाल गेरू चित्र और अंत में उन पर सफेद चित्र बने हुए पाए गए हैं।

क्या आप जानते हैं?

मानव के प्रारंभिक विकास में प्रागैतिहासिक काल को आमतौर पर पुरापाषाण युग या पुरापाषाण काल के रूप में जाना जाता है।

- इसके अतिरिक्त कश्मीर में **शिलापट्ट (Slabs)** पर चित्र उकेरे गए हैं, जबकि कर्नाटक और आंध्र प्रदेश में **ग्रेनाइट चट्टानों** पर सफेद, लाल गेरू या दोनों के संयोजन में विभिन्न प्रकार के चित्रों को दर्शाया गया है, जो प्रागैतिहासिक मानव की कलात्मक अभिव्यक्तियों में एक आकर्षक झलक प्रदान करते हैं।

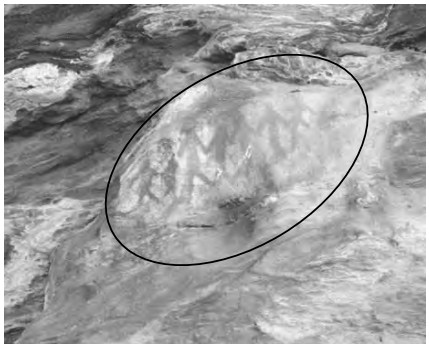

चित्र 1.3: हाथों में हाथ डाले नृत्य करते हुए लोग (लखुडियार, उत्तराखंड)

चित्र 1.4: लहरदार लकीरें (लखुडियार, उत्तराखंड)

भीमबेटका की प्राचीन शैल कला

- मध्य प्रदेश में विंध्याचल की पहाड़ियों में स्थित **भीमबेटका और उत्तर प्रदेश में कैमूर की पहाड़ियों की** शैल कला आद्य-ऐतिहासिक, प्रारंभिक ऐतिहासिक और नवपाषाण काल की है।
- इन शैलाश्रयों में **विविध प्रकार के चित्र अंकित हैं,** जिनमें साँड़, हाथी, सांभर, चिंकारा, भेड़, बकरी, घोड़ा, शैलकृत मानव, त्रिशूल और कभी-कभी वनस्पतियों के चित्र शामिल हैं।

Search On TG: @apna_pdf

PW ONLYIAS BY PHYSICS WALLAH

Join Telegram: @apna_library

- सबसे अधिक और सुंदर शैल-चित्र **विंध्य पर्वतमाला में मिले हैं,** क्योंकि वहाँ पुरापाषाण काल और मध्यपाषाण काल के अवशेष, वन, जंगली पौधें, फल, जलधाराएँ और कंदराओं की बहुतायत है, जो पाषाण युग के लोगों के रहने लिए एक आदर्श निवास स्थान है।
- भीमबेटका में लगभग **800 शैलाश्रय (Rock Shelters) हैं, जिनमें से 500 शैलाश्रयों में चित्र पाए जाते हैं।**
- पुरातत्त्वविद् **वी. एस. वाकणकर द्वारा 1957-58 में खोजी गई** इन गुफाओं के चित्रों में प्राचीन जीवन के विभिन्न पहलुओं, रोजमर्रा की घटनाओं से लेकर धार्मिक और शाही चित्र दर्शाए गए हैं।
- इन चित्रों के विषयों में **शिकार, नृत्य, संगीत, घोड़े और हाथी की सवारी, पशुओं की लड़ाई, शहद इकट्ठा करने, शारीरिक-सज्जा और घरेलू दृश्य शामिल हैं।**
- भीमबेटका की शैल कला को सात ऐतिहासिक कालों में वर्गीकृत किया गया है, जिनमें से प्रथम तीन काल हैं - उत्तर पुरापाषाण काल (प्रथम काल), मध्यपाषाण काल (द्वितीय काल) और ताम्रपाषाण काल (तृतीय काल)।
- यह कला क्षेत्र की प्राचीन सभ्यताओं की संस्कृति और विकास के बारे में बहुमूल्य जानकारी प्रदान करती है।

चित्र 1.5: गुफा द्वार (भीमबेटका, मध्य प्रदेश)

भीमबेटका में उत्तर पुरापाषाण काल

- भीमबेटका में उत्तर पुरापाषाण काल के चित्र **हरी और गहरी लाल रेखाओं से बनाए गए हैं।**
- इन प्राचीन कलाकृतियों में **छड़ी के आकार की मानव आकृतियों के** साथ-साथ **भैंसों, हाथियों, बाघों, गैंडों और सूअरों जैसे बड़े पशुओं की आकृतियाँ भी दर्शायी गई हैं।**
- कुछ चित्र **धवन चित्र (wash paintings) हैं,** लेकिन अधिकांश चित्र जटिल **ज्यामितीय आकृतियों से भरे हुए हैं।**
- हरे रंग के चित्रों में आमतौर पर **नर्तकियों** को दर्शाया गया है, जबकि लाल रंग के चित्रों में **शिकारियों** को दर्शाया गया है।
- ये कलाकृतियाँ इतिहास के इस काल के दौरान प्रारंभिक मानव की **कलात्मक अभिव्यक्तियों** और संभवतः **अनुष्ठानों** के बारे में बहुमूल्य जानकारी प्रदान करती हैं।

चित्र 1.6: उत्तर पुरापाषाण काल में पशु आकृतियाँ

भीमबेटका में मध्यपाषाण काल

- मध्यपाषाण काल, जिसका प्रतिनिधित्व भीमबेटका में द्वितीय काल द्वारा किया जाता है, के चित्रों की संख्या सबसे अधिक है, हालाँकि इस काल के चित्रों का आकार पहले के कालों की तुलना में **छोटा है।**
- इस चरण में **शिकार के दृश्य प्रमुख हैं, जिसमें लोगों को काँटेदार भाले, नोकदार डंडे, तीर-कमान जैसे हथियार लेकर समूहों में शिकार करते हुए दर्शाया गया है।**
- कुछ चित्रों में आदिमानवों को **जाल-फंदे** लेकर पशुओं को पकड़ने की कोशिश करते हुए दिखाया गया है।
- इन शिकारियों को प्रायः **साधारण कपड़े और आभूषण पहने हुए चित्रित किया गया है,** जबकि कुछ चित्रों में मनुष्यों को विस्तृत **सिर-वस्त्र या मुखौटे पहने हुए भी दर्शाया गया है।**
- कलाकृतियों में विभिन्न प्रकार के पशुओं को दर्शाया गया है, जिनमें **हाथी, भैंसा, बाघ, सूअर, हिरण, मृग, तेंदुए, चीता, गैंडे, मछली, मेंढक, छिपकली, गिलहरी और पक्षी शामिल हैं।**

चित्र 1.7: केवल एक पशु का चित्रांकन, भीमबेटका

चित्र 1.8: जंगली पशु का शिकार, भीमबेटका

Search on TG: @apna_pdf

Join Telegram: @apna_library

- मध्यपाषाण काल के कलाकार पशुओं को चित्रित करना अधिक पसंद करते थे तथा उन्हें **शिकार और शिकारी दोनों रूपों में चित्रित किया है।**
- जहाँ पशुओं को प्राकृतिक शैली में चित्रित किया गया, वहीं मानव आकृतियों को साज-सज्जा के साथ सुरुचिपूर्ण तरीके से प्रस्तुत किया गया है।
- **महिलाओं को कपड़े पहने हुए और नग्न** दोनों रूपों में दर्शाया गया है तथा सभी आयु वर्ग के व्यक्तियों को दर्शाया गया है; बच्चों को दौड़ते-भागते, उछलते-कूदते और खेलते हुए दर्शाया गया है।
- **चित्रों में सामूहिक नृत्य, फल एकत्र करना, शहद एकत्र करना, खाना बनाना और पारिवारिक दृश्य** सामान्य विषय थे।
- कई शैलाश्रयों में **हाथ और मुट्ठी की छाप तथा उँगलियों के निशान** भी मिले हैं।
- भीमबेटका के कलाकार अनेक रंगों का प्रयोग करते थे, जिनमें **सफेद और लाल** उनके पसंदीदा रंग थे।
- ये रंग खनिजों को कूट-पीसकर तैयार किए जाते थे, जैसे **लाल रंग के लिए हेमेटाइट (गेरू) और हरे रंग के लिए कैल्सेडोनी, सफेद रंग के लिए संभवतः चूना पत्थर** का प्रयोग किया जाता था।
- रंग बनाने के लिए इन खनिजों को पीसकर पाउडर बनाया जाता था, जिसे पानी और संभवतः पशुओं की चर्बी या पेड़ से निकाले गए गोंद या राल के साथ मिलाया जाता था। पेड़ों की पतली रेशेदार टहनियों से ब्रुश बनाए जाते थे।
- आश्चर्य की बात यह है कि ये रंग संभवतः चट्टान की सतह के साथ रासायनिक प्रतिक्रियाओं के कारण हजारों वर्षों से बने हुए हैं, जो प्राचीन सभ्यता के कलात्मक कौशल की एक आकर्षक झलक प्रदान करते हैं।

शैल चित्रकारी

वर्तमान आदिम लोगों में भी शैल चित्रकारी की यह प्रथा सामान्य है। वे जन्म, मृत्यु, वयस्क होने और विवाह के समय किए जाने वाले अनुष्ठानों के हिस्से के रूप में चट्टानों पर नक्काशी या पेंटिंग करते हैं। वे शिकार के अनुष्ठानों के दौरान नकाब पहनकर नृत्य करते हैं, जिससे उन्हें ऐसे जंतुओं को मारने में मदद मिल सके जिन्हें ढूँढना या मारना मुश्किल होता है।

भीमबेटका के पत्थरों पर प्राचीन कहानियाँ

- भीमबेटका के कलाकारों ने शैलाश्रयों की दीवारों और छतों पर अपने चित्र बनाए हैं।
- कुछ चित्र रहने के स्थानों में भी मिले हैं, जबकि अन्य चित्र संभावित **धार्मिक महत्त्व वाले स्थानों में मिले हैं,** जो अक्सर **ऊँचे या असुविधाजनक स्थान थे,** जिससे संभवतः दूर से दिखाई दे सकें।

चित्र 1.9: नृत्य का दृश्य (इस दृश्य में एक-दूसरे का हाथ पकड़कर नृत्य करती हुई आकृतियाँ दर्शायी गई हैं। वस्तुतः यह एक ऐसा विषय है जिसे बार-बार दोहराया गया है। नृत्य का यह दृश्य हमें उत्तराखंड के लखुडियार के पाषाण दृश्य की याद दिलाता है।)

चित्र 1.10: शिकार का दृश्य (मध्यपाषाण काल के चित्रों में शिकार के दृश्य बहुलता में पाए जाते हैं। यह ऐसा ही एक दृश्य है, जिसमें लोगों का एक समूह भैंसे को मारते हुए दिखाया गया है। कुछ घायल व्यक्तियों को इधर-उधर पड़ा दर्शाया गया है। ये चित्र अंकन की कला में श्रेष्ठता का प्रदर्शन करते हैं।)

- चुनौतियों का सामना करने के बावजूद, इन प्राचीन चित्रों में उल्लेखनीय चित्रात्मक गुणवत्ता झलकती है। इनमें **कलाकारों के प्राकृतिक वातावरण के दृश्यों को दर्शाया गया है,** जिनमें **साहसी और आनंदित मानव आकृतियाँ तथा आकर्षक, युवा पशु दिखाए गए हैं।**
- इन आदिम कलाकारों को कहानी कहने-सुनने का शौक था, उन्होंने **जीवित रहने के लिए संघर्षरत मनुष्यों और पशुओं** दोनों को नाटकीय ढंग से चित्रित किया।
- कुछ दृश्यों में लोगों को शिकार करते हुए दिखाया गया है, जिसमें घायल लोग इधर-उधर जमीन पर पड़े हैं, जबकि अन्य दृश्यों में पशुओं को मौत की पीड़ा से तड़पते हुई और लोगों को उसके चारों ओर नाचते हुए दिखाया गया है, जो प्रकृति पर मानव प्रभुत्व को दर्शाता है।

Search On TG: @apna_pdf

Join Telegram: @apna_library

- विशेष रूप से कई शैल कला स्थलों पर **पुराने चित्रों के ऊपर नए चित्र बनाए गए हैं,** भीमबेटका में कुछ स्थानों पर चित्रों की **20 परतें** तक हैं।
- इस प्रथा के कारणों का केवल अनुमान लगाया जा सकता है, लेकिन इसमें पिछले चित्रों से असंतोष, कुछ चित्रों या स्थानों का पवित्र या विशेष महत्त्व या समय के साथ एक ही स्थान का कई पीढ़ियों द्वारा उपयोग करना शामिल हो सकता है।
- ये प्रागैतिहासिक चित्र प्रारंभिक मानव के **जीवन, भोजन की आदतों, दैनिक गतिविधियों और विचार प्रक्रियाओं के बारे में बहुमूल्य जानकारी प्रदान करते हैं।**
- वे इस क्षेत्र में पाए जाने वाले हथियारों, औजारों, चीनी मिट्टी की वस्तुओं तथा हड्डियों जैसी असंख्य कलाकृतियों के साथ मानव सभ्यता के विकास के साक्षी हैं।
- सबसे बढ़कर, ये शैलचित्र उस युग के आदिमानव द्वारा विकसित अमूल्य विरासत हैं।

विचारणीय बिंदु

भारत में प्रागैतिहासिक चित्रकलाएँ मध्यभारत से लेकर प्रायद्वीपीय और पश्चिमी भारत तक पूरे देश में पाई जाती हैं। यह आकर्षक है कि भले ही स्थान भिन्न हों और शायद सभ्यता भी भिन्न हो, फिर भी चित्रकलाओं के विषय समान थे, जैसे- पशु, शिकार, आदिवासी उत्सव और दैनिक गतिविधियाँ आदि। उपर्युक्त समानताओं के इतर क्या आपको लगता है, कि विचार भी एक- दूसरे से जुड़े थे या यह केवल एक संयोग था?

निष्कर्ष

संक्षेप में, भीमबेटका के शैलचित्र, जो विभिन्न ऐतिहासिक कालों से संबंधित हैं, हमारे पूर्वजों के जीवन और विचारों की एक आकर्षक झलक प्रस्तुत करते हैं। सीमित औजारों और सामग्रियों के साथ चुनौतीपूर्ण परिस्थितियों में बनाई गई ये उल्लेखनीय कलाकृतियाँ, कलाकारों के अपने पर्यावरण से गहरे संबंध और कहानी कहने-सुनने की रुचियों को दर्शाती हैं। ये चित्र शिकार, जीवित रहने के संघर्ष और मनुष्यों एवं पशुओं दोनों के जटिल चित्रण के दृश्यों के माध्यम से रोमांच की भावना, प्रकृति पर प्रभुत्व एवं अपने आस-पास के वातावरण को दर्शाते हैं।

ये शैलचित्र विकासशील मानव सभ्यता के प्रमाण हैं, जो प्रारंभिक समाज की जीवन-शैली, भोजन संबंधी आदतों, दैनिक गतिविधियों और सबसे बढ़कर उनकी विचार-प्रक्रिया पर प्रकाश डालते हैं।

महत्त्वपूर्ण शब्दावलियाँ

- **शैलाश्रय:** शैलों में गुफा या प्राकृतिक संरचना, जहाँ प्रागैतिहासिक चित्र मिले हैं।
- **मध्यपाषाण काल:** वह युग जिसके दौरान भीमबेटका में अनेक चित्र बनाए गए, जिनमें शिकार के दृश्यों और दैनिक जीवन के विभिन्न पहलुओं को छोटे आकार की कलाकृतियों में दर्शाया गया है।
- **अध्यारोपण:** विद्यमान चित्रों के ऊपर नए चित्र बनाने की प्रथा।
- **धार्मिक महत्त्व:** कुछ चित्रों या स्थानों से जुड़े धार्मिक या आध्यात्मिक महत्त्व को दर्शाता है।
- **प्रागैतिहासिक काल:** लिखित अभिलेखों के आविष्कार से पूर्व के इतिहास का समय, जिसके दौरान इन चित्रों का निर्माण किया गया था।
- **कलाकृतियाँ:** प्राचीन मनुष्यों द्वारा निर्मित या प्रयुक्त वस्तुएँ, जैसे- हथियार, औजार, चीनी मिट्टी की वस्तुएँ और हड्डियाँ, जो उनके दैनिक जीवन के बारे में जानकारी प्रदान करती हैं।

Search On TG: @apna_pdf

Join Telegram: @apna_library

2 परवर्ती भित्ति-चित्रण परंपराएँ

संदर्भ: इस अध्याय में NCERT पाठ्यपुस्तक की कक्षा-XI (भारतीय कला का परिचय: भाग-I) के अध्याय-5 का सारांश शामिल है।

परिचय

परवर्ती भित्ति-चित्र परंपराएँ (Later Mural Traditions) विविध प्रकार की कलात्मक अभिव्यक्तियों को दर्शाती हैं, जो मध्यकाल से मंदिरों, महलों और अन्य पवित्र स्थलों को सुशोभित करती हैं। इस अध्याय में इन जटिल और अत्यंत आश्चर्यजनक कला रूपों का चित्रण किया गया है, जो भारत के इतिहास के उत्तर काल के दौरान इसके विभिन्न क्षेत्रों में विकसित हुए।

अजंता के बाद चित्रकला के बहुत कम पुरास्थल बचे हैं, जो चित्रकला की परंपरा के पुनर्निर्माण के लिए बहुमूल्य साक्ष्य प्रस्तुत करते हैं। यह ध्यान देने योग्य बात है कि प्रतिमाएँ पलस्तर और रंग रोगन की हुईं थीं। गुफा खोदने की परंपरा भी अनेक ऐसे स्थानों पर जारी रही, जहाँ मूर्तिकला और चित्रकला दोनों का एक साथ उपयोग होता रहा।

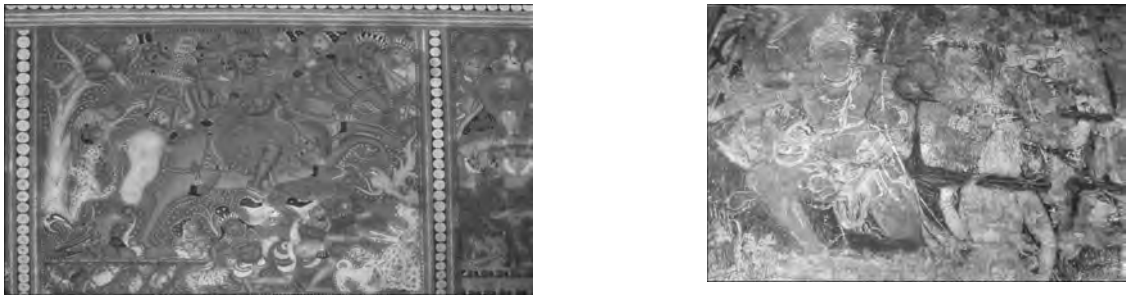

(a) (b)

चित्र 2.1: (a) अनंतपद्मनाभ मंदिर, कासरगोड (b) शिव द्वारा त्रिपुरासुर का वध, तंजावुर

(a) (b)

चित्र 2.2: (a) राम द्वारा रावण का वध (रामायण का एक दृश्य, मट्टनचेरी महल) (b) शास्त, पद्मनाभपुरम महल (परकल)

Search on TG: @apna_pdf

Join Telegram: @apna_library

बादामी

- बादामी **578-579** ई. के आस-पास प्रारंभिक **चालुक्य राजवंश की राजधानी थी। वाकाटक शासन** के पतन के बाद **चालुक्यों ने** दक्कन में अपनी सत्ता स्थापित की।
- चालुक्य नरेश **मंगलेश** (चालुक्य नरेश **पुलकेशिन प्रथम** का छोटा पुत्र) ने बादामी गुफाओं की खुदाई का संरक्षण किया, जिसे **विष्णु गुफा** के नाम से जाना जाता है।
- **गुफा संख्या-4** के शिलालेख में **578-579** ई. की तिथि अंकित है, इसमें गुफा की सुंदरता का वर्णन है और यह विष्णु की प्रतिमा को समर्पित की गई है, इसलिए इस गुफा को विष्णु गुफा के नाम से जाना जाता है।
- इसमें सामने के मंडप की मेहराबदार छत पर चित्रकारी का सिर्फ एक ही अंश शेष है। इस गुफा के चित्रों में पुलकेशिन प्रथम के पुत्र कीर्तिवर्मन के राजमहल के दृश्य चित्रित किए गए हैं, जो अजंता परंपरा का एक विस्तार है। इसकी लयबद्ध रेखाएँ धाराप्रवाह रूप और सुसंहत संयोजन कला की कुशलता तथा परिपक्वता के सुंदर उदाहरण हैं, जो ईसा की छठी शताब्दी के कलाकारों में पाई जाती थी।
- चित्रों में दर्शाए गए मुखमण्डल अजंता की शैली से मिलते-जुलते हैं। कलाकारों ने **साधारण रेखाओं के जरिए संपूर्ण आकृति को भव्य बना दिया है।** यह उल्लेखनीय है कि गुंबददार छत के बचे हुए अंश पर महल के जीवन के दृश्यों को चित्रित किया गया है, जिसमें राजा, रानी और दिव्य आकृतियों के विस्तृत चित्रण के साथ नृत्य भी शामिल है।

चित्र 2.3: सहायकों के साथ महारानी, बादामी

पल्लव, पांड्य और चोल राजाओं के शासनकाल में भित्ति-चित्र

पल्लव

- तमिलनाडु के दक्षिणी क्षेत्रों में चित्रकला की परंपरा पल्लव, पांड्य और चोल राजवंशों के शासन काल में विकसित हुई।
- चालुक्य नरेशों के बाद पल्लव **नरेश** उल्लेखनीय कला संरक्षक थे। **महेंद्रवर्मन प्रथम ने सातवीं** शताब्दी में पनामलई, मंडगपट्टु और कांचीपुरम में मंदिरों का निर्माण कराया, जो कला में उसकी गहरी रुचि को दर्शाते हैं।
- **मंडगपट्टू** के शिलालेख में उल्लेख है कि महेंद्रवर्मन प्रथम अनेक उपाधियों से विभूषित था, जैसे विचित्रचित्त (जिज्ञासु मन वाला), चित्रकारपुलि (कलाकार केशरी), चैत्यकारी (मंदिर निर्माता), जो कला संबंधी में गतिविधियों में उनकी रुचि को दर्शाता है।
- पनामलई देवी की आकृति लालित्यपूर्ण बनाई गई।
- **कांचीपुरम मंदिर** के चित्र तत्कालीन पल्लव नरेश राजसिंह के संरक्षण में बने थे। अब तो उन चित्रों के कुछ अंश ही उपलब्ध हैं, जिनमें **सोमस्कंद** को चित्रित किया गया है। इन चित्रों के चेहरे गोल और बड़े हैं। पहले के समय के चित्रों की तुलना में रेखाएँ लयबद्ध हैं और अलंकरण की मात्रा अधिक है। धड़ का चित्रण अभी भी पहले की मूर्तिकला परंपरा की तरह ही है, लेकिन अब उसे लंबा बना दिया गया है।

पांड्य

चित्र 2.4: सित्तनवासल, पूर्व पांड्य काल के चित्र (नवीं शताब्दी ईस्वी)

चित्र 2.5: देवी, सातवीं शताब्दी ई., पनामलई

Search On TG: @apna_pdf

Join Telegram: @apna_library

- जब पांड्य सत्ता में आए, तो उन्होंने कला को संरक्षण प्रदान करना जारी रखा। **तिरुमलईपुरम की गुफाएँ और सित्तनवासल की जैन गुफाएँ** जिसका जीवंत उदाहरण हैं। तिरुमलईपुरम के चित्रों में कुछ टूटी हुई परतें देखी जा सकती हैं।
- सित्तनवासल में ये **चित्र चैत्य के बरामदे की भीतरी छत और ब्रैकेट पर दिखाई देते हैं।**
- इन स्थानों के चित्रों में स्वर्गीय परियों की नृत्य करती आकृतियाँ (बरामदे के खंभों पर), दृढ़ आकृतियाँ (हल्के रंग की पृष्ठभूमि पर सिंदूरी लाल रंग में चित्रित), जीवंत रंग और कुशल कलात्मक कल्पना को दर्शाती हैं। शरीर को सूक्ष्म मॉडलिंग के साथ पीले रंग में प्रस्तुत किया गया है।
- **बड़ी-बड़ी आँखों** की यह परंपरा दक्कन और दक्षिण भारत में बाद की कलाकृतियों में भी जारी रही।

चोल

- चोल शासनकाल (नवीं से तेरहवीं शताब्दी) के दौरान **मंदिर निर्माण** और अलंकरण की परंपरा जारी रही।
- ग्यारहवीं शताब्दी में चोल शक्ति अपने चरमोत्कर्ष पर थी, जिसके परिणामस्वरूप तंजावुर में **बृहदेश्वर मंदिर,** तमिलनाडु में **गंगैकोंडचोलपुरम** तथा **दारासुरम** जैसे उत्कृष्ट नमूनों का निर्माण क्रमशः राजराज चोल, पुत्र राजेंद्र चोल और राजराज चोल द्वितीय के शासनकाल के दौरान किया गया था।
- चोल काल के चित्र नर्तमलई में देखने को मिलते हैं, विशेष रूप से बृहदेश्वर मंदिर में। यह उल्लेखनीय है, कि वहाँ चित्रकारी की दो परतें थीं। ऊपरी परत सोलहवीं शताब्दी में नायक शासकों के काल में चित्रित की गई थी, जो चोल चित्रकला की महान परंपरा को प्रकट करती है।
- **बृहदेश्वर मंदिर** के चित्रों में चोल कलाकारों की शैलीगत परिपक्वता दृष्टिगोचर होती है। इनमें लहरियेदार सुंदर रेखाओं के पूर्व-निर्धारित प्रवाह, **आकृतियों में हाव-भाव** और **अंग-प्रत्यंगों की लचक देखने को मिलती है। ये तत्त्व** चोल कलाकारों द्वारा अपने काल के दौरान प्राप्त की गई पूर्णता और संक्रमण के चरण दोनों का प्रतिनिधित्व करते हैं।

चित्र 2.6: चोल राजा राजराज और दरबारी कवि करुवर डेवर, तंजावूर (ग्यारहवीं शताब्दी)

- इन कलाकृतियों में विविध विषयों को दर्शाया गया है, जिनमें राजराज और उनके परामर्शदाता कुरुवर, नृत्यांगनाओं और भगवान शिव के विभिन्न रूपों, जैसे- **कैलाशवासी शिव**, **त्रिपुरांतक शिव, नटराज शिव** आदि शामिल हैं।

विजयनगर के भित्ति-चित्र

विजयनगर की चित्रकला में परिवर्तन

- तेरहवीं शताब्दी में चोल राजवंश के पतन के बाद, विजयनगर राजवंश (चौदहवीं-सोलहवीं शताब्दी) अस्तित्व में आया। **हम्पी को इसकी राजधानी बनाया गया तथा** हम्पी से त्रिची तक के क्षेत्र पर इसका नियंत्रण था।
- त्रिची के पास **तिरुपराकुनरम्** में चौदहवीं शताब्दी में बनाए गए चित्र विजयनगर शैली के आरंभिक चरण के नमूने हैं।

चित्र 2.7: दक्षिणामूर्ति, विजयनगर, लेपाक्षी

- हम्पी में विरुपाक्ष **मंदिर में** मंडप की भीतरी छत पर अनेक चित्र बने हुए हैं, जो उस वंश के इतिहास की घटनाओं तथा **रामायण और महाभारत के प्रसंगों को** दर्शाते हैं। अनेक महत्त्वपूर्ण चित्र फलकों में से एक चित्र में **बुक्काराय** के आध्यात्मिक गुरु **विद्यारण्य को एक पालकी** में बैठाकर एक शोभा यात्रा में ले जाया जा रहा है। साथ ही विष्णु के अवतारों को भी चित्रित किया गया है। चित्रों में आकृतियों के पार्श्व चित्र और चेहरे दिखाए गए हैं। आकृतियों की आँखें बड़ी- बड़ी और कमर पतली दिखाई गई है।
- वर्तमान आंध्र प्रदेश में हिंदूपुर के पास लेपाक्षी में शिव मंदिर की दीवारों पर विजयनगरीय चित्रकला के शानदार नमूने देखने को मिलते हैं।

चित्र 2.8: शिव द्वारा सूअर का पीछा करना (किरातार्जुनीय, लेपाक्षी मंदिर का एक दृश्य)

विजयनगर की कलात्मक परंपरा

- विजयनगर के चित्रकारों ने एक विशिष्ट चित्रात्मक भाषा का विकास किया, **जिसमें चेहरों को पार्श्वचित्र के रूप में और आकृतियों तथा वस्तुओं को दो आयामों में दिखाया गया है। रेखाएँ निश्चल लेकिन सरल दिखाई गई हैं।**
- इन परंपराओं ने दक्षिण भारत के विभिन्न केन्द्रों के कलाकारों को प्रभावित किया, जो नायक काल के चित्रों तक देखने को मिलती हैं।

Search On TG @apna_pdf

ONLYIAS BY PHYSICS WALLAH

Join Telegram: @apna_library

नायककालीन चित्र

- सत्रहवीं और अठारहवीं शताब्दी में नायक राजवंश ने तमिलनाडु के तिरूपराकुनरम्, श्रीरंगम् और तिरूवरूर में कलात्मक परंपरा को जारी रखा।
- तिरूपराकुनरम् में चौदहवीं और सत्रहवीं शताब्दी के चित्र पाए जाते हैं, जिनमें **वर्द्धमान महावीर के जीवन के दृश्य दर्शाए गए हैं।**

चित्र 2.9: पार्वती एवं उनकी सहायिकाएँ, वीरभद्र मंदिर, लेपाक्षी

नायककालीन चित्रों के मूल विषय

- नायककालीन चित्रों में **महाभारत और रामायण के प्रसंगों** के साथ-साथ **कृष्ण-लीला के दृश्य भी** चित्रित किए गए हैं।
- तिरूवरूर, चिदंबरम और चेंगम जैसे विभिन्न मंदिरों में शिव, विष्णु और रामायण से संबंधित कथाएँ चित्रित हैं।
- चिदंबरम में अनेक चित्र फलकों में शिव और विष्णु से संबंधित कथाएँ चित्रित हैं – **शिव को भिक्षाटन मूर्ति और विष्णु को मोहिनी के रूप में** चित्रित किया गया है।

नायक शैली में निरंतरता और परिवर्तन

- नायक चित्रकला को **विजयनगर शैली का ही विस्तृत रूप माना जाता है,** यद्यपि इसमें छोटे-मोटे क्षेत्रीय परिवर्तन और समावेशन देखने को मिलते हैं।
- आकृतियों के पार्श्व चित्र अधिकतर समतल **पृष्ठभूमि पर दर्शाए गए हैं।** विजयनगरीय चित्रों की तुलना में **पुरुष आकृतियों की कमर पतली और पेट कम भारी** दर्शाया गया है।
- कलाकारों ने परंपराओं का पालन करते हुए चित्रों में गति भरने का प्रयत्न किया है, जैसा कि तिरुवलंजुलि में **नटराज का चित्र** इसका प्रसिद्ध उदाहरण है।

केरल के भित्ति-चित्र

केरल भित्ति चित्रकला का विकास

- 16वीं से 18वीं शताब्दी के दौरान, केरल के चित्रकारों ने एक विशिष्ट चित्रात्मक भाषा तथा तकनीक का विकास कर लिया था, जिसमें **नायक और विजयनगर शैलियों के तत्त्व शामिल थे।**
- उन्होंने स्थानीय परंपराओं से प्रेरणा लेते हुए जैसे- **कथकली और कलम ऐझुथु (केरल में अनुष्ठान इत्यादि के समय भूमि पर की जाने वाली चित्रकारी)** में चमकदार रंगों का उपयोग करके मानव आकृतियों को त्रि-आयामी स्वरूप में प्रस्तुत किया।

चित्र 2.10: वेणुगोपाल. श्रीराम मंदिर, त्रिपरयार

मूल विषय और स्रोत

- केरल के भित्ति-चित्र **मंदिरों और तीर्थस्थलों की दीवारों** के साथ-साथ **राजमहलों के भीतर भी देखे जा सकते हैं।** विषय की दृष्टि से भी केरल के चित्र शेष परंपराओं से अलग दिखाई देते हैं।
- इनमें चित्रित अधिकांश आख्यान **केरल में प्रचलित हिन्दू पौराणिक कथाओं पर आधारित हैं।**
- कलाकारों ने अपनी चित्रित कथाओं के लिए मौखिक परम्पराओं और **रामायण** तथा **महाभारत के स्थानीय रूपांतरों को आधार बनाया था।**

चित्र 2.11: गोपिकाओं के साथ बाँसुरी बजाते हुए श्रीकृष्ण (कृष्ण मंदिर, पुण्डरीकपुरम)

केरल भित्ति चित्रकला के प्रमुख स्थल

- **इसमे पुंडरीकपुरम का कृष्ण मंदिर, पनायनरकावु, तिरूकोडिथानम्, त्रिपरयार का श्री राम मंदिर और त्रिसूर का वडक्कुनाथन मंदिर** जैसे उल्लेखनीय स्थल शामिल हैं।
- इन स्थलों पर केरल की भित्ति चित्रण परंपरा की परिपक्व अवस्था दृष्टिगोचर होती है।

Search ... a_pdf

Join Telegram: @apna_library

समकालीन भित्ति-चित्रों में निरंतरता

- आज भी देश के विभिन्न भागों में ग्रामीण घरों की आंतरिक और बाहरी दीवारों पर भित्ति-चित्र बने हुए देखे जा सकते हैं।
- महिलाएँ अधिकांशतः समारोह, त्योहार के दौरान या दीवारों की नियमित सफाई और सजावट के समय इन चित्रों को बनाती हैं।
- पारंपरिक भित्ति-चित्र विभिन्न क्षेत्रों में देखे जाते हैं, जैसे- **राजस्थान और गुजरात के कुछ भागों में पिठोरो, उत्तरी बिहार में मिथिला भित्ति-चित्र, महाराष्ट्र में वर्ली चित्रकला तथा ओडिशा, पश्चिम बंगाल, मध्य प्रदेश और छत्तीसगढ़ में दीवारों की विभिन्न प्रकार से सजावट आदि।**

विचारणीय बिंदु

बाद के भित्ति चित्रों में अद्वितीय चित्रकला परंपराएँ, तकनीकें और विषय हैं। बादामी, विजयनगर और संगम तमिल संस्कृति के चित्रों में व्यक्त की गई विविधता बहुत व्यापक है। क्या आप बता सकते हैं, कि ये चित्रकला प्रागैतिहासिक चित्रकला और समकालीन उत्तर भारत की चित्रकला से किस प्रकार भिन्न है?

निष्कर्ष

भारत में भित्ति-चित्रों का एक समृद्ध और स्थायी इतिहास है, जो दूसरी शताब्दी ईसा पूर्व से लेकर आठवीं से दसवीं शताब्दी ईस्वी तक विस्तृत है। अजंता और एलोरा की गुफाओं, बाघ की गुफाओं, सित्तनवासल तथा अन्य स्थलों जैसे प्रतिष्ठित स्थानों में पाए गए उत्कृष्ट भित्ति-चित्र इस प्राचीन कलात्मक परंपरा के अमूल्य साक्ष्य हैं। गुफाओं और राजमहलों की दीवारों पर चित्रित ये भित्ति-चित्र कलात्मक प्रतिभा और सांस्कृतिक अभिव्यक्ति के एक उल्लेखनीय मिश्रण का प्रतिनिधित्व करते हैं। प्राकृतिक गुफाओं और चट्टानों को काटकर बनाए गए कक्षों से लेकर अजंता, बाघ और एलोरा की गुफाओं के जटिल भित्ति-चित्र इस अवधि के दौरान विकसित हुए विविध विषयों और शैलियों को प्रदर्शित करते हैं। ये कलाकृतियाँ न केवल ऐतिहासिक आख्यानों के दृश्य अभिलेखागार के रूप में कार्य करती हैं, बल्कि प्राचीन भारतीय सभ्यताओं की स्थायी रचनात्मकता और कलात्मक प्रतिभा की साक्षी हैं।

महत्त्वपूर्ण शब्दावलियाँ

- **भित्ति-चित्र:** कलात्मक अभिव्यक्ति का एक रूप, जिसमें सामान्यतः विभिन्न रंगों और तकनीकों का उपयोग करके बड़े पैमाने पर चित्रों को सीधे दीवारों या छतों पर बनाया जाता है।
- **फ्रेस्को तकनीक:** भित्ति-चित्रण की एक विधि है, जिसमें गीले प्लास्टर पर रंगों का प्रयोग किया जाता है, जिससे रंग सूखने पर सतह का अभिन्न अंग बन जाते हैं।
- **मंदिर भित्ति-चित्र:** मंदिरों की भीतरी दीवारों पर पाए जाने वाले भित्ति चित्र, जिनमें सामान्यतः धार्मिक आख्यान, देवताओं और पौराणिक कथाओं को दर्शाया जाता है।

Search On TG: @apna_pdf

PW ONLYIAS BY PHYSICS WALLAH

Join Telegram: @apna_library

3 भारतीय चित्रकला की शैलियाँ

संदर्भ: इस अध्याय में NCERT पाठ्यपुस्तक की कक्षा-XII (भारतीय कला का परिचय: भाग-II) के अध्याय-1, 2, 3, 4, 5 व 6 का सारांश शामिल है।

परिचय

भारतीय चित्रकला की एक समृद्ध परंपरा है, जो समय के साथ विकसित हुई है। ब्रिटिश काल से पहले इसका आधार मंदिर स्थापत्य कला से लेकर विस्तृत पांडुलिपियों की परंपराएँ थीं। अंग्रेजों ने "कंपनी स्कूल ऑफ पेंटिंग" की शुरुआत की, जिसमें भारतीय शैलियों के साथ यूरोपीय शैलियों का मिश्रण किया गया। जैसे-जैसे चित्रकला का विकास हुआ, राजा रवि वर्मा जैसे कलाकारों ने भारतीय विषयों के साथ यूरोपीय तकनीकों को जोड़ा। अवनींद्रनाथ टैगोर के नेतृत्व में "बंगाल स्कूल ऑफ आर्ट" ने भारतीय विरासत से प्रेरणा ली। नंदलाल बोस के 'हरिपुरा पोस्टर्स' में आम आदमी के जीवन का चित्रण किया गया, जबकि गगनेंद्रनाथ टैगोर और अन्य ने क्यूबिज्म (Cubism) जैसी आधुनिक शैलियों को अपनाया। जैमिनी रॉय जैसे कलाकारों ने लोक कला को समकालीन विषयों के साथ जोड़ा। यह यात्रा भारत की परंपराओं को बदलते वैश्विक प्रभावों के साथ मिलाने की क्षमता को दर्शाती है।

विष्णुधर्मोत्तर पुराण का भारतीय कला में योगदान

- पाँचवी शताब्दी के ग्रंथ "**विष्णुधर्मोत्तर पुराण**" के तीसरे खंड का **चित्रसूत्र अध्याय** भारतीय कला, विशेषकर चित्रकला का एक महत्त्वपूर्ण स्रोत है।
- यह अध्याय आकृति बनाने की कला से संबंधित है, जिसे **"प्रतिमा लक्षण"** कहते हैं, इसमें चित्रकला के सिद्धांतों की रूपरेखा प्रस्तुत की गई है।
- इसमें तकनीक, उपकरण, सामग्रियों, सतह (जैसे- दीवार या भित्ति), धारणा, परिप्रेक्ष्य और मानव आकृतियों के त्रि-आयामों की संरचना का उल्लेख किया गया है।
- **चित्रण के विभिन्न अंग, जैसे**– **रूप-भेद** या दृश्य और आकार, प्रमाण या परिमाप; अनुपात और संरचना; भाव या अभिव्यंजना; **लावण्य** योजना या सौंदर्य रचना, **सदृश** और **वार्णिकभंगा** या तूलिका और रंगों के उपयोग की विस्तारपूर्वक उदाहरण सहित व्याख्या की गई है।
- वर्षों से कलाकार इन सिद्धांतों का पालन करते रहे हैं, जिससे वे भारतीय चित्रकला की विभिन्न शैलियों और चित्रशालाओं के लिए आधार बन गए हैं। इस अध्याय में हम चित्रकला के विभिन्न प्रकारों पर विस्तार से चर्चा करेंगे।

मध्यकालीन लघु चित्रकारी

- मध्यकालीन युग के चित्रों को उनके छोटे आकार के कारण आमतौर पर **"लघु चित्र" कहा जाता है।**
- छोटे आकार का होने के कारण इन लघु चित्रों का हाथों में लेकर करीब से अवलोकन किया जाता था।
- महलों की दीवारों को अक्सर भित्ति-चित्रों से सजाया जाता था, इसलिए इन लघु चित्रों का उद्देश्य कभी भी दीवारों पर प्रदर्शित करना नहीं होता था।

पांडुलिपि चित्रण

- इन चित्रों का एक बड़ा वर्ग पांडुलिपि चित्रण के नाम से जाना जाता है।
- इन चित्रों में महाकाव्यों के काव्य छंदों और विभिन्न विहित, साहित्यिक, संगीत ग्रंथों से काव्य छंदों का चित्रण किया गया है। छंद आमतौर पर चित्रपट के शीर्ष भाग पर या उसके पीछे हस्तलिखित होते थे।
- चित्रों को व्यवस्थित रूप से विषयगत समूहों में वर्गीकृत किया गया था, जैसे- **रामायण, भागवत पुराण, महाभारत, गीतगोविंद, रागमाला** आदि।
- प्रत्येक संग्रह को कपड़े में लपेटकर राजाओं या संरक्षकों के पुस्तकालयों में संगृहीत किया जाता था।

Search On TG: @apna_pdf

Join Telegram: @apna_library

- **पुष्पिका पृष्ठ (Colophon Page):** यह संग्रह का सबसे महत्त्वपूर्ण पृष्ठ है, जिसमें संरक्षक, कलाकार, लेखक, तिथि और कृति के स्थान के बारे में विवरण होता है। दुर्भाग्य से समय के साथ अनेक पुष्पिका पृष्ठ लुप्त या नष्ट हो चुके हैं।

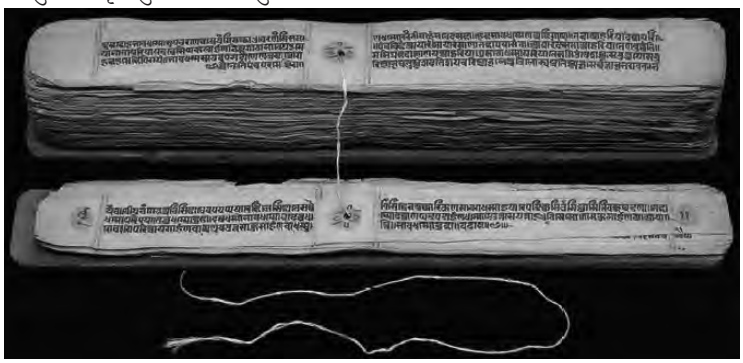

चित्र 3.1: मेवाड़ के विजय सिंह का श्रावकप्रतिक्रमसूत्र-कर्णी (कमलचंद्र द्वारा लिखित, वर्ष 1260)

चित्रकला के इतिहास के पुनर्निर्माण में चुनौतियाँ

- कई चित्रों को गलत तरीके से संभाले जाने, आग, नमी और अन्य आपदाओं के कारण क्षति का सामना करना पड़ा है।
- चित्रों को अधिकांशतः उपहार में दिया जाता था या उनका व्यापार किया जाता था, जिससे उनका विभिन्न क्षेत्रों में विस्तार हो जाता था। उदाहरण के लिए, बूँदी के राजा के पास मेवाड़ के चित्रों का संग्रह या इसके विपरीत मेवाड़ के राजा के संग्रह में बूँदी के चित्र मिल सकते हैं।
- कई चित्रों पर तिथि अंकित नहीं है, जिसके कारण कालानुक्रमिक अभिलेखों में अंतराल आ जाता है।
- बिखरे पृष्ठों को उनके मूल संग्रह से अलग कर दिया गया है तथा अब वे विभिन्न संग्रहालयों और निजी संग्रहों में देखने को मिलते हैं।
- ये बिखरे हुए चित्र कभी-कभी पुनः देखने को मिल जाते हैं। ये परिभाषित समय को चुनौती देते हैं और विद्वानों को पुनः कालक्रम में संशोधन करने तथा उसे पुनः परिभाषित करने के लिए विवश करते हैं।
- अद्यतन किए गए संग्रहों को शैली और परिस्थितिजन्य साक्ष्य के आधार पर काल्पनिक आधार पर दिनांकित किया जाता रहा है।

पश्चिमी भारतीय चित्रकला शैली

- पश्चिमी भारतीय चित्रकला शैली मुख्य रूप से पश्चिमी भारत में विकसित हुई, जिसका मुख्य केंद्र **गुजरात था। अन्य केंद्रों में दक्षिणी राजस्थान और मध्य भारत के पश्चिमी भाग शामिल थे।**
- गुजरात में अनेक महत्त्वपूर्ण बंदरगाह होने के कारण इस भू-भाग से अनेक व्यापारिक मार्ग जाते थे। इसके परिणामस्वरूप यहाँ अनेक संपन्न व्यापारी व स्थानीय सामंत प्रमुख हुए, जो आर्थिक संपन्नता के कारण कला के भी सशक्त संरक्षक बने।

जैन चित्रकला शैली

- जैन समुदाय, जो मुख्य रूप से व्यापारी थे, जैन-विषयक कला के उल्लेखनीय संरक्षक बन गए, जिसके परिणामस्वरूप पश्चिमी भारतीय चित्रकला शैली के भीतर जैन चित्रकला शैली का विकास हुआ।
- **'शास्त्रदान'** (पुस्तकों का दान) की अवधारणा के कारण जैन शैली के विकास को और प्रोत्साहन मिला। जैन समुदाय में सचित्र पांडुलिपि को मठ के **पुस्तकालय या "भंडार" को दान करना,** दान का एक महान कार्य माना जाता था।

कलात्मक व्याख्या के लिए प्रमुख जैन ग्रंथ

- **कल्पसूत्र: इसमें 24 तीर्थंकरों** के जीवन की घटनाओं का चित्रण किया गया है, जिसमें **पाँच प्रमुख घटनाओं-** गर्भाधान, जन्म, गृहत्याग, ज्ञान प्राप्ति, प्रथम उपदेश और महानिर्वाण **पर ध्यान केंद्रित किया गया है।**
- **कालकाचार्यकथा: यह आचार्य कालक** की साहसिक कहानी है, जो एक दुष्ट राजा से अपनी अपहृत बहन को बचाने के लिए प्रयासरत है।
- **उत्तराध्ययन सूत्र:** इसमें महावीर की शिक्षाओं का वर्णन है, जहाँ भिक्षुओं के आचार संहिता का पालन करने का वर्णन किया गया है।
- **संग्राहिणी सूत्र:** यह 12वीं शताब्दी का ब्रह्माण्ड संबंधी ग्रंथ है, जिसमें ब्रह्मांड की संरचना और अंतरिक्ष मानचित्रण का विवरण दिया गया है।
- जैन समुदाय ने इन ग्रंथों की अनेक प्रतियाँ तैयार कीं, जिनमें या तो बहुत कम या अत्यधिक चित्र मिलते हैं।

Search on TG: @apna_pdf

PW ONLYIAS BY PHYSICS WALLAH

Join Telegram: @apna_library

चित्र 3.2: महावीर का जन्म, कल्पसूत्र (15वीं शताब्दी, राजस्थान)

- एक विशिष्ट पृष्ठ पोथी या चित्र को लेखन और चित्रण के लिए वर्गों में विभाजित किया जाता था। पांडुलिपि या पोथी चित्र के पृष्ठों को एक साथ जोड़ने के लिए ऊपर और नीचे **'पटलिस'** नामक लकड़ी के आवरण का उपयोग किया जाता था तथा जोड़ने के लिए एक छोटा-सा छेद बनाया जाता था, जिससे उसे एक डोर के द्वारा बाँध दिया जाता था ताकि वे संरक्षित रहें।
- प्रारंभिक जैन चित्रकारी ताड़ के पत्तों पर होती थी, लेकिन 14वीं शताब्दी में कागज़ का चलन शुरू हो गया। पश्चिमी भारत की ताड़ के पत्तों पर लिखी सबसे पुरानी पांडुलिपि 11वीं शताब्दी की है।
- ताड़ के पत्तों पर स्थान की कमी के कारण, प्रारंभिक चित्रकला में मुख्य रूप से 'पटलिस' को सजाया जाता था, जो बाद में एक अनूठी शैली के रूप में विकसित हुई जिसमें चमकीले रंगों, कपड़े के अलंकरण और योजनाबद्ध चित्रण पर बल दिया गया।

जैन चित्रकला का विकास और शैलियाँ

- **वर्ष 1350 से 1450** तक की अवधि **जैन चित्रकला की** रचनात्मक पराकाष्ठा को दर्शाती है, जिसमें प्रतीकात्मक चित्रण से लेकर अधिक विविध और जटिल कलाकृतियों, जैसे- भूदृश्य, आकृतियों और संगीतकारों को चित्रित किया गया था। इन चित्रों को स्वर्ण और लाजवर्द से प्रचुर उपयोग से सुसज्जित किया गया था।
- प्रामाणिक ग्रंथों के अलावा अन्य कलाकृतियाँ **जैसे- तीर्थपट, मंडल और गैर-धार्मिक कहानियाँ** भी जैन समुदाय में लोकप्रिय थीं।

- महावीर के गर्भाधान के समय उनकी माता त्रिशला ने 14 वस्तुओं को स्वप्न में देखा। ये 14 वस्तुएँ थीं- हाथी, बेल, शेर, देवी लक्ष्मी, कलश, पालकी, सरोवर, छोटी नदी, अग्नि, ध्वज, माला, रत्नों का ढेर, सूर्य एवं चन्द्रमा।
- उन्होंने अपने सपने के बारे में एक ज्योतिषी से बात की। ज्योतिषी ने बताया कि वे एक ऐसे पुत्र को जन्म देंगी जो या तो राजाध्यक्ष होगा अथवा एक महान संत और गुरु होगा।

चित्र 3.3: त्रिशला के 14 स्वप्न, कल्पसूत्र

- इस चित्र में कालका को दाहिनी ओर नीचे और उनकी बंदी बनाई गई बहन को बायीं ओर ऊपर दिखाया गया है।
- जादुई शक्ति वाले गधे को कालका की सेना पर मुँह से बाणों की वर्षा करते हुए दिखाया गया है। दुष्ट राजा को वृत्त के अंदर से नेतृत्व करते हुए दिखाया गया है।

चित्र 3.4: कालकाचार्य कथा (1947 एन. सी. मेहता संग्रह, गुजरात)

Search on Telegram: @apna_pdf

Join Telegram: @apna_library

चित्रकला की स्वदेशी शैली

- जैन चित्रकला के अलावा 15वीं और 16वीं शताब्दी के अंत में **सामंतों, जमीदारों,** धनी नागरिकों और ऐसे अन्य लोगों के बीच चित्रकला की एक समानांतर परंपरा मौजूद थी, जिसमें धर्मनिरपेक्ष, धार्मिक और साहित्यिक विषयों के चित्रण शामिल थे।
- यह शैली राजस्थान के राजदरबार की शैलियों और मुगलों के प्रभावों से पहले की देशी चित्रकला परंपरा को दर्शाती है।
- इस काल की कलाकृतियों में **महापुराण, चौरपंचाशिका, भागवत पुराण और गीत गोविंद** जैसे विषय शामिल हैं, जो इस स्वदेशी शैली की विशेषता है, जिसे कभी-कभी पूर्व-मुगल या पूर्व-राजस्थानी कहा जाता है।

सल्तनतकालीन चित्रकला शैली

- 12वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध के बाद उत्तर, पूर्व और पश्चिम भारत के क्षेत्र मध्य एशिया के सल्तनत राजवंशों के शासन के अधीन आ गए, जिससे फारसी, तुर्क और अफगान के प्रभाव को चित्रों में देखा जा सकता है।

चित्र 3.5: चौरपंचाशिका (पन्द्रहवीं शताब्दी, गुजरात)

चित्र 3.6: निमतनामा (वर्ष 1550, मांडू)

- मध्य एशियाई कलाकारों और स्थानीय कारीगरों के बीच सहयोग से सल्तनत चित्रकला का उदय हुआ, जो एक **'चित्रण पद्धति' से अधिक एक 'शैली' थी,** जिसमें स्वदेशी और फारसी तत्त्वों का मिश्रण था।
- **नासिरशाह खिलजी के शासनकाल (1500-1510 ई.) के दौरान मांडू में चित्रित 'निमतनामा' (पकवानों की किताब) इस शैली** एक प्रमुख उदाहरण है, जिसमें व्यंजनों, शिकार करने की तकनीकों और औषधियों तथा सौंदर्य प्रसाधनों के बारे में विस्तृत जानकारी दी गई है।

पाल चित्रकला शैली

- पाल चित्रकला का उदय ग्यारहवीं और बारहवीं शताब्दी के दौरान **पूर्वी भारत के पाल** शासकों की सचित्र पांडुलिपियों से हुआ है।
- पाल शासन काल (750 ई. से बारहवीं शताब्दी के मध्य तक) **भारत में बौद्ध कला का अंतिम प्रमुख काल था।**

पालकालीन कला और शिक्षण केंद्र

- **नालंदा और विक्रमशिला** सहित प्रसिद्ध मठ बौद्ध शिक्षा, कला और ताड़ के पत्तों पर बौद्ध विषयों वाली पांडुलिपियों के चित्रण के प्रमुख केंद्र के रूप में उभरे।
- इन संस्थाओं ने कांस्य प्रतिमाओं की ढलाई पर आधारित कार्यशालाएँ भी आयोजित कीं।
- **दक्षिण-पूर्व एशिया** जैसे क्षेत्रों से विद्यार्थी और तीर्थयात्री शिक्षा तथा आध्यात्मिक शिक्षा के लिए इन मठों में आते थे।
- वे प्रायः पाल बौद्ध कला के नमूने, जैसे कांस्य कलाकृतियाँ और सचित्र पांडुलिपियाँ अपने साथ वापस लेकर जाते थे, जिससे पाल कला का **नेपाल, तिब्बत, बर्मा, श्रीलंका और जावा जैसे स्थानों तक प्रसार हुआ।**

पाल चित्रकला की विशेषताएँ

- जैन चित्रकला की कोणीय रेखाओं के विपरीत लयात्मक एवं प्रवाहमान रेखाएँ तथा हलकी रंग योजना पाल शैली की चित्रकला की प्रमुख विशेषताएँ हैं।
- अजन्ता की तरह पाल शैली में मठों में मूर्तिकला पद्धति और चित्रों में समान्तर कला शैली का अनुभव होता है।

Search On TG: @apna_pdf

PW ONLYIAS BY PHYSICS WALLAH

Join Telegram: @apna_library

- पाल बौद्ध ताड़पत्र पांडुलिपि का एक प्रमुख उदाहरण **"अष्टसहस्रिका प्रज्ञापारामिता"** (बोदलेन लाइब्रेरी, ऑक्सफोर्ड) है, जिसे **'बुद्धिमत्ता की पूर्णता'** के रूप में भी जाना जाता है। ग्यारहवीं शताब्दी में राजा रामपाल के शासनकाल के दौरान नालंदा मठ में निर्मित इस उत्कृष्ट कृति में छह सचित्र पृष्ठ और दोनों तरफ चित्रों से सजे लकड़ी के आवरण हैं।

चित्र 3.7: लोकेश्वर, अष्टसहस्रिका प्रज्ञापारामिता (पाल शासन काल, 1050 ई.)

पाल चित्रकला का पतन

- पाल कला का तेरहवीं शताब्दी के पूर्वार्ध में अंत हो गया, जब मुस्लिम आक्रमणकारियों ने बौद्ध विहारों को निशाना बनाया और नष्ट कर दिया।

राजस्थानी चित्रकला शैली

- **'राजस्थानी चित्रकला शैली'** शब्द का तात्पर्य उन चित्रकला शैलियों से है, जो रियासतों और क्षेत्रों में मुख्य रूप से आधुनिक राजस्थान और मध्य प्रदेश के कुछ हिस्सों में विकसित हुई।
- इन क्षेत्रों में **मेवाड़, बूँदी, कोटा, जयपुर, बीकानेर, किशनगढ़, जोधपुर (मारवाड़), मालवा और सिरोही** आदि शामिल हैं, जिनका इतिहास मुख्य रूप से सोलहवीं शताब्दी से लेकर उन्नीसवीं शताब्दी के प्रारंभ तक का है।

उत्पत्ति एवं विकास

- कलाविद **आनंद कुमारस्वामी ने वर्ष** 1916 में **इन कलाकृतियों को वर्गीकृत करने के लिए 'राजपूत चित्रकला'** का नाम दिया, क्योंकि इन रियासतों के अधिकांश संरक्षक और शासक राजपूत थे।
- यह नामकरण इस शैली को प्रसिद्ध मुगल चित्रकला शैली से अलग करने के लिए किया गया था।
- मालवा और हिमालय क्षेत्र की पहाड़ी शैली को भी **'राजपूत चित्रकला शैली' के अंतर्गत शामिल किया गया।**
- इस शब्द का प्रयोग मुगल विजय से पहले की स्वदेशी चित्रकला परंपरा को दर्शाने के लिए किया जाता था।
- भारतीय चित्रकला के बारे में काफी शोध हुए और समय के साथ **'राजपूत शैली' शब्द का** प्रयोग समाप्त हो गया तथा **'राजस्थानी' और 'पहाड़ी'** जैसी विशिष्ट श्रेणियों को प्राथमिकता दी जाने लगी।

राजस्थानी शैली की विशेषताएँ

- भौगोलिक दृष्टि से निकट होने के बावजूद, इन साम्राज्यों की चित्रकला शैलियों में महत्त्वपूर्ण विविधता देखने को मिलती है, जो निम्नलिखित है:
  - **बनावट** जैसे महीन या मोटी।
  - **रंगों की वरीयता** चमकदार से लेकर सौम्य रंग।
  - **रचनात्मक तत्त्व** वास्तुकला, आकृतियों, प्रकृति और कहानी कहने की तकनीकों के चित्रण में विविधताओं पर ध्यान केंद्रित करते हैं।
  - **प्रकृतिवाद** उन शैलियों पर जोर देता है जिनमें प्रकृतिवादी चित्रण के प्रति आकर्षण होता है, जबकि अन्य शैलियों में चरम व्यवहारवाद पर बल दिया जाता है।

सामग्री और तकनीक

- चित्रों का निर्माण सामान्यतः **'वसली'** पर किया गया था। वसली बनाने की अपनी अलग विशिष्ट तकनीक है, जिसमें कागज के पतले पन्नों को गोंद से चिपकाकर आवश्यक मोटाई की वसली तैयार की जाती थी।
- वसली पर सबसे पहले काले या भूरे रंग से रेखांकन किया जाता था, तत्पश्चात् उसमें आवश्यक रंग भरा जाता था।
- रंग मुख्य रूप से खनिजों और सोने तथा चांदी जैसी कीमती धातुओं से बनाए जाते थे, जिन्हें चिपकाने के लिए गोंद के साथ मिलाया जाता था।
- ब्रश **ऊँट और गिलहरी के बालों से बनाए जाते थे।** चित्रण कार्य पूर्ण होने पर अगेट पत्थर से उसे रगड़ा (घुटाई करना) जाता था, जिससे चित्र की ऊपरी सतह समतल, चमकदार व ओजपूर्ण हो जाती थी।

Search On TG: @apna_pdf

Join Telegram: @apna_library

चित्रकारी प्रक्रिया

- दक्ष कलाकार आरंभिक रेखांकन का कार्य करता था, तत्पश्चात् रंग, छवि चित्रण, वास्तु, भूदृश्य और पशु-पक्षी बनाने में निपुण उसके शिष्य एवं दक्ष कलाकार अपना-अपना कार्य पूरा करते थे।
- अंत में प्रधान कलाकार चित्र को अंतिम रूप देता था, फिर एक सुलेखक निर्दिष्ट स्थान पर संबंधित श्लोक या पद लिखता था।

राजस्थानी चित्रकला के विषय

- सोलहवीं शताब्दी तक, **विशेषकर राम और कृष्ण** से संबंधित वैष्णव संप्रदाय **भक्ति आंदोलन** के रूप में **पश्चिम, उत्तर और मध्य भारत** में लोकप्रिय हो चुका था।
- कृष्ण को न केवल भगवान के रूप में बल्कि एक आदर्श प्रेमी के प्रतीक के रूप में भी सम्मान दिया जाता था, जो भावमय और रहस्यमय प्रेम दोनों का प्रतिनिधित्व करते थे।
- दिव्य और मानवीय प्रेम के इस मिलन को श्रीकृष्ण तथा राधा ने सर्वोत्तम रूप से दर्शाया।

प्रमुख ग्रन्थ और उनके विषय

- **गीत गोविंद:** बारहवीं शताब्दी में **जयदेव** द्वारा रचित यह **संस्कृत काव्य "श्रृंगार रस" का** प्रतीक है, इसमें राधा और कृष्ण के आध्यात्मिक प्रेम को भौतिक रूप से दिखाया गया है।

चित्र 3.8: वन में कृष्ण और गोपियाँ (गीतगोविंद, मेवाड़, 1550 ई.)

संगीतज्ञों एवं कवियों द्वारा परंपरागत रूप में रागों को प्रेम एवं भक्ति के प्रसंगों में, दैवीय या मानवीय रूप में देखा गया। प्रत्येक राग एक विशेष अवस्था, दिन के प्रहर (समय) और ऋतु से जोड़ा गया है। रागमाला चित्रकला में सामान्यतः 36 या 42 चित्रित पृष्ठ हैं। ये एक परिवार के रूप में दिखाए गए हैं। प्रत्येक परिवार का मुखिया एक पुरुष राग होता है और स्त्री के रूप में छह रागिनियाँ होती हैं। छह मुख्य राग- भैरव, मालकोस, हिंडोल, दीपक, मेघ और श्री हैं।

- **रसमंजरी:** यह चौदहवीं शताब्दी में **भानुदत्त** द्वारा चरित संस्कृत ग्रंथ है, इसमें नायक और नायिकाओं को उम्र, रूप और भावगत विशेषताओं के आधार पर वर्गीकृत किया गया है। हालाँकि कृष्ण का स्पष्ट रूप से उल्लेख नहीं किया गया है, लेकिन उन्हें अधिकांशतः चित्रकारों द्वारा आदर्श प्रेमी के रूप में चित्रित किया जाता है।
- **रसिकप्रिया: 1591 ई. में केशवदास** द्वारा रचित यह कृति राधा और कृष्ण को प्रतीक मानकर प्रेमियों के बीच विविध भावनात्मक स्थितियों पर प्रकाश डालती है।
- **कविप्रिया:** यह **केशवदास** की एक और उत्कृष्ट कृति है, यह ग्रंथ **ओरछा** की प्रसिद्ध गणिका **राय परबीन** के सम्मान में रचित एक अन्य काव्य है। यह एक प्रेमकथा है, लेकिन दसवें अध्याय में 'बारहमासा' नामक प्रकरण है, जिसमें ऋतुओं और त्योहारों से जुड़ी भावनाओं का विशद वर्णन है।

विचारणीय बिंदु

बताइए कि राजस्थानी लघु चित्रकला की विशेषताएँ, सामग्री, तकनीक और सहयोगात्मक प्रक्रियाएँ इस क्षेत्र में कलात्मक शैलियों तथा विषयों के विकास में किस प्रकार योगदान देती हैं, मुख्य रूप से देवत्व प्रेम और भक्ति जैसे सांस्कृतिक आंदोलनों के प्रतिनिधित्व के संदर्भ में?

- **बिहारी सतसई:** 700 छंदों से युक्त **बिहारी लाल द्वारा** 1662 ई. के आस-पास रचित इस कृति में नैतिक सूक्तियों का समावेश है तथा **मेवाड़ और पहाड़ी शैलियों में इसका व्यापक रूप से चित्रण किया गया है।**
- **रागमाला चित्रकला:** ये कलाकृतियाँ विभिन्न रागों और रागिनियों की चित्रात्मक अभिव्यक्ति हैं, इनमें संगीत की धुनों को जीवंत चित्रों के रूप में चित्रित किया गया है।

Search On TG: @apna_pdf

PW ONLYIAS BY PHYSICS WALLAH

Join Telegram: @apna_library

चित्रकला में अन्य लोकप्रिय विषय

- **ढोला-मारू, सोनी-महिवाल तथा मृगावती जैसे** अन्य प्रेमाख्यान।
- धार्मिक ग्रंथों में **रामायण, भागवत पुराण, महाभारत और देवी महात्म्य शामिल हैं।**
- दरबार के दृश्यों, ऐतिहासिक घटनाओं, शिकार अभियानों, युद्धों, उत्सवों, अनुष्ठानों, राजाओं के चित्रों और शहर के दृश्यों का सजीव चित्रण।

मालवा चित्रकला शैली

- मालवा चित्रकला शैली 1600 से 1700 ई. तक विकसित हुई तथा हिंदू राजपूत दरबारों की पहचान बनी रही। यह **जैन पांडुलिपियों और चौरपंचाशिका** पांडुलिपि चित्रकला की शैलियों को मिलाकर एक अनूठा मिश्रण प्रस्तुत करती है।
- **विषयवस्तु:** मालवा चित्रकला ने रामायण, भागवत पुराण, अमरू शतक, रसिकप्रिया, रागमाला और बारहमासा से विषयवस्तु ली थी।
- **उल्लेखनीय कलाकृतियाँ:** इस शैली की आरंभिक कलाकृतियों में **अमरू शतक का** 1652 ई. का सचित्र काव्य पाठ और **माधोदास का** 1680 ई. का **रागमाला** चित्र शामिल हैं।

चित्र 3.9: राग मेघ, माधो दास (मालवा, 1680 ई.)

भौगोलिक विस्तार

- राजस्थानी शैली की विशिष्ट भौगोलिक उत्पत्ति के विपरीत, मालवा शैली का कोई स्पष्ट उत्पत्ति केंद्र नहीं है।
- ऐसा माना जाता है कि इसका विस्तार मध्य भारत के विशाल भू-भाग में था, जिसमें कभी-कभी **मांडू, नुसरत गढ़ और नरस्यंग शहर जैसे स्थानों का भी उल्लेख मिलता है।**
- दतिया महल में मालवा चित्रकला का एक महत्त्वपूर्ण संग्रह पाया गया है, जो इस कला के लिए **बुंदेलखंड को एक संभावित केंद्र के रूप में दर्शाता है।**
- हालाँकि, दतिया महल में भित्ति-चित्रों में स्पष्ट मुगल प्रभाव दिखाई देता है, जो मालवा शैली के कागज पर बने चित्रों में देखी गई स्वदेशी, द्वि-आयामी शैली के बिल्कुल विपरीत है।
- इन कलाकृतियों में संरक्षक राजाओं और उनके चित्रों का उल्लेख न होना इस बात की ओर संकेत करता है, कि दतिया के शासकों ने इन्हें घुमंतू कलाकारों से खरीदा होगा।

मेवाड़ चित्रकला शैली

- राजस्थान के मेवाड़ को राजस्थानी चित्रकला का एक महत्त्वपूर्ण प्रारंभिक केंद्र माना जाता है। मुगलों के साथ युद्धों के कारण संभवतः मेवाड़ के कई प्रारंभिक चित्र नष्ट हो गए। मेवाड़ शैली की उत्पत्ति सामान्यतः 1605 में निसारदीन द्वारा चुनार में चित्रित रागमाला चित्रों से मानी जाता है।
- **जगत सिंह प्रथम (वर्ष 1628-1652)** का शासनकाल मेवाड़ चित्रकला के लिए एक परिवर्तनकारी युग था।
- इस अवधि के उल्लेखनीय कलाकार **"साहिबदीन और मनोहर" थे। एक अन्य प्रतिष्ठित कलाकार जगन्नाथ ने 1719 ई. में "बिहारी सतसई"** का चित्रण किया।

- राष्ट्रीय संग्रहालय, नई दिल्ली में संगृहीत 1680-1690 ई. का यह चित्र भागवत पुराण के दृश्यों को दर्शाता है, जिसमें भगवान कृष्ण के जीवन के विभिन्न प्रसंगों को प्रदर्शित किया गया है।
- मालवा शैली में प्रस्तुत इस चित्र के प्रत्येक भाग में एक घटना के अलग-अलग दृश्य अंकित किए गए हैं।
- इनमें कृष्ण के जन्म के बाद नंद और यशोदा के घर पर गायन, नृत्य और धर्मार्थ गतिविधियों के साथ उत्सव शामिल हैं, विशेष रूप से गाय दान आदि।
- उत्सवों के बीच महिलाएँ बाल कृष्ण की नजर उतार रही हैं और कथा का अंत कृष्ण द्वारा दानव शकटासुर को अपने पैरों द्वारा मारकर मुक्ति दिलाने से होता है।

चित्र 3.10: भागवत पुराण

प्रमुख विशेषताएँ और विषय

- साहिबदीन की प्रमुख कृतियाँ **रागमाला, रसिकप्रिया, भागवत पुराण और रामायण का युद्ध कांड** हैं।

Search On TG @apna_pdf

Join Telegram: @apna_library

- **साहिबदीन के युद्ध कांड,** जो रामायण का एक भाग है, **में विशेष रूप से युद्ध के दृश्यों को चित्रित करने के लिए, तिर्यक रेखीय परिप्रेक्ष्य की एक अनूठी चित्रात्मक तकनीक प्रस्तुत की गई।**
- **मनोहर** की सबसे महत्त्वपूर्ण कृति 1649 ई. का रामायण का **"बाल काण्ड" था।**

चित्र 3.11: रामायण का युद्धकांड, साहिबदीन (मेवाड़, 1652 ई.)

- 18वीं शताब्दी तक **मेवाड़** चित्रकला ने अपना ध्यान साहित्य चित्रण से हटाकर दरबारी क्रियाकलापों के चित्रण पर केंद्रित कर लिया।
- सामान्य विषयों में छवि चित्रण, दरबार के दृश्य, शिकार अभियान, त्यौहार और राजघराने की दैनिक गतिविधियाँ शामिल थीं।
- एक पृष्ठ में **महाराणा जगत सिंह द्वितीय को** ग्रामीण क्षेत्र का भ्रमण करते हुए दिखाया गया है, जिसमें जटिल कथा और भूदृश्य के विस्तृत मनोरम दृश्य को दर्शाया गया है।
- मेवाड़ के कलाकार चमकीले रंगों को पसंद करते थे, जिनमें मुख्य रूप से लाल और पीले रंग होते थे।

विचारणीय बिंदु

मालवा चित्रकला शैली ने अपने प्रभावों और विविध विषयों के अनूठे मिश्रण के साथ हिंदू राजपूत दरबारों के कलात्मक परिदृश्य में योगदान दिया। हालाँकि, इसमें स्पष्ट भौगोलिक उत्पत्ति का अभाव था। आपके अनुसार वे कौन से कारक थे, जिनके कारण इस शैली के लिए स्पष्ट भौगोलिक उत्पत्ति का अभाव हो सकता है?

नाथद्वार

उदयपुर के पास स्थित नाथद्वार 17वीं शताब्दी के अंत में एक चित्रकला शैली के रूप में उभरा। उत्सव के अवसरों के दौरान देवता श्रीनाथजी के लिए कपड़े पर बड़े पिछवाई (पृष्ठभूमि) तैयार किए जाते थे।

बूँदी चित्रकला शैली

- बूँदी चित्रकला शैली **17वीं शताब्दी में अपने चरमोत्कर्ष** पर थी, जो अपनी उत्तम रंग योजना और डिजाइन के लिए जानी जाती है।
- वर्ष 1591 की **"बूँदी रागमाला"** को इस शैली की आरंभिक और विकासशील चित्रकला माना जाता है, जिसे भोज सिंह के शासनकाल के दौरान चित्रित किया गया था।
- यह शैली, विशेष रूप से **रावचत्तर साल** और **रावभाओ सिंह के शासनकाल** में व्यापक रूप से विकसित हुई, जिसमें साहिबदीन और मनोहर जैसे कलाकारों का भी महत्त्वपूर्ण योगदान रहा।
- बाद में राजनीतिक उथल-पुथल का सामना करने के बावजूद, **बुध सिंह ने** इस कला को आगे बढ़ाना जारी रखा। उनके बेटे **उमेद सिंह ने** चित्रों में सूक्ष्म विवरण दिखाने की प्रवृत्ति में परिष्कार किया।

चित्र 3.12: दीपक राग, चुनार रागमाला, बूँदी (1519 ई.)

- अनिरुद्ध सिंह के शासनकाल (1682-1702) के दौरान, 1680 में चित्रकार तुलची राम द्वारा अश्वरोही अनिरुद्ध का एक उल्लेखनीय चित्र बनाया गया था।
- राष्ट्रीय संग्रहालय, नई दिल्ली में रखा गया यह चित्र कलाकार की गति की धारणा और एक घोड़े की गति का प्रतीक है।
- इसमें एक घोड़े को हवा में तेज गति से दौड़ते हुए दिखाया गया है, कि जमीन दिखाई नहीं देती। चित्र के पीछे तुलची राम और राजकुमार अनिरुद्ध सिंह के नाम अंकित हैं, जबकि सामने वाले हिस्से में भरत सिंह का नाम है।
- इस चित्र के विषय में विद्वानों के बीच कुछ मतभेद हैं, अधिकांश का मानना है कि यह अपने राज्याभिषेक से पहले एक युवा अनिरुद्ध सिंह को दर्शाता है।

Search On TG: @apna_pdf

PW ONLYIAS BY PHYSICS WALLAH

Join Telegram: @apna_library

बूँदी चित्रकला शैली की उल्लेखनीय कृतियाँ

- 18वीं शताब्दी की चित्रकला में दक्कनी सौंदर्यशास्त्र को अपनाया गया तथा चमकीले रंगों को प्राथमिकता दी गई।
- **बिशन सिंह और राम सिंह** जैसे शासकों ने शिकार के प्रति झुकाव दिखाया, जिसके परिणामस्वरूप शिकार-विषयक अनेक कलाकृतियाँ बनीं।
- राम सिंह के शासनकाल के दौरान बूँदी महल की **चित्रशाला** में शाही जुलूसों और कृष्ण की कहानियों को दर्शाने वाले भित्ति-चित्र बनाए गए थे।

चित्र 3.13: राजा अनिरुद्ध सिंह हाड़ा

क्या आप जानते हैं?

बूँदी रागमाला सबसे बूँदी चित्रकला शैली के प्रारंभिक चित्रों में से एक था, जिसमें लेख फारसी भाषा में उत्कीर्ण थे। इसे शेख हसन, शेख अली तथा शेख हातिम द्वारा तैयार किया गया था, जो मुगल दरबार के प्रसिद्ध कलाकारों के शिष्य थे।

- मेवाड़ के रागमाला चित्रों का एक विशेष स्थान है, विशेष रूप से "मारू रागिनी" का, जिसे राष्ट्रीय संग्रहालय, नई दिल्ली में रखा गया है।
- इस चित्र में एक उत्कीर्ण लेख है जो हमें बताता है, कि इसे **1628** ई. में उदयपुर में राणा श्री जगत सिंह के संरक्षण में कलाकार साहिबदीन द्वारा बनाया गया था।
- दिलचस्प बात यह है कि उत्कीर्ण लेख में चित्रकारी के कार्य को लेखन के बराबर बताया गया है, जो कलाकार द्वारा बताई जाने वाली कहानी पर बल देता है।
- कहानी अपने आप में आकर्षक है- यह ढोला और मारू के बारे में है, जो लोक-कथाओं के राजकुमार और राजकुमारी हैं। एक साथ रहने से पहले उन्हें कई चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। इस चित्र में दोनों को एक ऊँट पर बैठकर भागते हुए दर्शाया गया है, जो उनके चिरस्थायी प्रेम और दृढ़ संकल्प को दर्शाता है।

चित्र 3.14: मारू रागिनी

बूँदी चित्रकला की विशेषताएँ

- प्रकृति का समृद्ध चित्रण, जिसमें विविध वनस्पतियाँ, जीव-जंतु और जल निकाय सम्मिलित हैं।
- हाथियों के अद्वितीय चित्र और रेखाचित्र।
- स्त्री सौंदर्य के लिए विशिष्ट प्रतिमान जैसे– छोटी ठिगनी कद-काठी, गोल मुखाकृति, तीक्ष्ण नैन-नक्श और **पतली कमर आदि।**
- एक प्रतिष्ठित चित्रकला दीपक राग को रात्रि के समय अपनी प्रियतमा के साथ एक कक्ष में पैठे हुए चित्रित किया गया है, जो चार दीपकों की ज्योति से प्रकाशवान है। जिनमें से दो दीपकों के आधार भाग-नूतन ढंग से अलंकृत मानव आकृतियों के रूप में चित्रित किए गए हैं। यह उस कलात्मक प्रक्रिया पर जोर देती है, जहाँ शिलालेखों की तुलना में चित्रकला को प्राथमिकता दी गई थी।
- **विषय और प्रभाव: केशवदास के लेखन** पर आधारित 12 महीनों का चित्रण 'बारामासा' बूँदी चित्रकला में एक लोकप्रिय विषय बना हुआ है।

कोटा चित्रकला शैली

- कोटा चित्रकला शैली का उदय बूँदी शैली की शानदार परंपरा से हुआ, जिसमें शिकार के जीवंत दृश्यों पर विशेष बल दिया गया।
- ऐतिहासिक दृष्टि से बूँदी और कोटा 1625 ई. तक एक ही राज्य थे।
- सम्राट जहाँगीर ने **मधुसिंह की वीरता की सराहना करते हुए** पुरस्कार स्वरूप कोटा को बूँदी से अलग कर दिया।
- **कोटा में चित्रकला की शुरुआत जगत सिंह (वर्ष 1658-1683)** के शासनकाल के दौरान 1660 ई. के आस-पास हुई।

शैलीगत विकास और विशिष्टता

- प्रारंभ में बूँदी और कोटा चित्रकला के बीच अंतर करना चुनौतीपूर्ण था, क्योंकि कोटा ने बूँदी की कलात्मकता से काफी कुछ उधार लिया था।
- हालाँकि, समय के साथ कोटा चित्रकला में, विशेष रूप से आकृतिगत और स्थापत्यात्मक चित्रण में, एक विशिष्ट गैर-अनुरूपता दिखाई दी।
- **रामसिंह प्रथम के शासनकाल (1686-1708 ई.)** तक कोटा चित्रकला में विषयों की विविधता में काफी विस्तार हो चुका था।
- कोटा के कलाकारों ने भूदृश्य-केंद्रित रचनाओं पर अधिक ध्यान दिया, जिसमें भूदृश्य को प्राथमिक विषय बनाया गया।

Search on TG: @apna_pdf

Join Telegram: @apna_library

चित्र 3.15: कोटा के महाराजा राम सिंह प्रथम, मुकुंदगढ़ में शेरों का शिकार करते हुए (1695 ई.)

प्रमुख प्रभाव

- **उमेद सिंह का शासनकाल (1770-1819 ई.)** विशेष रूप से उल्लेखनीय है। युवावस्था में ही राजसिंहासन पर बैठने के बाद, वे अपने शक्तिशाली राज्याधिकारी **जालिम सिंह के प्रभाव में मुख्य रूप से शिकार में लगे रहे।**
- वन्यजीवों और शिकार के प्रति उनका यह जुनून उनके काल के चित्रों में स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है, जो अक्सर उनके शिकार अभियानों के अभिलेख के रूप में काम आते हैं।
- यहाँ तक कि दरबार की महिलाएँ भी **शिकार-आधारित इन** सामाजिक अनुष्ठानों में सक्रिय रूप से भाग लेती थीं।

कोटा चित्रकला की प्रमुख विशेषताएँ

- चित्रण में सहजता, सुलेखन, विशिष्ट छायांकन तकनीक, विशेष रूप से दोहरे नयनपट में छाया अंकित करना, पशुओं और युद्ध के दृश्यों को चित्रित करने में निपुणता आदि।

बीकानेर चित्रकला शैली

- **राव बीका राठौर ने 1488 ई.** में एक प्रमुख राजस्थानी राज्य **बीकानेर की** स्थापना की।
- **अनूप सिंह के शासनकाल (1669-1698 ई.)** में बीकानेर में पांडुलिपियों और चित्रों से समृद्ध एक पुस्तकालय था।
- मुगलों के साथ लम्बे समय तक संबंध होने के कारण, बीकानेर की चित्रकला शैली में मुगल शैली का लालित्य और सौम्य रंग-शैली समाहित थी।

प्रभावशाली कलाकार और उनका योगदान

- शिलालेखों से प्राप्त साक्ष्यों से पता चलता है कि 17वीं शताब्दी के दौरान अनेक मुगल शिल्पकार यहाँ आए और उन्होंने बीकानेर की कला में योगदान दिया।
- दिल्ली के एक **उस्ताद अली रजा को करण सिंह ने नियुक्त किया था। उनकी कृतियाँ बीकानेर शैली** की शुरुआत का प्रतीक हैं, जो लगभग 1650 ई. में बनी थी।
- अनूप सिंह के शासन काल के मुख्य कलाकार **रुकनुद्दीन की शैली में** स्वदेशी, **दक्कनी और मुगल शैलियों का मिश्रण था।**
- **रामायण, रसिकप्रिया और दुर्गा सप्तशती** सहित महत्त्वपूर्ण ग्रंथों को चित्रित किया।
- उनकी कार्यशाला के अन्य उल्लेखनीय चित्रकारों में **इब्राहिम, नाथू, साहिबदीन और ईसा शामिल थे।**

चित्र 3.16: गायों से घिरे कृष्ण बाँसुरी बजाते हुए (बीकानेर, 1777 ई.)

बीकानेर चित्रकला शैली की विरासत

- बीकानेर चित्रकला शैली सबसे अच्छी तरह से प्रलेखित चित्रकला शैली में से एक है।
- **बही,** शाही डायरी, बीकानेर कलाकृतियों पर कई अभिलेखों के साथ इस शैली के इतिहास का एक समृद्ध रिकॉर्ड प्रस्तुत करते हैं।
- अभिलेख में मुख्य रूप से मारवाड़ी और कभी-कभी फ़ारसी में कलाकारों, तिथियों, निर्माण स्थलों तथा अवसरों का विवरण प्रदान किया गया है।

Search On TG: @apna_library.pdf

PW ONLYIAS BY PHYSICS WALLAH

Join Telegram: @apna_library

'मंडी' प्रणाली और कला पद्धतियाँ

- बीकानेर में चित्रशाला बनाने की प्रथा प्रचलित थी, जिन्हें **'मंडी'** कहा जाता था, जहाँ कलाकार एक मुख्य कलाकार के मार्गदर्शन में कार्य करते थे। रुकनुद्दीन, इब्राहिम और नाथू जैसे प्रसिद्ध कलाकार इनमें से कुछ व्यावसायिक चित्रशालाओं को संभालते थे।
- चित्र पूर्ण होने पर मुख्य कलाकार का विवरण और तारीख कलाकृति पर अंकित की जाती थी। अक्सर मुख्य कलाकार का नाम उसके शिष्यों के कार्यों पर अंकित किया जाता था, जिसका अर्थ था कि मुख्य कलाकार ने अंतिम रूप दिया होगा। इस प्रक्रिया को **'गुदराई' या 'ऊपर उठाना' (लिफ्ट) कहा जाता था।**
- चित्रशालाओं में पुरानी कलाकृतियों की **'मरम्मत'** भी की जाती थी और उनकी **'नकल' (प्रतियाँ)** भी बनाई जाती थीं।

चित्रकार और तिथि: बीकानेर दरबार के एक कलाकार नूरुद्दीन द्वारा **1683** ई. में बनाया गया।

- **रचना:** चित्र दो भागों में विभाजित है:
  - **ऊपरी हिस्सा:** कृष्ण एक गोपी के साथ उसके घर के अंदर झूला झूलते हुए।
  - **निचला हिस्सा:** एक पेड़ के नीचे उदास राधा, उसके बाद पश्चाताप में डूबे कृष्ण।
- **कथा:** राधा को पता चलता है कि कृष्ण एक गोपी के साथ आनंद ले रहे हैं और वह दुःखी हो जाती हैं। उनकी सहेली बिछड़े हुए प्रेमियों के बीच मध्यस्थता करने का प्रयास करती है।
  - **स्थान:** यह चित्र नई दिल्ली के राष्ट्रीय संग्रहालय में प्रदर्शित है।

चित्र 3.17: झूले पर कृष्ण एवं उदास राधा

बीकानेर शैली की विशेषताएँ

- बीकानेर की एक अनूठी प्रथा थी- कलाकारों के चित्र बनाना, जिनमें अक्सर उनकी वंशावली का विवरण देने वाले शिलालेख भी होते थे। ऐसे कलाकारों को **'उस्तास'** या **'उस्ताद' की उपाधि दी जाती थी।**
- **रुकनुद्दीन की** कृतियाँ अपने कोमल रंगों के लिए उल्लेखनीय थीं।
- **इब्राहिम की** कृतियाँ स्वप्निल आभा लिए हुए थीं, जिनमें चेहरे सुंदरता के साथ सुडौल हैं।
- इब्राहिम की चित्रशाला बहुत उन्नत प्रतीत होती है, जिसमें **बारहमासा, रागमाला और रसिकप्रिया जैसे विभिन्न संग्रह थे।**

किशनगढ़ चित्रकला शैली

- किशनगढ़ चित्रकला सर्वाधिक शैलीगत राजस्थानी लघु चित्रकारियों में से एक है।
- इस शैली के चित्र अपनी उत्कृष्ट बनावट, धनुषाकार भौंहों से बने चेहरे, कमल की पंखुड़ी के समान गुलाबी रंग की आँखें, झुकी हुई पलकें, सुगठित नुकीली नाक, पतले होंठ जैसी शैलीकृत विशेषताओं से अपनी विशिष्ट पहचान बनाते हैं।

ऐतिहासिक उत्पत्ति और विकास

- **किशन सिंह ने 1609 में जोधपुर** रियासत से अलग होकर किशनगढ़ की स्थापना की।
- सत्रहवीं शताब्दी के मध्य तक, **मान सिंह के** संरक्षण में (1658-1706 ई.) किशनगढ़ दरबार में एक विशिष्ट कलात्मक शैली विकसित हुई।
- इस शैली की विशेषता थी- लम्बी मानव आकृतियाँ, हरे रंग के प्रति लगाव, मनोरम दृश्य चित्रों को प्राथमिकता आदि।

मुख्य विशेषताएँ

- बणी-ठणी एक गायिका थी, जो अपनी अद्वितीय सुंदरता और शिष्टता के लिए जानी जाती थी।
- वह राज सिंह की पत्नी की परिचारिका थी और एक अत्यंत प्रभावशाली कवयित्री, गायिका और नर्तकी थी।
- सावंत सिंह, जिन्होंने नागरी दास के रूप में कविताएँ लिखी, बणी-ठणी से बहुत प्रभावित थे। उन्होंने राधा और कृष्ण के प्रेम प्रसंग पर कविताएँ लिखीं।
- आखिरकार उन्होंने **1757** ई. में राजगद्दी छोड़ दी और बणी-ठणी के साथ वृंदावन चले गए।

चित्र 3.18: बणी-ठणी

कलात्मक चित्रण

- बणी-ठणी के अतिरंजित चेहरे की विशेषताओं ने एक अनूठी किशनगढ़ चित्रकला शैली को प्रेरित किया।
- कलाकार निहाल चंद को इस शैली को बनाने का श्रेय दिया जाता है, जो अक्सर सावंत सिंह और बणी-ठणी को कृष्ण और राधा के रूप में चित्रित करते हैं।
- बणी-ठणी के चित्रण की मुख्य विशेषताएँ- घुमावदार आँखें, तीखी भौहें, नुकीली नाक, पतले होंठ, गालों पर सर्पिल लहरदार केश आदि हैं।
- राधा के रूप में बणी-ठणी की प्रतिष्ठित पेंटिंग नई दिल्ली के राष्ट्रीय संग्रहालय में रखी गई है।

Search On TG: @apna_pdf

Join Telegram: @apna_library

धार्मिक प्रभाव

- **राज सिंह (1706-1748 ई.) की वल्लभाचार्य के पुष्टिमार्गीय** पंथ में दीक्षा ने **कृष्ण लीला विषयों को किशनगढ़ कला** का प्राथमिक केंद्र बनने का मार्ग प्रशस्त किया।
- विशेषकर **राधा और कृष्ण के दिव्य प्रेम पर केन्द्रित** ये विषय किशनगढ़ के शासकों के लिए अत्यंत पसंदीदा विषय बन गए।

प्रमुख कलाकार और उनके योगदान

चित्र 3.19: एक मंडप में कृष्ण और राधा, निहाल चंद (किशनगढ़, 1750 ई.)

- **निहाल चंद** सबसे प्रसिद्ध कलाकार हैं, जिन्होंने **1735 से 1757 ई. के बीच मुख्य रूप से सावंत सिंह के लिए कार्य किया।**
- **निहाल चंद की** रचनाएँ सावंत सिंह की कविताओं पर केंद्रित थीं, जिनमें अधिकांशतः राधा और कृष्ण को दिव्य युगल के रूप में दर्शाया जाता था। इन चित्रों में निम्नलिखित को दर्शाया गया है:
  - प्रेमी युगल दरबारी पृष्ठभूमि में हैं।
  - एक विशाल, विस्तृत मनोरम परिदृश्य में आकृतियाँ तुलना में छोटी प्रतीत होती हैं।
  - सुस्पष्ट रंगों का जीवंत उपयोग किया गया है।

जोधपुर चित्रकला शैली

- सोलहवीं शताब्दी से मुगल प्रभाव चित्रकला और दरबारी दृश्य चित्रों आदि पर नजर आता है। हालाँकि जोधपुर की स्वदेशी लोक शैली ने इस प्रभाव का प्रतिरोध किया तथा अधिकांश संगृहीत चित्रों में प्रचलित रही।
- रागमाला पाली में चित्रित एक आरंभिक चित्र संग्रह है, जो कलाकार **वीरजी** द्वारा 1623 ई. में चित्रित किया गया था।

प्रमुख शासकों के अधीन विकास (H3)

- **महाराजा जसवंत सिंह (1638-1678 ई.)**
  - उन्होंने सत्रहवीं शताब्दी के मध्य में चित्रकला के एक समृद्ध युग की शुरुआत की।
  - दस्तावेजी चित्रों की प्रथा का चलन शुरू हुआ, जो 19वीं शताब्दी में छायाचित्रण (फोटोग्राफी) के आगमन तक जारी रही।
  - **श्रीनाथजी के वल्लभ पंथ** के प्रति व्यक्तिगत झुकाव होने के कारण उन्होंने कृष्ण से संबंधित विषयों को भागवत पुराण के साथ विशिष्ट रूप से संरक्षित किया।
- **अजीत सिंह (1679-1724 ई.)**
  - वह महान योद्धा **वीर दुर्गादास राठौर के नेतृत्व में औरंगज़ेब के विरुद्ध 25 वर्षों तक चले युद्ध के बाद सिंहासन पर बैठे।**
  - दुर्गादास की वीरतापूर्ण उपलब्धियों का कविताओं और दरबारी चित्रों में वर्णन किया गया तथा उनकी घुड़सवारी के चित्र भी लोकप्रिय हुए।

चित्र 3.20: ढोला और मारू (जोधपुर, 1810 ई.)

Search On TG @apna_pdf

ONLYIAS BY PHYSICS WALLAH

Join Telegram: @apna_library

- **मान सिंह (1803–1843 ई.)**
  - इस अवधि की उल्लेखनीय कृतियाँ- **रामायण (1804), ढोला-मारू, पंचतंत्र (1804) और शिव पुराण हैं।**
  - रामायण चित्रकला विशेष रूप से रोचक है क्योंकि इसमें कलाकार ने जोधपुर को राम की अयोध्या के रूप में प्रस्तुत किया गया है तथा इससे शहर की वास्तुकला, बाज़ारों और उस समय के सांस्कृतिक जीवन की सूचनाएँ मिलती है।
  - मान सिंह **नाथ संप्रदाय** के अनुयायी थे और उनकी चित्रकला में **नाथ गुरुओं** के साथ चित्र मिलते हैं। **नाथ चरित (1824 ई.)** के एक समुच्चय को भी चित्रित किया गया था।
  - **उत्कीर्ण-लेख:** मारवाड़ चित्रों पर उत्कीर्ण-लेख आमतौर पर उन्नीसवीं सदी तक सीमित थे, जिनमें कभी-कभी तारीखें, कलाकार के नाम या चित्रों के स्थान का उल्लेख होता था।

- इस चित्र में एक राजकुमारी को अपने साथियों के साथ पोलो (चौगान) खेलते हुए दिखाया गया है।
- **कलाकार**:
  - कलाकार **दाना** द्वारा तैयार किया गया यह चित्र मान सिंह के शासनकाल की जोधपुर चित्रकला शैली को दर्शाता है।
- इस चित्र में विभिन्न कलात्मक परंपराओं का संगम है:
  - **मुगल प्रभाव:** महिलाओं के चित्रण से स्पष्ट।
  - **दक्कनी प्रभाव:** घोड़ों के चित्रण में स्पष्ट।
  - **बूँदी और किशनगढ़ प्रभाव:** पात्रों के चेहरे की विशेषताओं में स्पष्ट।
  - **स्वदेशी तत्त्व:** सपाट हरे रंग की पृष्ठभूमि अलंकृत सतहों के लिए स्थानीय आकर्षण को उजागर करती है।
- **अभिलेख और तिथि:**
  - चित्र के ऊपरी हिस्से में एक पंक्ति लिखी है "घोड़े पर सवार युवतियों का खेल।"
  - यह चित्र **1810** ई. में बनाया गया था और राष्ट्रीय संग्रहालय, नई दिल्ली में संगृहीत है।

चित्र 3.21: चौगान खेलती राजकुमारियाँ

जयपुर चित्रकला शैली

- जयपुर चित्रकला शैली की **शुरुआत आमेर में हुई**, जो मुगल राजधानियों आगरा और दिल्ली के निकट था।

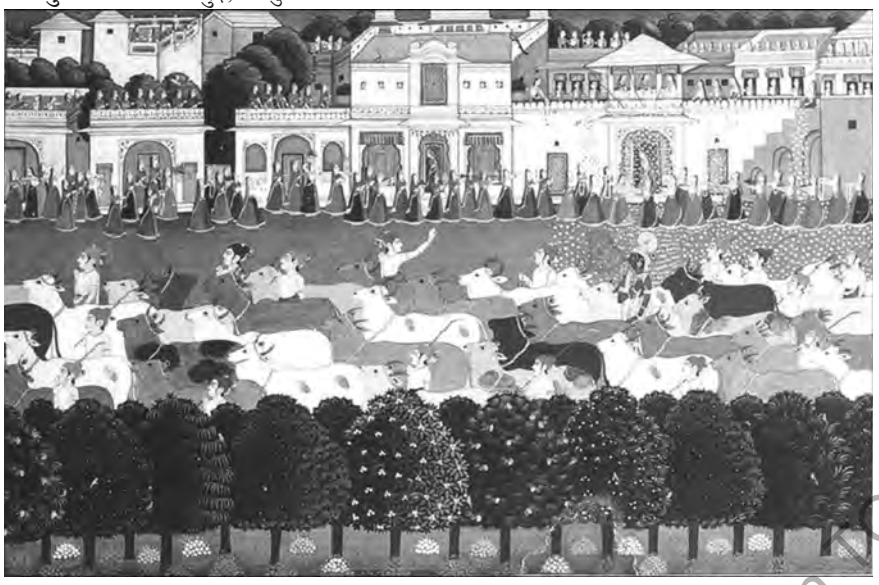

चित्र 3.22: गोधूलि की बेला (जयपुर, 1780 ई.)

- मुगल बादशाहों के साथ निकटता और सौहार्दपूर्ण संबंधों के कारण आमेर में मुगल सौंदर्यबोध का गहरा प्रभाव देखने को मिला। जैसे- राजा भारमल ने अपनी बेटी का विवाह अकबर से किया और उनके बेटे भगवंत दास अकबर के घनिष्ठ मित्र थे, साथ ही भगवंत दास के बेटे मान सिंह अकबर के भरोसेमंद सेनापति थे आदि।

Search On TG: @apna_pdf

Join Telegram: @apna_library

प्रमुख शासकों के अधीन विकास

- **सवाई जय सिंह (1699–1743 ई.)**
  - उन्होंने 1727 ई. में एक नई राजधानी जयपुर की स्थापना की और आमेर से स्थानांतरित हो गए। उनके शासनकाल में जयपुर चित्रकला शैली संपन्न हुई तथा उसकी एक अलग पहचान बनी।
  - उन्होंने दिल्ली से मुगल चित्रकारों को यहाँ बुलाया। उन्होंने **सूरतखाना का पुनर्गठन किया**, जो चित्र बनाने और उन्हें संगृहीत करने का स्थान था।
  - राधा और कृष्ण के विषयों पर अनेक चित्रों का निर्माण करवाया। **रसिकप्रिया, गीत गोविंद, बारहमासा और रागमाला पर आधारित चित्रों के संग्रह** लोकप्रिय थे, जिनमें अक्सर राजा को नायक के रूप में दर्शाया जाता था।
  - साहिबराम और मुहम्मद शाह जैसे उल्लेखनीय चित्रकारों के कारण चित्रकला का विकास हुआ।
- **सवाई ईश्वरी सिंह (1743-1750 ई.):** कलाओं का संरक्षण जारी रखा। शिकार और हाथी की सवारी जैसे अवकाश के क्षणों को भी चित्रित करवाया।
- **सवाई माधो सिंह (1750-1767 ई.):** दरबारी जीवन की घटनाओं को चित्रित कराने पर ध्यान केंद्रित किया।
- **सवाई प्रताप सिंह (1779-1803 ई.)**
  - इनके शासनकाल तक मुगलों का प्रभाव खत्म होने लगा था। उन्होंने मुगल और स्वदेशी सौंदर्यबोध का मिश्रण करते हुए एक अनूठी जयपुर शैली की शुरुआत की।
  - लगभग 50 कलाकारों को नियुक्त किया। एक विद्वान, कवि और कृष्ण भक्त होने के नाते, उन्होंने विभिन्न साहित्यिक और धार्मिक विषयों पर चित्रण करवाया।

मुख्य विशेषताएँ

- 1740 से 1750 के बीच चित्रित यह कलाकृति रामायण की कथा को निरंतरता को चित्रित करने का एक उत्कृष्ट उदाहरण है।
- पहाड़ियों की तलहटी में जंगल में साधारण झोपड़ियों (पर्ण कुटीर) के साथ एक ग्रामीण परिवेश को दर्शाया गया है। कथा बाएँ से दाएँ की ओर चलती है।
- प्रत्येक पात्र को अंकित किया गया है।
- एक उत्कीर्ण छंद कहानी का वर्णन करता है।
- यह चित्र राष्ट्रीय संग्रहालय, नई दिल्ली में संगृहीत है।

चित्र 3.23: चित्रकूट में राम और उनके परिवार का मिलन

चित्रित कहानी

- दशरथ की मृत्यु के बाद भरत, राम को वापस लौटने के लिए मनाने हेतु वनवास में उनसे मिलने जाते हैं।
- तीनों माताएँ और राजकुमारों की पत्नियाँ राम, लक्ष्मण और सीता के पास जाती हैं।
- राम और उनकी माताओं, विशेष रूप से कौशल्या के बीच भावनात्मक क्षण।
- दशरथ की मृत्यु के बारे में सुनकर राम को गहरा दुःख।
- माताओं, सीता और ऋषियों के बीच वार्ता।

जोधपुर चित्रकला शैली की विशेषताएँ

- 18वीं शताब्दी में कई चित्रों का पुनरुत्पादन ट्रेसिंग और पाउंसिंग विधियों का उपयोग करके किया गया था।
- 19वीं शताब्दी के प्रारंभ तक चित्रों में सोने की धातु का व्यापक उपयोग होने लगा था।
- जयपुर चित्रकला शैली में बड़े प्रारूप वाले चित्रों की प्राथमिकता थी, यहाँ तक कि इस शैली के अंतर्गत आदमकद चित्र भी बनाए गए।

मुगलकालीन लघु चित्रकला शैली

- यह लघु चित्रकला की एक शैली है, जो सोलहवीं और उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य उत्तर भारतीय उपमहाद्वीप में पैदा हुई।
- यह चित्रकला अपनी परिष्कृत तकनीकों और विविध विषयों के लिए जानी जाती है तथा अन्य भारतीय चित्रकला शैलियों से प्रभावित है और उनमें प्रतिध्वनित होती है।
- शैलियों और विषयों के अपने समृद्ध समामेलन के कारण भारतीय चित्रकला शैली में इसका एक विशिष्ट स्थान है।

Search On TG: @apna_pdf

PW ONLYIAS BY PHYSICS WALLAH

Join Telegram: @apna_library

- मुगल विभिन्न कलारूपों के संरक्षक थे। प्रत्येक मुगल शासक ने सुलेखन, चित्रकला, वास्तुकला और किताब बनाने जैसी कलाओं को बढ़ावा देते हुए अद्वितीय योगदान दिया।
- मुगलकालीन चित्रकला को पूरी तरह से समझने के लिए मुगल वंश के राजनीतिक इतिहास और वंशावली पर विचार करना होगा।

मुगल चित्रशाला

मुगल चित्रशाला में सुलेखक, चित्रकार, मुलमची और जिल्दसाज़ होते थे। चित्रों में बादशाहों के जीवन की महत्त्वपूर्ण घटनाओं, व्यक्तित्वों और रुचियों को दर्ज तथा प्रलेखित किया गया था। ये चित्र केवल शाही परिवार के सदस्यों के देखने के लिए होते थे, जिन्हें प्रायः शाही व्यक्तियों की बौद्धिक व मानसिक संवेदनशीलता के अनुकूल चित्रित किया जाता था। ये चित्र पांडुलिपियों और एल्बमों का भाग होते थे।

मुगल चित्रकला पर प्रभाव

- मुगल काल की कला विदेशी और स्थानीय प्रभावों के संलयन को दर्शाती हैं, **जैसे- स्वदेशी, फारसी और यूरोपीय शैलियों का** मिश्रण।
- मुगल चित्रकला के चरम युग में इस्लामी, हिंदू और यूरोपीय सौंदर्यशास्त्र का मिश्रण देखने को मिला। मिश्रित शैली वाले चित्रों को देखते हुए उस काल में निर्मित कलाकृतियों का यह समृद्ध खजाना पहले से चली आ रही उस काल की पारंपरिक मूल भारतीय व ईरानी शैली से काफी अधिक विकसित था।
- मुगल दरबारों ने कार्यशालाओं और ईरानी कलाकारों के साथ कला को औपचारिक रूप दिया, जिससे भारतीय और ईरानी शैलियों का मिश्रण हुआ। भारतीय और ईरानी कलाकारों के सहयोग के कारण मुगल कला का विकास हुआ।

क्या आप जानते हैं?

- भारत में प्राक्-मुगल शैली व उसके सामांतर देशीय चित्रकला शैलियों की अपनी विशिष्टताएँ थीं, जिसमें उनका सौंदर्यबोध और उद्देश्य निहित था।
- भारतीय चित्रकला शैली का मूल परिदृश्य सशक्त रेखांकन, बहुरंगी रंगयोजना, आकृति व वास्तु के स्पष्ट प्रतिरूपण पर बल देना था, जबकि मुगल शैली सूक्ष्म तकनीक, आकृतियों के त्रिआयामी चित्रण से निर्मित यथार्थवादी चित्रण पर केंद्रित थी।
- शाही दरबार के दृश्य, शाही व्यक्तियों के छवि चित्रण, पेड़-पौधों, जीव-जंतु का यथार्थवादी चित्रण मुगल चित्रकारों की मुख्य विषयवस्तु थी। इस प्रकार भारत में उस समय मुगल चित्रकला शैली एक नूतन परिष्कृत शैली के रूप में उभरी।

ऐतिहासिक परिदृश्य

- भारत में कला की परंपरा की जड़ें बहुत गहरी हैं। मुगल शैली भारत और फारस में पहले से मौजूद कई चित्रकला शैलियों के आपसी मिश्रण का परिणाम थी।
- मुगल चित्रकला शैली का विकास एकाएक नहीं हुआ, बल्कि यह उस समय मौजूद विभिन्न कला रूपों तथा शैलियों से प्रभावित थी। मूल भारतीय और मुगल चित्रकला शैलियाँ एक साथ विद्यमान थीं। दोनों ही चित्रकला शैलियों ने एक-दूसरे को प्रभावित किया और एक साथ घुल-मिल गईं।
- मुगल संरक्षकों ने अपनी विशिष्ट कलात्मक वरीयताओं और संवेदनशीलता के साथ मुगल चित्रकला शैली के प्रसार में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई।

विचारणीय बिंदु

लघु चित्रकला की मुगल शैली, विभिन्न कलात्मक प्रभावों और सांस्कृतिक पृष्ठभूमि के अपने मिश्रण के साथ मुगल वंश के व्यापक ऐतिहासिक और राजनीतिक संदर्भ को दर्शाती है। आपके विचार से इस विशिष्ट चित्रकला शैली के विकास में मुगल संरक्षकों और भारतीय एवं ईरानी कलाकारों के सहयोग की क्या भूमिका है?

बाबर

- **भारत में आगमन:** 1526 ई. में वर्तमान उज्बेकिस्तान से आए बाबर ने भारत में फारसी और मध्य एशिया की संस्कृति तथा सौंदर्यबोध का मिश्रण किया।
- **बहुमुखी संरक्षण:** बाबर ने अपनी सैन्य विजयों के अलावा कला के प्रति भी गहरी रुचि दिखाई, चाहे वह वास्तुकला, बागवानी, पांडुलिपि निर्माण या चित्रकला हो।
- **बाबरनामा की विषयवस्तु:** उसकी आत्मकथा **"बाबरनामा"** बादशाह की राजनीतिक गतिविधियों और कलात्मक रुचियों का विस्तृत विवरण है।
- **प्रमुख चित्रकार और उनकी विशेषताएँ: बिहज़ाद** जैसे कलाकार, जो अपनी परिष्कृत रचनाओं के लिए जाने जाते थे और **शाह मुज़फ़्फ़र** जो केशसज्जा के चित्रण के लिए जाने जाते थे, का उल्लेख बाबर के संस्मरणों में उल्लेखनीय रूप से मिलता है।

चित्र 3.24: मेडोना एंड चाइल्ड (बसावन, 1590 ई.)

Search On TG: @apna_pdf

Join Telegram: @apna_library

हुमायूँ

- **निर्वासन और प्रभाव:** राजनीतिक असफलताओं का सामना करने के बाद **सफ़ाविद फ़ारसी** दरबार में हुमायूँ के प्रवास ने उसकी कलात्मक दृष्टि को समृद्ध किया।
- **फ़ारसी कलाकारों का समावेशन:** वह सफ़ाविद कलाकार परंपराओं से आश्चर्य चकित था, इसलिए उसने मुगल कला परिदृश्य को बढ़ावा देने के लिए **मीर सैय्यद अली और अब्द-उस-समद जैसे** कुशल कलाकारों को आमंत्रित किया।
- **आधारशिला:** उसने **निगार खाना** नामक एक चित्रकला कार्यशाला की आधारशिला रखी और **'हम्जानामा' नामक** परियोजना की शुरुआत की, जो हम्जा के वीरतापूर्ण कार्यों का चित्रित ग्रंथ है।

अकबर

- **सांस्कृतिक एकीकरण:** अकबर का शासनकाल विभिन्न सांस्कृतिक तत्त्वों को एकीकृत करने के प्रयासों से भरपूर है।
- **स्मारकीय परियोजनाएँ:** उसने प्रतिष्ठित संस्कृत ग्रंथों, विशेष रूप से **महाभारत (जिसे रज्मनामा कहा जाता है) तथा रामायण के फारसी अनुवाद और चित्रण का कार्य करवाया।**
- **यूरोपीय प्रभाव:** विशेष रूप से अंग्रेजी राज के साथ संपर्क के बाद मुगल चित्रकला में यूरोपीय प्रभाव प्रतिबिम्बित होने लगा।
- **विविध विषय:** अकबर के काल में शाही दरबार के दृश्यों से लेकर हिंदू पौराणिक कथाओं और फारसी कहानियों के जटिल चित्रण तक की चित्रकला देखने को मिली।

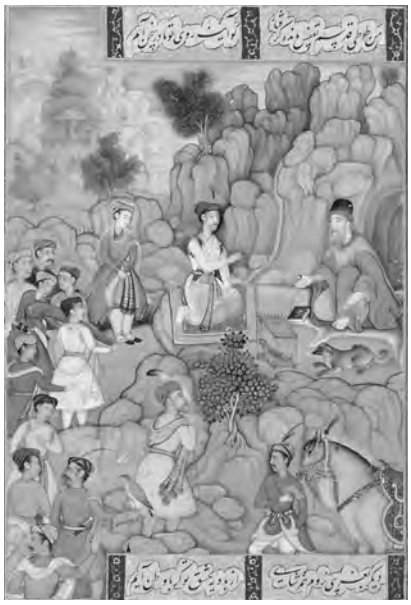

चित्र 3.25: एक राजकुमार और एक साधु, अमीर शाही के दीवान से जिल्द के पन्ने (1595 ई.)

- 1590 ई. में चित्रित पांडुलिपि "नोआस् आर्क" दीवान-ए-हाफ़िज का एक उत्कृष्ट चित्र है। इस कलाकृति का श्रेय बादशाह अकबर की शाही चित्रशाला के एक अग्रणी कलाकार मिस्किन को दिया जाता है।
- चित्र में एक मंद रंग योजना को दिखाया गया है, जिसमें मुख्य रूप से लाल, नीले और पीले रंग के सूक्ष्म रंगों के साथ शुद्ध सफेद रंग का उपयोग किया गया है।
- चित्र में जल का चित्रण उल्लेखनीय रूप से विश्वसनीय है। इसमें एक ऊर्ध्वाधर परिप्रेक्ष्य का उपयोग किया गया है, जो दृश्य में नाटकीय रूप उत्पन्न करता है।
- पैगंबर नूह जहाज में हैं और उनके साथ कई पशुओं के जोड़े हैं, जिससे ईश्वर द्वारा मनुष्यों के गुनाहों की सजा देने के लिए भेजी गई बाढ़ से पैदा हुई तबाही के बाद संसार पुनः निर्मित हो सके।
- इस चित्र में इब्लीस को नूह के बेटे जहाज से बाहर फेंक रहे हैं, जो कि जहाज को तबाह करने आया था।
- यह उत्कृष्ट कृति फ्रीयर गैलरी ऑफ आर्ट, स्मिथसोनियन इंस्टीट्यूशन, वाशिंगटन डी. सी., यूएसए में रखी गई है।

चित्र 3.26: नोआस् आर्क

जहाँगीर

- **सौंदर्यात्मक परिवर्तन:** जहाँगीर ने कलात्मक ध्यान को जटिल विवरण और **प्रकृतिवाद की ओर स्थानांतरित कर दिया।**
- **चित्रकार और उनकी निपुणता: उसने अका रिज़ा, अबुल हसन और बाद में बिचित्र** जैसे प्रतिष्ठित चित्रकारों को नियुक्त किया, जिनमें से प्रत्येक अपनी अनूठी चित्रकला शैली को दरबार में लेकर आए।
- **यूरोपीय प्रभाव:** ईसाई विषयों और यूरोपीय तत्त्वों से प्रभावित चित्र व्यापक रूप से चर्चित हुए। **"जहाँगीर का सपना" जैसी प्रतिष्ठित कृतियाँ** यूरोपीय कला रूपांकनों के साथ राजनीतिक कल्पनाओं को दर्शाती हैं।
- **मुरक्का:** जहाँगीर ने व्यक्तियों के चित्रों के एल्बम बनाने की प्रवृत्ति को लोकप्रिय बनाया, जो अत्यधिक चमकदार होते थे।

चित्र 3.27: जहाँगीर का सपना, अबुल हसन (1618-1622 ई.)

Search On Tg @apna_pdf

PW ONLYIAS BY PHYSICS WALLAH

Join Telegram: @apna_library

ज़ेबरा

चित्र 3.28: ज़ेबरा

- इस चित्र में तुर्कों द्वारा इथियोपिया से लाया गया ज़ेबरा दिखाया गया है। यह ज़ेबरा मुगल सम्राट जहाँगीर को उनके रईस **मीर जाफ़र** ने भेंट किया था।
- जहाँगीर ने इस चित्र पर राज दरबार की भाषा फ़ारसी में लिखा था, कि "यह एक खच्चर है जिसे तुर्क (रुमियाँ) मीर जाफ़र के साथ इथियोपिया (हबेशा) से लाए थे।" यह चित्र **नादिर-उल-अस्र (अपने समय के प्रतिष्ठित व्यक्ति) उस्ताद मंसूर** द्वारा बनाया गया था। **जहाँगीरनामा** में स्पष्ट कहा गया है कि यह जानवर नवरोज़ या नए साल के उत्सव में, मार्च 1621 में, राजा को भेंट किया गया।
- यह भी कहा गया है कि जहाँगीर ने उसे गौर से जाँचा क्योंकि कुछ का मानना था कि यह एक घोड़ा है जिस पर किसी ने धारिया रंग दी हैं। जहाँगीर ने इसे ईरान के शाह अब्बास को भेजने का निर्णय किया, जिसके साथ वह पशुओं और पक्षियों समेत कई दुर्लभ और विशेष उपहारों का आदान-प्रदान किया करता था।
- ईरान का शाह भी बाज़ जैसे दुर्लभ उपहार जहाँगीर को भिजवाता था। बाद में इसे शाही एल्बम में जोड़ दिया गया। चित्र के किनारे पर अलंकरण शाहजहाँ के शासन काल में किया गया।

शाहजहाँ

- **कलात्मक दर्शन:** शाहजहाँ के शासनकाल में मुगल कला में राजसीय सौंदर्य पर बल दिया गया।
- **पादशाहनामा:** शाहजहाँ के शासनकाल की यह महान कृति भारतीय लघु चित्रकला के गौरवशाली काल का प्रमाण है, जिसमें राजसीय और ऐतिहासिक विषयों को दर्शाया गया है।
- **यूरोपीय प्रेरणा:** शाहजहाँ के अधीन मुगल चित्रकला शैली ने यूरोपीय कलाकारों को प्रेरित करना शुरू कर दिया था। प्रसिद्ध यूरोपीय चित्रकार **रेम्ब्रां** मुगल कला का उल्लेखनीय प्रशंसक था।

दारा शिकोह

- **मुख्य विशेषता:** दारा शिकोह **सूफी रहस्यवाद और वेदाँतिक विचारों** में गहरी आस्था रखने वाला राजकुमार था। दारा द्वारा कला का संरक्षण उसकी विविध बौद्धिक गतिविधियों को दर्शाता है।
- **प्रमुख कलाकृतियाँ:** "दारा शिकोह विद सेजेज इन गार्डेन" (बगीचे में साधुओं के साथ दारा शिकोह) चित्र ने उसके व्यक्तित्व को अमर कर दिया।

चित्र 3.29: बगीचे में साधुओं के साथ दारा शिकोह, बिचित्र (आरंभिक सत्रहवीं शताब्दी)

दारा शिकोह की बारात

- यह चित्र कलाकार "हाजी मदनी" द्वारा बनाया गया था। चित्र शाहजहाँ के काल का है, जिसने आगरा में ताजमहल बनवाया था। यह चित्र मुगल बादशाह शाहजहाँ के सबसे बड़े पुत्र दारा शिकोह के विवाह को दर्शाता है।
- चित्र में मुगल राजकुमार पारंपरिक सेहरे के साथ भूरे रंग के घोड़े पर बैठा है और उसके साथ उसके पिता शाहजहाँ (जिसके सर के चारों तरफ एक चमकता प्रभामंडल है) सफ़ेद घोड़े पर सवार है।
- बारात का स्वागत संगीत, नृत्य, उपहार और आतिशबाजी के साथ किया गया है। कलाकार ने बारात का बहुत ही सजीव चित्रण किया है। यह चित्र राष्ट्रीय संग्रहालय, नई दिल्ली में संगृहीत है।

चित्र 3.30: दारा शिकोह की बारात

औरंगज़ेब

- **केंद्रीय विषय:** औरंगज़ेब की प्राथमिक रुचि राजनीतिक और सैन्य विजय में थी, फिर भी मुगल कला की लौ जलती रही। उसका ध्यान मुगल साम्राज्य के विस्तार और अपने नेतृत्व में एकीकरण पर था। औरंगज़ेब ने मुगल चित्रशाला में चित्रों को निर्मित करने के काम को आगे नहीं बढ़ाया।
- **कलात्मक निरंतरता:** चित्रकला पर अधिक ध्यान न दिए जाने के बावजूद, शाही कार्यशाला ने मुगलों की विरासत को प्रतिबिंबित करते हुए उत्कृष्ट कलाकृतियाँ बनाना जारी रखा।

Search on TG: @apna_pdf

Join Telegram: @apna_library

उत्तरकालीन मुगल चित्रकला

चित्र 3.31: बहादुर शाह जफर (1838 ई.)

❑ शाही संरक्षण में गिरावट

- **कलाकारों का पलायन:** जब मध्य मुगल साम्राज्य में कला के प्रति उत्साहपूर्ण समर्थन कम हो गया, तो कुशल कलाकारों ने प्रांतीय दरबारों में शरण ली।
- **प्रांतीय अनुकरण:** इन प्रांतीय मुगल शासकों ने केंद्रीय मुगल दरबार की भव्यता से प्रेरित होकर अपने राजवंश के वैभव को चित्रों के माध्यम से दर्शाने का लक्ष्य रखा।

❑ उत्तरकालीन बादशाहों का योगदान

- **प्रमुख संरक्षक:** पतन के बावजूद **मुहम्मद शाह रंगीला, शाह आलम द्वितीय और बहादुर शाह जफर जैसे बादशाहों ने** कला को समर्थन देना जारी रखा, यद्यपि उतनी प्रबलता के साथ नहीं।
- **बहादुर शाह ज़फर का महत्त्व:** 1838 ई. का बहादुर शाह ज़फर का एक चित्र बहुत ही विशिष्ट है, जिसमें उसे न केवल अंतिम मुगल बादशाह के रूप में बल्कि एक प्रतिष्ठित कवि, विद्वान और कला प्रेमी के रूप में भी दर्शाया गया है। 1857 के भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के बाद अंग्रेजों द्वारा बर्मा में उनका निर्वासन मुगल काल के अंत का प्रतीक था।

❑ बदलते राजनीतिक परिदृश्य में कलात्मक विकास

- **कलात्मक प्रतिमान में बदलाव:** अंग्रेजी प्रभुत्व के बढ़ते खतरे और क्षेत्रीय राज्यों में राजनीतिक अशांति ने भारत के कलात्मक परिवेश को नया रूप दिया।
- **नए संरक्षकों के अनुरूप परिवर्तन:** कलाकारों ने अपने कार्यों को नए संरक्षकों और उनकी प्राथमिकताओं के अनुरूप ढाला, जिससे वे विषयवस्तु और दृश्य सौंदर्य के बदलते परिदृश्य के अनुरूप परिवर्तित हो गए।
- **अन्य शैलियों के साथ विलय:** एक समय में प्रमुख मुगल लघु चित्रकला शैली अन्य प्रचलित शैलियों के साथ विलीन होने लगी, जिसके परिणामस्वरूप अंततः प्रांतीय और कंपनी कला शैली का उदय हुआ।

गोवर्धन पर्वत को उठाते हुए कृष्ण

चित्र 3.32: गोवर्धन पर्वत को उठाते हुए कृष्ण

- ऐसा बताया जाता है कि हरिवंश पुराण के इस चित्र के अलग-अलग पृष्ठ विभिन्न संग्रहालयों में हैं। इसे मिस्किन (**1585-90** ई.) द्वारा बनाया गया था। यह चित्र मेट्रोपोलिटन म्यूजियम ऑफ आर्ट, न्यूयॉर्क, संयुक्त राज्य अमेरिका में संगृहीत है।
- हरिवंश पुराण उन कई संस्कृत पांडुलिपियों में से एक है, जिसका मुगलों ने फ़ारसी भाषा में अनुवाद कराया था। भगवान कृष्ण पर आधारित इस ग्रंथ के फारसी भाषा में अनुवाद की जिम्मेदारी अकबर के दरबार के एक कुलीन विद्वान बदायूँनी को सौंपी गई थी।
- यह जानना दिलचस्प होगा कि अकबर के दरबार में एक और प्रसिद्ध विद्वान अबुल फजल के विपरीत बदायूँनी अपने कट्टर धार्मिक विचारों के लिए जाना जाता था।
- हरि या भगवान कृष्ण ने गोवर्धन पर्वत को अपने सभी अनुयायियों (ग्रामीणों और उनके पशुओं) को एक अन्य शक्तिशाली भगवान, इंद्र, द्वारा भेजी गई मुसलाधार बारिश से बचाने के लिए उठाया था। हरि उस पर्वत को एक विशाल छतरी की तरह उपयोग करते हैं ताकि पूरा गाँव उसके नीचे शरण ले सके।

पक्षी-विश्राम पर बाज

चित्र 3.33: पक्षी-विश्राम पर बाज

- यह चित्र उस्ताद मंसूर द्वारा बनाया गया है, जिसे जहाँगीर ने नादिर-उल-अस्र की उपाधि से नवाज़ा था। जहाँगीर के पास कई बेहतरीन बाज थे और एक उत्साही पारखी की तरह उसने उनका चित्रण कराया।
- यह चित्र संयुक्त राष्ट्र अमेरिका में ओहायो के क्लीवलैंड संग्रहालय में संगृहीत है। इन छवियों को उसकी अधिकारिक जीवनी जहाँगीरनामा में शामिल किया गया।
- फ़ारसी सम्राट शाह अब्बास द्वारा भेंट किए गए एक बाज़ का दिलचस्प संस्मरण जहाँगीर बताते हैं। जहाँगीर उस बाज़ को बिल्ली द्वारा मार दिए जाने पर उसकी स्मृति को भविष्य के लिए सुरक्षित करने के लिए अपने चित्रकारों से चित्रित करवाते हैं।
- यहाँ दिखाया गया चित्र 'पक्षी-विश्राम पर बाज' (1615 ई.) मुगल कलाकार उस्ताद मंसूर द्वारा बनाए गए कई चित्रों में से एक है।

Search on TG: @apna_pdf

PW ONLYIAS BY PHYSICS WALLAH

Join Telegram: @apna_library

दक्कनी चित्रकला शैली

उत्पत्ति और मान्यता

- दक्कनी चित्रकला शैली के इतिहास को सोलहवीं शताब्दी के अंत से लेकर 1680 के दशक तक देखा जा सकता है, जब मुगलों ने दक्कन पर आधिपत्य स्थापित किया।
- इस शैली का प्रभाव उन्नीसवीं शताब्दी **के "असफिया राजवंश" की चित्रकला** से लेकर प्रांतीय राज्य के राजाओं और नवाबों तथा हैदराबाद के निजाम के अधीनस्थ कई शासकों के काल में देखने को मिलता है।

विचारणीय बिंदु

क्या आपको लगता है कि मध्यकालीन लघु चित्रकला के इतिहास के पुनर्निर्माण से जुड़ी चुनौतियाँ, जिनमें क्षति, बिखराव और तिथियों की अनुपस्थिति से संबंधित मुद्दे शामिल हैं, कलात्मक शैलियों के विकास और उन सांस्कृतिक संदर्भों के बारे में हमारी समझ को प्रभावित करती हैं जिनमें ये चित्र बनाए गए थे?

- दक्कनी चित्रकला शैली को लंबे समय तक इंडो-पर्शियन शैली के अंतर्गत वर्गीकृत किया गया था, जिसमें **मध्य पूर्वी, सफ़ाविद, फारसी, तुर्की और मुगल चित्रकला** शैली का प्रभाव माना जाता था।
- यद्यपि कला इतिहासकारों ने इसकी विशिष्टता को स्वीकार किया, लेकिन इस शैली को एक स्वतंत्र चित्रकला शैली के रूप में मान्यता प्राप्त करने में समय लगा।
- दक्कनी शैली को उन शासकों का समर्थन प्राप्त था, जिनके अपने राजनीतिक और सांस्कृतिक दृष्टिकोण थे और जिन्होंने ऐसे कलाकारों और कला को बढ़ावा दिया जो उनकी व्यक्तिगत संवेदनाओं और शासन आवश्यकताओं को चित्रित करते थे।
- मानव आकृति का चित्रण और ऐतिहासिक व धार्मिक आकृतियों का चित्रांकन इस समय की कई शैलियों की प्रमुख विशेषता थी।
- मुगल चित्रकला में **सफ़ाविद और ऑटोमन** चित्रकला शैलियों के साथ समानताएँ थीं।
- अद्वितीय वृत्तचित्र शैली के चित्र न केवल भारत में मुगल कला की बल्कि व्यापक एशियाई इस्लामी कला की भी पहचान थे।

दक्कनी शैली का विकास

- **विंध्य पर्वत श्रृंखला** से दूर भारत के दक्षिणी पठारी क्षेत्र में 16वीं और 17वीं शताब्दी में चित्रकला की एक विशिष्ट शैली का विकास हुआ।
- इस कला को विकसित करने वाले प्रमुख राज्यों में **बीजापुर, गोलकुंडा** और **अहमदनगर शामिल थे।**

दक्कनी शैली की प्रमुख विशेषताएँ

- इस चित्रकला की अद्भुत रसमयता मधुर रंगों की तीव्रता क्षेत्रीय सौंदर्यबोध से जुड़ी है।
- चित्रकारों ने घने संयोजन के चित्रों में प्रणय का वातावरण रचा, जिसमें सौंदर्य की सहज स्वाभाविक अभिव्यक्ति हुई।

अहमदनगर चित्रकला शैली

- अहमदनगर चित्रकला शैली के शुरुआती उदाहरण **अहमदनगर के हुसैन निज़ाम शाह प्रथम (1553-1565 ई.) के शासनकाल के** कविता संग्रह से मिलते हैं।
- इस खंड में 12 लघुचित्र हैं, जिनमें मुख्य रूप से युद्ध के दृश्यों का चित्रण है।
- यद्यपि युद्ध दृश्यों के कई लघुचित्र कलात्मक ध्यान आकर्षित नहीं कर पाते, लेकिन रानी और उनके वैवाहिक समारोहों को दर्शाने वाले चित्रों में रंगों की भव्यता, रेखांकन की मधुरता से हमें संतुष्टि की अनुभूति होती है।
- ये कलाकृतियाँ मालवा और अहमदाबाद जैसे उत्तरी क्षेत्रों में प्रचलित मुगल-पूर्व चित्रकला परंपराओं से साम्यता रखती हैं।

चित्र 3.34: तारिफ-ए-हुसैन शाही – सिंहासन पर बैठे राजा, अहमदनगर (1565-1569 ई.)

वेशभूषा का विवरण

- अहमदनगर चित्रकला में महिलाओं की वेशभूषा थोड़े परिवर्तन के साथ उत्तर भारतीय परंपरा की देन है, जिसमें महिलाओं ने चोली पहली हुई है और चोटी लंबी है, जिसके अंत में फूंदने बँधे हैं। शरीर के चारों ओर एक लंबा दुपट्टा लपेटे हुए हैं, जो एक विशिष्ट दक्षिणी शैली है, जो लेपाक्षी भित्ति-चित्रों में भी देखी जा सकती है।

रंग-योजना और प्रभाव

- इन चित्रों में प्रयुक्त रंग-योजना उत्तरी पांडुलिपियों से भिन्न हैं, जो मुख्य रूप से मुगलकालीन चित्रकला से मेल खाते हैं, क्योंकि इनमें अधिक समृद्ध और चमकीले रंग दिखाई देते हैं।

Search On Telegram: @apna_pdf

Join Telegram: @apna_library

- दक्कनी चित्रकला में रंग-योजना की ये विशेषताएँ समान हैं, जैसे ऊँचा उठा हुआ वृत्ताकार क्षितिज, भव्य सुनहरा आकाश तथा अद्वितीय भूदृश्य शैली आदि।
- अहमदनगर शैली और अन्य दक्कनी साम्राज्यों पर फारसी शैली का अत्यधिक कलात्मक प्रभाव दिखाई देता है, विशेष रूप से उनके परिदृश्य चित्रण में यह स्पष्ट होता है।

प्रमुख विशेषताएँ

- रागमाला चित्रों की शृंखला में नारी चित्रण में वेशभूषा का चित्रण काफी रोचक है, इसमें सोलहवीं शताब्दी की दक्कनी चित्रकला का विकास दिखाई देता है।
- नारी चित्रण में बालों का जूड़ा लेपाक्षी भित्ति-चित्रों के तरह गर्दन पर टिका हुआ है।
- क्षितिज लुप्त हो गया है, जिसे रंग-विहीन उदासीन पृष्ठभूमि में छोटे-छोटे पौधों के चित्रण या वीथिका के ऊपर दक्कनी शैली जैसे गुंबदाकार वस्तु के अंकन से विस्थापित किया गया है।
- इनमें से अधिकांश कलात्मक तत्त्वों पर केश-विन्यास को छोड़कर, उत्तर भारत या फारस की छाप दिखाई देती है।

बीजापुर चित्रकला शैली

- बीजापुर चित्रकला शैली अपने समृद्ध सचित्र विश्वकोश **नुजूम-अल-उलूम (1570 ई.) के लिए प्रसिद्ध है।**
- इस पुस्तक में 876 लघुचित्र हैं। इनमें अस्त्र-शस्त्रों और बर्तनों से लेकर नक्षत्रों तक के चित्र शामिल हैं।
- **प्रमुख विशेषताएँ:**
  - लघुचित्रों में महिला आकृतियाँ दक्षिण भारतीय पोशाक में चित्रित की गई हैं, जो रागमाला चित्रकला की आकृतियों के समान लालित्य से परिपूर्ण हैं।
- बीजापुर चित्रकला शैली को **अली आदिलशाह प्रथम (1558-1580 ई.) और इब्राहिम द्वितीय (1580-1627 ई.)** ने संरक्षण दिया। इब्राहिम द्वितीय भारतीय संगीत के मर्मज्ञ थे और उन्होंने संगीत पर **'नौरसनामा' नामक पुस्तक लिखी।**
- बीजापुर की कलात्मकता **तुर्की के साथ उसके संबंधों से प्रभावित थी, जो नुजूम-अल-उलुम** में खगोलीय चित्रण में स्पष्ट है, जो संभवतः ऑटोमन तुर्की पांडुलिपियों से प्रेरित है।
  - रागमाला **चित्रकला** मुख्यतः भारतीय है, जिसमें लेपाक्षी शैली की झलक मिलती है।
  - यह आदिलशाह के दरबार के सुरुचिपूर्ण चित्रों में समृद्ध तीखे रंग, वेगपूर्ण रेखाएँ और सहज संयोजन सौंदर्यबोध का अनुकरण करती है।

सुल्तान इब्राहिम आदिल शाह द्वितीय हॉकिंग

- यह चित्रकला असाधारण ऊर्जा और संवेदना से परिपूर्ण है। घोड़े के पैरों और पूँछ के कोने पर तीखा लाल रंग तथा सुल्तान इब्राहिम आदिल शाह द्वितीय के लहराते हुए वस्त्र का चित्रण एक दृश्यात्मक अनुभव प्रदान करता है।
- पृष्ठभूमि में पत्तियों से भरे घने जंगल में काई रंग, पन्ना हरा रंग, नीला रंग, हरे रंग की पत्तियों, संभोगरत पक्षी का जोड़ा, नीले आकाश व सुनहरे सूर्य की किरणों से चमकता संयोजन अति आकर्षक है।
- सबसे अद्भुत बीच में चमकता सफ़ेद बाज़ और सुल्तान का तराशा हुआ चेहरा है। घोड़े और चट्टानों के चित्रण में फ़ारसी प्रभाव दृष्टिगोचर होता है।
- अग्रभूमि में पेड़-पौधे और घना परिदृश्य देशी प्रभाव प्रदर्शित करता है। दौड़ते घोड़े की गति संपूर्ण चित्र को ऊर्जावान और परिदृश्य को मनोहरी, सुरम्य बनाती है।
- यह चित्रकला इंस्टीट्यूट ऑफ़ द पीपल्स ऑफ एशिया, लेनिनग्राद, रूस में संगृहीत है।

चित्र 3.35: सुल्तान इब्राहिम आदिल शाह द्वितीय हॉकिंग

समृद्धि का सिंहासन

- समृद्धि का सिंहासन सात खंडों के शुभ सिंहासन को प्रदर्शित करने वाला प्रतीकात्मक खाका है।
- प्रत्येक खंड में इनके निवासी, हाथी, शेर, मोर से लेकर आदिम जनजातियों को चित्रित किया गया है।

Search On TG @apna_pdf

PW ONLYIAS BY PHYSICS WALLAH

Join Telegram: @apna_library

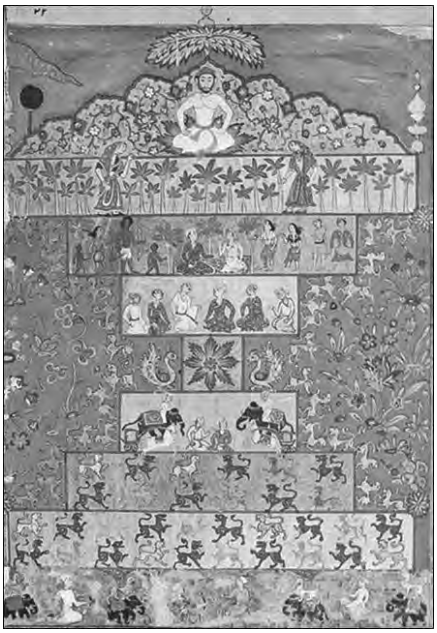

चित्र 3.36: नुजूम-अल-उलूम, समृद्धि का सिंहासन (बीजापुर, 1570 ई.)

- आधारभूत आकृति निम्नलिखित प्रतिरूपों-सी प्रतीत होती है:
  - छोटे-छोटे चित्रों की यह शृंखला गुजरात के घरों के मुख्य दरवाजों पर लगे काष्ठ उत्कीर्ण पैनलों जैसे दिखती है।
  - दक्कनी शैली के मंदिर।
- रंग योजना और अरबी कलाकृति इस्लामी फ़ारसी परंपरा को प्रतिबिंबित करती है।
- सिंहासन के ऊपरी भाग में पेड़-पौधों का चित्रण गहरी नीली पृष्ठभूमि में दक्कनी शैली में चित्रित फूल-पत्तियों से घिरा है। सिंहासन के दोनों ओर पेड़-पौधों का ये रूढ़िबद्ध चित्रण सोलहवीं शताब्दी के गुजराती पांडुलिपि चित्रों के हाशिये के चित्रण से मिलता-जुलता है।

योगिनी

- आध्यात्मिक अनुशासन और त्याग की प्रतिमूर्ति योगिनी एक असामान्य और असाधारण विषय है।
- हालाँकि इसके कलाकार की पहचान अभी तक नहीं हो पाई है, लेकिन कलाकृति निम्नलिखित विशेषताओं के कारण उल्लेखनीय है:
  - इसकी ऊर्ध्वाधर संरचना।
  - योगिनी मैना पक्षी के साथ क्रीड़ारत है, ऐसा लगता है कि वह पक्षी से बात कर रही है।
  - भव्य आभूषण और बालों का विशिष्ट जूड़ा उसके कद को और निखारता है।
  - शरीर के इर्द-गिर्द वृत्ताकार लहराता लंबा दुपट्टा व अग्रभूमि में चित्रित अति सुंदर पुष्प तथा पौधे चित्र को अद्भुत बनाते हैं।

चित्र 3.37: योगिनी, बीजापुर (सत्रहवीं शताब्दी)

गोलकुंडा चित्रकला शैली

- गोलकुंडा 1512 ई. में एक स्वायत्त राज्य बन गया और सोलहवीं शताब्दी के अंत तक सबसे धनी दक्कन राज्य के रूप में उभरा।
- **इसकी समृद्धि में योगदान देने वाले कारक**
  - पूर्वी तट के बंदरगाहों से व्यापार, दक्षिण पूर्व एशिया को लोहा और कपास का निर्यात।
  - फारस के साथ व्यापार, विशेषकर चित्रित सूती वस्त्रों की यूरोप में भारी माँग।
  - सत्रहवीं शताब्दी के प्रारंभ में हीरे की खोज।

Search On TG: @apna_pdf

Join Telegram: @apna_library

प्रमुख विशेषताएँ

- गोलकुंडा की कला की एक उल्लेखनीय विशेषता **महिला एवं पुरुष दोनों द्वारा पहने जाने वाले सोने के आभूषण हैं।**
- इस शैली की कलात्मकता को लोकप्रियता तब मिली, जब सत्रहवीं शताब्दी के अंत में डच व्यापारियों ने सुल्तान के चित्रों को यूरोप पहुँचाया।
- ये चित्र शाही चित्रकलाओं से संबंधित थे और संभवतः **बाज़ार के लिए बनाए गए थे।**
- लगभग 1635-1650 ई. के बीच प्रारंभिक गोलकुंडा चित्रकला से पूर्व के ये पट आठ फुट ऊँचे और दीवार पर लटकन के तौर पर प्रयोग किए गए। ये चित्रण सांकेतिक आकृतियों से आच्छादित हैं, जिसमें आमतौर विभिन्न चित्र चित्रित होते थे।

प्रमुख कलाकृतियाँ

- गोलकुंडा की सबसे प्रारंभिक मान्यता प्राप्त कलाकृतियाँ **हाफ़िज के दीवान से प्राप्त पाँच लघुचित्र हैं (1463 ई.)।**
  - इनमें एक युवा शासक के दरबारी दृश्य दर्शाए गए हैं, जिनकी पहचान उसकी लंबी दक्कनी तलवार से होती है।
  - इन चित्रों में सुनहरे रंग का प्रचुर-मात्रा में प्रयोग किया गया है, पृष्ठभूमि में अक्सर गहरा नीला आकाश दिखाई देता है तथा इनमें नृत्य करने वाली लड़कियों के रूप में मनोरंजन दिखाया जाता है।
  - इन चित्रों में **मुगल प्रभाव का अभाव है**, जो बैंगनी रंग और कभी-कभी नीले रंग के पशुओं, जैसे नीली लोमड़ियों के चित्रण से स्पष्ट है।

चित्र 3.38: मुहम्मद कुली कुतुब शाह के सामने नृत्य प्रस्तुतीकरण (गोलकुंडा, 1590 ई.)

- राष्ट्रीय संग्रहालय, नई दिल्ली में राग हिंडोल की रागिनी पथमासिका शीर्षक का एक प्रसिद्ध चित्र संगृहीत है। यह भारतीय संगीत विधा के रागमाला परिवार का एक महत्त्वपूर्ण भाग है, जो लगभग 1590-95 ई. पूर्व के समय का है।
- कुछ इतिहासकारों के अनुसार यह चित्र दक्कन के एक राज्य, बीजापुर से संबंधित है। लगभग मुगल चित्रकला शैली के विकास के साथ-साथ ही दक्कनी राज्यों में चित्रकला की एक अत्यधिक विकसित शैली का विकास हुआ।
- चित्रकला में फारसी प्रभाव स्पष्ट है। यह प्रभाव दो गुंबदों पर बेलबूटे के काम से सुसज्जित पृष्ठभूमि पर दिखाई देता है, जो चित्रकला के ऊपरी भाग को चित्रित करता है।
- इस चित्रकला में दोनों गुंबदों के ऊपर की गई सुसज्जा में फ़ारसी चित्रकला का स्पष्ट प्रभाव दिखाई देता है। गुंबदों का ऊपरी भाग चित्र को विभाजित करता है जहाँ खाली स्थान पर देवनागरी लिपि में लिखा गया है।
- मंडप में दो महिलाएँ खूबसूरती से सजे आभूषण पहने हुए दिखाई दे रही है, जबकि तीसरी इसके बाहर दिखाई दे रही है। केंद्र में बैठी महिला वादक एक भारतीय वाद्य यंत्र बजा रही है जो वीणा प्रतीत होता है, जबकि पास में अन्य दो महिलाएँ अपने शरीर से लयबद्ध होती प्रतीत होती हैं।
- इस चित्रकला में चमकीले रंग हैं। लाल रंग प्रमुख है और हरे रंग द्वारा सराहा जाता है। आकृतियों को इस अर्थ में शैलीबद्ध कहा जा सकता है कि चेहरे सहित उनके शरीर का निर्माण लगभग सूत्रात्मक विवरणों पर किया गया है।
- गूढ़ रेखा के साथ लगभग सभी रूपों पर जोर दिया गया है। इसे सदियों पहले चित्रित अजंता के भित्ति-चित्रों में भी देखा जा सकता है।
- यह भी ध्यान देने योग्य है कि बाएँ हाथ के कोने में एक हाथी सूँड उठाए हुए है, जो स्वागत का एक मनोहर संकेत है। नाप में छोटा होने के बावजूद, हाथी दृश्य रुचि जाग्रत करता है और स्थापत्य कला की पारंपरिक संरचना को तोड़ता है।

चित्र 3.39: राग हिंडोल की रागिनी पथमासिका

Search On TG: @apna_pdf

PW ONLYIAS BY PHYSICS WALLAH

Join Telegram: @apna_library

- सत्रहवीं शताब्दी की इस चित्रकला में कई आकृतियों व कलात्मक तत्त्वों का रोचक मिश्रण हुआ है, जिसकी पराकाष्ठा संयोजित घोड़ा के रूप में हुई है।
- इस चित्रकला के अंदर मानव व पशु-पक्षी की आकृतियों को एक साथ इस तरह से चित्रित किया गया है कि यह असाधारण संयोजन बन गया है। अलंकृत पृष्ठभूमि पर सरपट दौड़ते हुए घोड़े का यह अद्भुत चित्रण है।
- उड़ते हुए पक्षी, सिंह, बादल, पौधे व विशाल वृक्षों का रुचिकर संयोजन है, जिनमें अति यथार्थवादी कला तत्त्वों की झलक मिलती है। एक तरफ सभी आकृतियों को वायु में उड़ते हुए गतिशील दिखाया गया है, दूसरी ओर अग्रभूमि में नीचे के दोनों किनारों पर चट्टानों का चित्रण इसे विलक्षण बनाता है।
- कल्पनाशीलता का पुट भी इसे विशिष्टता प्रदान करता है। सभी गतिशील क्रियाओं को बहुत सीमित रंग योजना में भूरे और नीले रंग से चित्रित किया गया है।

चित्र 3.40: संयोजित घोड़ा

- **मुहम्मद कुली कुतुब शाह (1611-1626 ई.)** का एक चित्र है, जिसमें सुल्तान को पारंपरिक गोलकुंडा पोशाक पहने हुए चित्रित किया गया है।
  - इस चित्र में पूर्ववर्ती चित्रों से व्यापक समानता के बावजूद संयोजन में अधिक तकनीकी दक्षता और परिष्करण दिख रहा है।
  - 20 से अधिक लघु चित्रों से सुसज्जित एक सूफी कविता की पांडुलिपि में सुनहरे रंग का प्रचुर मात्रा में प्रयोग किया गया है।
  - विशिष्ट तत्त्वों में सुनहरे और नीले रंग की पट्टियों से रंगा हुआ आसमान, बीजापुर के इब्राहिम द्वितीय के शासनकाल की प्रवृत्तियों को दर्शाती वेशभूषा तथा विशिष्ट रंग वाले दक्कनी वृक्ष शामिल हैं।

- बीजापुर के सुल्तान अब्दुल्ला का छवि चित्रण राष्ट्रीय संग्रहालय, नई दिल्ली में संगृहीत है। चित्र के ऊपरी भाग में फ़ारसी भाषा का अभिलेख है।
- सुल्तान कुतुब शाह दक्कन के प्रसिद्ध राज्य बीजापुर का समर्थ शासक था। इसने विश्व के विभिन्न हिस्सों के शासकों व कलाकारों को आकर्षित किया।
- दिए गए चित्र में वह सिंहासन पर बैठा है और उसने अपने हाथ में तलवार थामी हुई है, जो उसके राजनीतिक आधिपत्य का प्रतीक है। इसके अलावा उसके सिर के चारों ओर देवत्व का प्रभामंडल दिखाई देता है।

चित्र 3.41: सुल्तान अब्दुल्ला कुतुब शाह

राष्ट्रीय संग्रहालय, नई दिल्ली में संगृहीत यह प्रांतीय (प्रोवेंशियल) चित्र हैदराबाद, दक्कन का है। यह तेरहवीं शताब्दी के प्रसिद्ध सूफी संत हजरत निज़ामुद्दीन औलिया को दर्शाता है।

इस चित्र में वह अपने शिष्य तथा प्रसिद्ध कवि और विद्वान अमीर खुसरो का संगीत सुन रहे हैं।

समकालीन प्रासंगिकता

वर्तमान में नई दिल्ली में स्थित हज़रत निज़ामुद्दीन औलिया की दरगाह पर अमीर खुसरो की याद में अपने पीर की प्रशंसा में कव्वाली आयोजित की जाती है। इस नियमित सांस्कृतिक कार्यक्रम का आनंद लेने के लिए दुनिया भर से श्रद्धालु यहाँ आते हैं।

कलात्मक परिप्रेक्ष्य

हैदराबाद के दरबार से लिया गया यह चित्र बगैर किसी तकनीकी व कलात्मक परिष्करण के अति सरल चित्र है। इसके बावजूद इसमें भारतीय लोकप्रिय विषय का विवरणात्मक और आर्कषक चित्रण है।

चित्र 3.42: हज़रत निज़ामुद्दीन औलिया और अमीर खुसरो

Search On TG: @apna_pdf

Join Telegram: @apna_library

- यह चित्रकला राष्ट्रीय संग्रहालय, नई दिल्ली में संगृहीत है।
- यह चित्रकला सर्वाधिक समृद्ध और सांस्कृतिक रूप से परिष्कृत, दक्कन राज्य के बीजापुर की रानी, चाँद बीबी का है।
- चाँद बीबी ने सम्राट अकबर द्वारा राज्य पर अधिकार करने के राजनीतिक प्रयासों का विरोध किया था। सम्माननीय और निपुण शासक चाँद बीबी बेहतर खिलाड़ी भी थीं।
- प्रस्तुत चित्र में वह चौगान खेलते हुए दिखाई गई हैं। यह उस समय का लोकप्रिय शाही खेल है।

चित्र 3.43: पोलो खेलते हुए चाँद बीबी

पहाड़ी चित्रकला शैली

प्रमुख विशेषताएँ

- **पहाड़ी** का अर्थ है **'पर्वतीय'**। पहाड़ी चित्रकला की शुरुआत 17वीं और 19वीं सदी के बीच पश्चिमी हिमालय में स्थित शहरों में हुई थी।
- उत्पत्ति के प्रमुख केन्द्रों में बसोहली, गुलेर, कांगड़ा, कुल्लू, चम्बा, मनकोट, नूरपुर, मण्डी, बिलासपुर तथा जम्मू आदि शामिल हैं।
- यह बसोहली में एक जीवंत, अलंकृत शैली के रूप में विकसित हुई, जो गुलेर या आरंभिक-कांगड़ा दौर से होते हुए परिष्कृत कांगड़ा शैली के रूप में उभर कर सामने आई।

चित्र 3.44: कृष्ण माखन चुराते हुए, भागवत पुराण (1750 ई.)

वर्गीकरण में चुनौतियाँ

- मुगल, दक्कनी और राजस्थानी शैलियों के विपरीत, पहाड़ी चित्रकला शैली क्षेत्रीय वर्गीकरण के लिए चुनौतियाँ प्रस्तुत करती है।
- यद्यपि अलग-अलग केन्द्रों ने विशिष्ट कलात्मक विशेषताएँ प्रदर्शित कीं, फिर भी वे अद्वितीय विशेषताओं वाली स्वतंत्र शैलियों के रूप में विकसित नहीं हुए।
- दिनांकित सामग्री और शिलालेखों का अभाव है, जिससे सटीक वर्गीकरण में बाधा आती है।

प्रभाव और उद्भव

- इसकी उत्पत्ति के बारे में निश्चित जानकारी नहीं है, हालाँकि कुछ सिद्धांत बताते हैं कि इसमें मुगल और राजस्थानी चित्रकला शैलियों का प्रभाव है।
- बसोहली शैली को सबसे प्रारंभिक प्रचलित चित्रात्मक भाषा माना जाता है।
- बी. एन. गोस्वामी के शोध से पता चलता है कि पहाड़ी शैली बसोहली की सादगी से विकसित होकर कांगड़ा की काव्यात्मक गीतात्मकता में परिवर्तित हुई, जो मुख्य रूप से पंडित सिऊ (शिव) के कलाकार परिवार द्वारा संचालित थी।
- गोस्वामी का यह भी तर्क है कि क्षेत्रों के आधार पर पहाड़ी चित्रकला की पहचान करना भ्रामक हो सकता है, क्योंकि राजनीतिक सीमाएँ हमेशा बहुत अनिश्चित होती थीं।
- 18वीं शताब्दी के मध्य तक यह शैली कांगड़ा के आरंभिक दौर से परिपक्व होकर कांगड़ा शैली में परिवर्तित हो चुकी थी।
- इस परिवर्तन का श्रेय संभवतः शासकों, व्यापारियों या कलाकारों द्वारा शुरू की गई नई चित्रकला शैलियों को दिया जाता है।

शैलीगत विशेषताएँ

- रचनाओं को सामान्यतः सापेक्ष दृष्टिकोण से प्रदर्शित किया जाता है।
- विषयों में राजाओं के दैनिक जीवन को दर्शाया गया, महिलाकृतियों में नवीनता और आदर्श चेहरे का चित्रण किया गया।
- इस विकास के परिणामस्वरूप कांगड़ा शैली का परिपक्व दौर शुरू हुआ और परिष्कृत प्रकृतिवाद इसकी प्रमुख विशेषता थी।

Search On TG: @apna_pdf

PW ONLYIAS BY PHYSICS WALLAH

Join Telegram: @apna_library

बसोहली चित्रकला शैली

- बसोहली शैली पहाड़ी राज्यों का एक कला रूप है, जिसे बसोहली में सबसे अधिक मान्यता प्राप्त है।
- राजकुमार कृपाल पाल, जिन्होंने 1678 से 1695 तक शासन किया, ने बसोहली में एक अद्वितीय और शानदार शैली विकसित की।

प्रमुख विशेषताएँ

- प्राथमिक रंगों, विशेषकर उष्ण पीले रंग का सशक्त उपयोग तथा वनस्पति का शैलीगत चित्रण।
- आभूषणों में मोती को चित्रित करने के लिए उठे हुए सफेद रंग का उपयोग, जेवरात को चित्रित करने के लिए छोटे चमकीले हरे कीट-पंखों के अंश का प्रयोग और पन्ना के प्रभाव का अनुकरण।
- चित्रों का लालित्य और चमकीले रंग पश्चिमी भारत की **चौरपंचाशिका चित्रकला की याद दिलाते हैं।**

लोकप्रिय विषय और कलाकार

- सबसे प्रिय विषय **भानुदत्त द्वारा रचित "रसमंजरी" था।** 1694-95 ई. में तरखान (सुतार चित्रकार) **देवीदास ने** अपने संरक्षक **कृपाल पाल के लिए चित्रों की एक शृंखला बनाई थी।**
- अन्य विषयों में **"भागवत पुराण" और "रागमाला" शामिल थे।** राजाओं, उनकी पत्नियों, दरबारियों और अन्य महत्त्वपूर्ण व्यक्तियों के चित्र भी लोकप्रिय थे।
- **चम्बा और कुल्लू** जैसे अन्य पहाड़ी राज्यों में भी बसोहली शैली का विस्तार हुआ, जिससे स्थानीय स्तर पर इसमें विविधता आई।

विकास और विस्तार

- 1690 से 1730 के दशक तक एक नई शैली उभरी, जिसे गुलेर-कांगड़ा दौर के नाम से जाना जाता है।
- यह दौर प्रयोगों का दौर था, जिसके परिणामस्वरूप **अंततः कांगड़ा शैली** का विकास हुआ।
  - बसोहली से शुरू होकर यह कला मनकोट, नूरपुर, कुल्लू, मंडी, बिलासपुर, चंबा, गुलेर और कांगड़ा में प्रसारित हुई।

चित्र 3.45: राम अपनी संपत्ति दान देते हुए, अयोध्या कांड (शांगरी रामायण, 1690-1700 ई.)

रामायण का प्रभाव

- संस्कृत महाकाव्य रामायण, बसोहली और कुल्लू के पहाड़ी कलाकारों का पसंदीदा ग्रंथ था।
- कुल्लू राजपरिवार से जुड़े स्थान **'शांगरी'** के नाम पर बनाए गए चित्रों के एक विशिष्ट समुच्चय में बसोहली और बिलासपुर शैलियों का प्रभाव प्रदर्शित किया गया है।
- चित्रों में राम के वनवास, उनके धर्मार्थ कार्यों तथा पात्रों की भावनात्मक उथल-पुथल जैसे दृश्य दर्शाए गए हैं।
- एक चित्र में **ऋषि विश्वामित्र** के साथ राम और लक्ष्मण की यात्रा को दर्शाया गया है, जहाँ पशुओं का चित्रण कथा में गहराई और रहस्य जोड़ता है।

गुलेर शैली

- **गुलेर शैली, बसोहली शैली** से एक बड़े परिवर्तन को दर्शाती है, जो पहाड़ी चित्रकला में **गुलेर-कांगड़ा काल** के प्रारंभ को दर्शाता है।

Search On TG: @apna_pdf

Join Telegram: @apna_library

ऐतिहासिक संदर्भ

- **राजा गोवर्धन चंद (1744-1773 ई.)** के संरक्षण में गुलेर में 18वीं शताब्दी की शुरुआत में परिवर्तन का दौर शुरू हुआ।
- गुलेर चित्रकला की एक लंबी परंपरा थी, जिसमें साक्ष्यों से पता चलता है कि कलाकारों ने **दलीप सिंह (1695-1743)** और उनके बेटे **बिशन सिंह** के शासनकाल के दौरान वहाँ कार्य किया था, जो गुलेर-कांगड़ा दौर से पहले था।

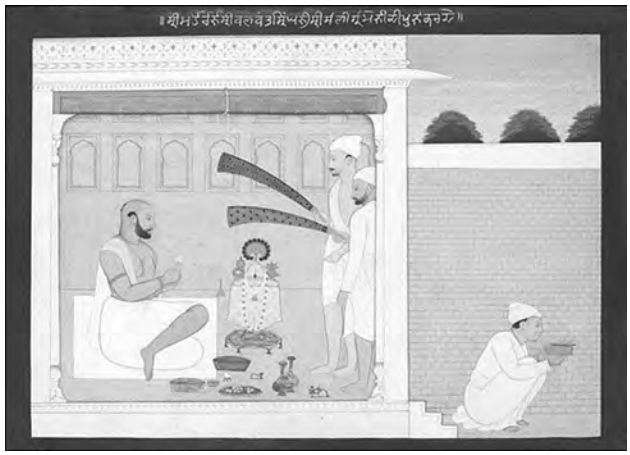

चित्र 3.46: प्रार्थना में बलवंत सिंह, नैनसुख (1750 ई.)

- **प्रमुख कलाकार और उनका योगदान**
  - कलाकार **पंडित सिऊ** और उनके बेटों **मानक (या मनकू) तथा नैनसुख ने** 1730-40 ई. के आस-पास इस परिवर्तन में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई।
  - **मनकू का उल्लेखनीय कार्य:** 1730 में चित्रित **गीत गोविंद** का एक सेट, जिसमें बसोहली शैली के कुछ तत्त्व भी समाहित हैं।
  - **नैनसुख की विशिष्टता:** नैनसुख अपने अद्वितीय चित्रांकन के लिए प्रसिद्ध हैं, विशेष रूप से अपने संरक्षक **जसरोटा के बलवंत सिंह** के चित्रों के लिए। उनके चित्रों में बलवंत सिंह की विभिन्न गतिविधियों को दर्शाया गया है, जो एक विस्तृत दृश्य रिकॉर्ड प्रदर्शित करता है। उनकी रंगपटिका कोमल हल्के रंगों की थी, जिसमें श्वेत एवं धूसर रंगों का विस्तार शामिल था।

कलात्मक विकास

- यह नई शैली बसोहली की साहसिक जीवंतता की तुलना में अधिक परिष्कृत, सुरुचिपूर्ण और शांत थी।
- 1780 के दशक तक इस शैली का परिपक्व संस्करण कांगड़ा शैली में परिवर्तित हो गया, हालाँकि बसोहली का प्रभाव **चंबा और कुल्लू जैसे स्थानों पर बना रहा।**

संरक्षक और उनका प्रभाव

- मनकू ने अपने उत्साही संरक्षक **राजा गोवर्धन चंद** और उनके परिवार के कई चित्र बनाए।
- **राजा प्रकाश चंद भी कला प्रेमी थे।** उनके दरबार में मानक और नैनसुख के पुत्र **कौशल, फत्तू और गोधू कलाकार के रूप में थे।**

कांगड़ा शैली

- **कांगड़ा क्षेत्र में चित्रकला राजा संसार चंद (1775-1823)** के संरक्षण में विकसित हुई, जो इस क्षेत्र के कला इतिहास में एक महत्त्वपूर्ण व्यक्ति थे।
- आर्थिक तंगी के बीच गुलेर के प्रमुख कलाकार प्रकाश चंद, मनकू और उनके पुत्रों को राजा संसार चंद के संरक्षण में शरण मिली, जिससे कांगड़ा कला समृद्ध हुई।
- कांगड़ा शैली का समृद्ध इतिहास कटोच राजवंश के शासनकाल में निहित है, जो 17वीं शताब्दी में जहाँगीर के सत्ता में आने के बाद बाधित हुआ था। मुगलों के पतन के बाद राजा घमंड चंद द्वारा इस रियासत का पुनरुत्थान हुआ।
- **प्रमुख कला केंद्र: व्यास नदी** के किनारे स्थित तीरा सुजानपुर, **घमंड चंद के** अधीन कला के लिए एक उल्लेखनीय केंद्र के रूप में उभरा और बाद में **संसार चंद** के अधीन कला का केंद्र बन गया। अन्य महत्त्वपूर्ण केंद्रों में आलमपुर और नादौन शामिल हैं, जो दोनों व्यास नदी के किनारे स्थित हैं।
- **प्रमुख विशेषताएँ:** कांगड़ा शैली सबसे अधिक काव्यात्मक और गीतात्मक भारतीय शैली है, जो स्थायी सुंदरता और कोमलता के प्रदर्शन में अपनी पहचान बनाती है। महीन रेखा, चटक रंग, अलंकरण में बारीकी और सबसे मुख्य महिला आकृतियों के चेहरे का चित्रण, माथे से नाक तक सीधी रेखाएँ, जो लगभग 1790 के दशक के आस-पास लोकप्रिय हो गईं।

Search on TG: @apna_pdf

PW ONLYIAS BY PHYSICS WALLAH

Join Telegram: @apna_library

चित्र 3.47: कालिया मर्दन, भागवत पुराण (कांगड़ा, 1785 ई.)

लोकप्रिय विषय और कलाकार

- **कांगड़ा शैली में भागवत पुराण, गीत गोविंद, नल दमयंती, बिहारी-सतसई, रागमाला और बारहमासा जैसी** धार्मिक और सांस्कृतिक कथाएँ शामिल थीं।
- **फत्तू, पुरखू और कौशल** उल्लेखनीय चित्रकारों के रूप में उभरे, जिन्होंने कांगड़ा शैली में स्थायी विरासत निर्मित की है।
- शाही दरबार और उसकी गतिविधियाँ, विशेषकर राजा संसार चंद की गतिविधियाँ, अक्सर चर्चा का विषय रहीं, जिनमें उस युग का सार समाहित था।

प्रभाव, विस्तार और चुनौतियाँ

- संसार चंद के शासनकाल में कांगड़ा चित्रकला शैली का व्यापक प्रसार हुआ, जो तीरा सुजानपुर से गढ़वाल और यहाँ तक की कश्मीर तक प्रसारित हुई।
- हालाँकि 1805 ई. के आस-पास **गोरखा आक्रमण ने** कलात्मक प्रयासों को गंभीर रूप से बाधित किया, जब तक कि 1809 में **रणजीत सिंह के** हस्तक्षेप से उन्हें खदेड़ नहीं दिया गया। इसके बावजूद 1805 ई. के बाद कलात्मक चमक पहले जैसी नहीं रही।

प्रमुख उपलब्धियाँ

- असंख्य कलात्मक रचनाओं में **भागवत पुराण शृंखला सर्वोच्च स्थान पर है, विशेष रूप से रस पंचध्यायी** का चित्रण, जो कृष्ण के प्रति गोपियों के गहन प्रेम को स्पष्ट रूप से दर्शाता है।
- **अष्ट नायिकाओं या आठ नायिकाओं** का विविध भावनात्मक अवस्थाओं में चित्रण पहाड़ी चित्रकला की जटिलता और गहराई का प्रतीक है।

चित्र 3.48: अभिसारिका नायिका, कांगड़ा (1810-1820 ई.)

Search On TG: @apna_pdf

Join Telegram: @apna_library

स्थानीय शैलियाँ और प्रभाव

- बसोहली **शैली की शाखाएँ चंबा, कुल्लू, नूरपुर, मनकोट, जसरोटा, मंडी, बिलासपुर और जम्मू** जैसे कई क्षेत्रों में देखी गईं, जिनमें से प्रत्येक की अपनी अलग विशेषताएँ थीं।
- उदाहरण के लिए कुल्लू शैली ने अपने चित्रों में विशिष्ट चेहरे की विशेषताओं और धूसर एवं टेराकोटा लाल रंगों के प्रचुर उपयोग के कारण अपनी पहचान बनाई। माना जाता है कि प्रसिद्ध शांगरी रामायण संग्रह को अलग-अलग शैलियों के कारण कई कलाकारों ने बनाया है, जो 17वीं शताब्दी के अंत में कुल्लू घाटी में चित्रित किया गया था।
- **नूरपुर के** कलाकारों ने कांगड़ा की सुंदर आकृतियों के साथ बसोहली के चमकीले रंगों को बनाए रखा।

- पंडित सिऊ के दो पुत्र- मनकू और नैनसुख, जिन्होंने पहाड़ी चित्रकला को बसोहली से कांगड़ा चित्रकला चरण में पहुँचाया।
- इस युग में कलात्मक विकास काफ़ी महत्त्वपूर्ण रहा। मनकू का गीत गोविंद पर काम सबसे अलग है, जिसमें राधा और कृष्ण के दिव्य प्रेम का विवरण दिया गया है।

गीत गोविंद का कलात्मक चित्रण

- कहानी में राधा का संशय और कृष्ण की उनके मिलन की उत्कंठा को दर्शाया गया है।
- चित्र पर शिलालेख में राधा के शरमाने से लेकर कृष्ण के प्रति अपने प्रेम को अपनाने की यात्रा का वर्णन किया गया है।

चित्र 3.49: प्रतीक्षारत कृष्ण और संशयशील राधा

- बसोहली और मनकोट के बीच वैवाहिक संबंधों के कारण, कुछ बसोहली कलाकार मनकोट चले गए, जिससे चित्रकला की एक मिश्रित शैली विकसित हुई।
- **जसरोटा को** बलवंत सिंह का प्रभावशाली संरक्षण प्राप्त था, उनके कई चित्र उनके दरबारी कलाकार नैनसुख ने बनाए थे। इससे सरल बसोहली शैली और अधिक परिष्कृत शैली के बीच तालमेल हुआ, जिसे अक्सर गुलेर-कांगड़ा शैली के रूप में जाना जाता है।
- **मंडी में स्वाभाविक रूप से कृष्ण लीला** विषयों और **शैव** विषयों दोनों का चित्रण देखा गया।
- **गढ़वाल** में मोलाराम एक ऐसे कलाकार के रूप में उभरे, जो कांगड़ा शैली, विशेषकर संसार चंद के दौर से अत्यधिक प्रभावित हैं।

अंतर-क्षेत्रीय विविधताएँ और विरासत

- कांगड़ा शैली 1780 के दशक में शुरू हुई, जबकि बसोहली शैली के विभिन्न रूपों ने चंबा, कुल्लू, नूरपुर आदि क्षेत्रों को प्रभावित करना जारी रखा।
- **नैनसुख ने** अपनी विशिष्ट शैली के साथ बसोहली की सादगी को नवीन परिष्कार के साथ जोड़ा, जिससे गुलेर-कांगड़ा शैली का जन्म हुआ।
- जैसे-जैसे कला आगे बढ़ी और विकसित हुई, **मंडी** जैसे क्षेत्रों में उनके शासकों की **विष्णु और शिव** के प्रति भक्ति से प्रभावित होकर नए विषयगत आयाम सामने आए।
- **गढ़वाल शैली के मोलाराम और संसार चंद की कांगड़ा शैली** के प्रभाव, कांगड़ा कला के व्यापक प्रभाव और अनुकूलन को दर्शाते हैं।

- चित्र में जसरोटा के राजकुमार बलवंत सिंह को बड़े जतन से चित्र को देखते हुए दर्शाया गया है, जिसे उन्होंने अपने हाथों में पकड़ा है।
- एक व्यक्ति सिर झुकाए हुए शिष्टतापूर्वक खड़ा है, वह अन्य कोई नहीं, कलाकार नैनसुख है। यह चित्र शायद ऐसा बिरला चित्र है जिसमें नैनसुख ने स्वयं को अपने संरक्षक के साथ चित्रित किया है।
- बलवंत सिंह अपने महल में बैठे हैं, हरे-भरे वृक्षों से परिपूर्ण दृश्य की अनदेखी कर रहे हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि संध्या का समय है। नैनसुख का व्यवस्थित संयोजन अपने आप में वैराग्य, शांति और स्थिरता को प्रदर्शित करता है जो बलवंत सिंह के स्वभाव को चित्र में दर्शाते हैं।
- बलवंत सिंह हुक्का पी रहे हैं जो सामान्यतः कार्य की व्यस्तता के बीच कुछ पलों के विश्राम के लिए करते थे।
- संगीतज्ञों को बड़ी निपुणता से चित्र में किनारे पर चित्रित किया गया है, जो उनकी उपस्थिति को दर्शाता है। चित्र में उनकी स्थिति ऐसी प्रतीत होती है कि संगीत की प्रस्तुति ध्यानाकर्षण के लिए नहीं, बल्कि नैपथ्य में हल्की धुन के लिए है, जिससे वातावरण शांत हो रहा है। साथ-ही-साथ बलवंत सिंह कृष्ण को दर्शाते चित्र की बारीकियों में तल्लीन हैं।

चित्र 3.50: बलवंत सिंह नैनसुख के साथ एक चित्र देखते हुए

Search On TG: @apna_pdf

ONLYIAS BY PHYSICS WALLAH

Join Telegram: @apna_library

- यह चित्र भी भागवत पुराण के एक दर्शाता को दृष्टांत करता है, जिसमें नंद अपने परिवार और रिश्तेदारों के साथ वृंदावन की ओर यात्रा करते हुए अंकित किए गए हैं।
- उन्होंने देखा कि गोकुल राक्षसों से पीड़ित है, जो कृष्ण को अत्यंत परेशान करने में जुटे हुए हैं, इसलिए उन्होंने सुरक्षित स्थान पर जाने का निर्णय लिया।
- चित्र में नंद बैलगाड़ी पर बैठे, समूह का नेतृत्व कर रहे हैं और उनके पीछे आ रही बैलगाड़ी में दोनों भाई- कृष्ण एवं बलराम, अपनी माताओं यशोदा एवं रोहिणी के साथ बैठे हैं।
- स्त्री एवं पुरुष अपने साथ गृहस्थी का सामान और बच्चों को लेकर साथ में चल रहे हैं। उनके भावों और गतिविधियों का अंकन बहुत बारीकी से किया गया है।
- आपस में बातचीत करते हुए उनके सिर का एक ओर झुकना, सिर पर रखे भार से झुकी हुई आँखों से थकान के भाव को प्रदर्शित करना तथा सिर पर रखे बरतन को खीचें हुए हाथों से कस कर पकड़ना आदि अद्भुत निरीक्षण एवं उत्कृष्ट कौशल के उदाहरण हैं।
- जैसे कि इस अध्याय के आरंभ में उल्लेख किया गया है कि कांगड़ा (कलाकार) चित्रकारों ने प्राकृतिक दृश्यों का बहुत बारीकी से निरीक्षण किया है और स्वाभाविक तरीके से प्रदर्शित किया है। इस चित्र में बारीकियों को अर्थपूर्ण तरीके से अभिव्यक्त किया गया है। छायाचित्रों-सी समानता जो चित्र को यथार्थता प्रदान करती है, वह भी हम इस संयोजन में देखी जा सकती है।

चित्र 3.51: नंद, यशोदा और कृष्ण

कंपनी चित्रकला और सांस्कृतिक राष्ट्रवाद

- कंपनी चित्रकला से तात्पर्य उस शैली से है, जो 18वीं शताब्दी के दौरान स्थानीय भारतीय कलाकारों द्वारा ब्रिटिश औपनिवेशिक अधिकारियों की रुचि को पूरा करने के लिए अपनी पारंपरिक तकनीकों को अनुकूलित करने से उत्पन्न हुई।
- औपनिवेशिक काल से पहले की भारतीय कला विविधतापूर्ण थी, जो मंदिर की मूर्तियों, लघु चित्रों और ग्रामीण घरों की दीवार की सजावट में देखी जा सकती थी।
- भारत के अनोखे रीति-रिवाजों, वनस्पतियों और जीव-जंतुओं से प्रभावित होकर अंग्रेजों ने दस्तावेजीकरण और प्रशंसा के लिए चित्रों का निर्माण करवाया।
- चित्रकारी मुख्यतः **कागज पर कलाकारों द्वारा की गई थी, जिनमें से कुछ कलाकार मुर्शिदाबाद, लखनऊ या दिल्ली** जैसे पूर्व दरबारों से थे।
- स्मृति और नियम पुस्तिकाओं (पारंपरिक कला) पर निर्भरता से लेकर गहन अवलोकन (यूरोपीय कला) की ओर परिवर्तन देखने को मिला। इसके परिणामस्वरूप भारतीय और यूरोपीय कला तकनीकों का मिश्रण हुआ।
- भारत में ब्रिटिश लोगों ने इसे खूब पसंद किया। इन चित्रों के एल्बमों की ब्रिटेन में बहुत माँग थी।

चित्र 3.52: गुलाम अली खान, वेश्याओं का समूह (कंपनी पेंटिंग, 1800-25 ई.)

Search On TG: @apna_pdf

Join Telegram: @apna_library

राजा रवि वर्मा

- राजा रवि वर्मा केरल के त्रावणकोर दरबार के एक प्रशिक्षित कलाकार थे, जो भारतीय पौराणिक और ऐतिहासिक विषयों के साथ यूरोपीय अकादमिक यथार्थवाद के मिश्रण के लिए जाने जाते थे।

चित्र 3.53: राजा रवि वर्मा

भारत में कला का विकास

- 19वीं शताब्दी के मध्य में फोटोग्राफी के आगमन के साथ ही कंपनी चित्रकला की लोकप्रियता में गिरावट आई।
- ब्रिटिश कला विद्यालयों ने भारतीय विषयों के साथ यूरोपीय माध्यमों को मिलाकर तैल चित्रकला की अकादमिक शैली को बढ़ावा दिया।

राजा रवि वर्मा का योगदान

- उन्होंने भारतीय महलों में पाए जाने वाले यूरोपीय चित्रों की नकल करके सीखा। उन्होंने अकादमिक यथार्थवाद का उपयोग करके रामायण और महाभारत जैसे महाकाव्यों के दृश्यों को सफलतापूर्वक चित्रित किया।
- उनके कार्यों ने अपार लोकप्रियता हासिल की, जिन्हें बिक्री के लिए ओलियोग्राफ के रूप में पुनरुत्पादित किया गया और कैलेंडर छवियों के रूप में जिनका व्यापक प्रचार-प्रसार हुआ।

राष्ट्रवाद पर प्रभाव

- 19वीं शताब्दी के अंत में, जब भारत में राष्ट्रवाद बढ़ रहा था, राजा रवि वर्मा की शैली को भारतीय विषयों के लिए बहुत अधिक पश्चिमीकृत होने के लिए आलोचना का सामना करना पड़ा।
- इसके परिणामस्वरूप 20वीं सदी के प्रारंभ में बंगाल कला स्कूल का उदय हुआ, जिसने कला में राष्ट्रवादी भावनाओं को प्रतिबिंबित किया।

बंगाल शैली

- "बंगाल कला विद्यालय" एक कला आंदोलन और शैली थी, जो यद्यपि कलकत्ता और बंगाल में आरंभ हुई, किन्तु इसका प्रभाव पूरे भारत में फैल गया तथा कला में राष्ट्रवादी भावनाएँ प्रतिबिंबित हुईं।
- यह आंदोलन कलकत्ता से शुरू हुआ, जो उस समय ब्रिटिश सत्ता का केंद्र था। यह बंगाल तक ही सीमित नहीं था, इसने पूरे भारत में कलाकारों को प्रभावित किया, जिसमें शांतिनिकेतन भी शामिल था, जो भारत का पहला राष्ट्रीय कला विद्यालय था।

मुख्य कलाकार

- इसका नेतृत्व राष्ट्रवादी (स्वदेशी) आंदोलन के एक प्रमुख व्यक्ति, **अवनींद्रनाथ टैगोर (1871-1951 ई.)** ने किया। **ई. बी. हैवेल (1861-1934)** द्वारा उनका समर्थन किया गया, जो "कलकत्ता स्कूल ऑफ आर्ट" के ब्रिटिश प्रशासक और प्रधानाध्यापक थे।

प्रेरणा

- टैगोर और हैवेल दोनों ने औपनिवेशिक कला विद्यालयों और उनके द्वारा यूरोपीय रुचि को बढ़ावा देने की आलोचना की।
- इसका उद्देश्य एक ऐसे कला रूप को बढ़ावा देना था, जो शैली और विषय-वस्तु दोनों में विशिष्ट रूप से भारतीय हो।
- उन्होंने मुगल और पहाड़ी लघुचित्रों जैसे पारंपरिक भारतीय कला रूपों से प्रेरणा ली तथा कंपनी स्कूल ऑफ पेंटिंग और औपनिवेशिक कला विद्यालयों में प्रचलित यूरोपीय शैक्षणिक शैली के प्रभावों को अस्वीकार कर दिया।

अवनीन्द्रनाथ टैगोर और ई. बी. हैवेल

- वर्ष **1896 भारतीय दृश्य कला के लिए महत्त्वपूर्ण है, जिसमें ई. बी. हैवेल और अवनीन्द्रनाथ टैगोर** के बीच सहयोग देखा गया।
- उनका प्राथमिक मिशन कला शिक्षा का **भारतीयकरण करना था**, जिसकी शुरुआत कलकत्ता के सरकारी कला विद्यालय से हुई, जिसे अब **सरकारी "कला एवं शिल्प महाविद्यालय, कोलकाता" के नाम से जाना जाता है।**
- लाहौर, बम्बई और मद्रास जैसे शहरों में स्थित अन्य कला विद्यालयों में शिल्पकला पर जोर दिया जाता था, इसके विपरीत कलकत्ता का संस्थान ललित कलाओं पर अधिक जोर देता था।

Search On TG: @apna_pdf

PW ONLYIAS BY PHYSICS WALLAH

Join Telegram: @apna_library

- हैवेल और टैगोर ने पाठ्यचर्या की पुनःकल्पना की तथा भारतीय कला परम्पराओं से तकनीक और विषयवस्तु को इसमें शामिल किया।
- अवनीन्द्रनाथ की **"जर्नीज़ एण्ड (Journey's End)"** मुगल और पहाड़ी लघुचित्रों के प्रभाव को दर्शाती है तथा चित्रकला में विशिष्ट भारतीय शैली के प्रति उनकी आकांक्षा को प्रदर्शित करती है।

भारत की कलात्मक भाषा की पुनर्प्राप्ति

- कला इतिहासकार **पार्थ मित्तर ने** कहा कि अवनीन्द्रनाथ टैगोर के विद्यार्थियों की पहली पीढ़ी भारतीय कला की **"गुम हुई शैली"** को पुनर्प्राप्त करने में लगी हुई थी।
- अवनीन्द्रनाथ टैगोर ने "**इंडियन सोसाइटी ऑफ ओरिएंटल आर्ट" पत्रिका** में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई, जिससे आधुनिक भारतीय कलाकारों को अपने भव्य इतिहास से सीखने का अवसर मिला।

स्वदेशी मूल्य और बंगाल स्कूल ऑफ आर्ट की स्थापना

- अवनीन्द्रनाथ भारतीय कला में स्वदेशी मूल्यों के प्रमुख समर्थक के रूप में उभरे। उनकी दूरदर्शिता "बंगाल स्कूल ऑफ आर्ट" की स्थापना के रूप में परिणत हुई, जिसने आधुनिक भारतीय चित्रकला की नींव रखी।
- अवनीन्द्रनाथ द्वारा प्रारंभ की गई नई दिशा को बाद के कलाकारों ने अपनाया, जिनमें **क्षितिन्द्रनाथ मजूमदार** (जिनकी कृतियाँ 'रास-लीला' थीं) और **एम. आर. चुगतई** (जिन्हें 'राधिका' के लिए प्रसिद्धि मिली) शामिल थे।

रास-लीला

- यह एक जलरंग चित्र है जिसमें श्री कृष्ण के दिव्य जीवन को दर्शाया गया है। यह अवनीन्द्रनाथ टैगोर के शुरुआती विद्यार्थी क्षितिंद्रनाथ मजूमदार द्वारा बनाया गया है।
- ग्रामीण, दुबली-पतली आकृतियाँ, साधारण भाव-भंगिमाएँ, रमणीय संरचना और कोमल जलरंग उनकी शैलीगत विशेषताओं को व्यक्त करते हैं।
- चित्र में कृष्ण को राधा और सखियों के साथ भागवत पुराण और गीत गोविंद से प्रेरित एक गाँव की पृष्ठभूमि के बीच नृत्य करते हुए दिखाया गया है।
- यह चित्र अपनी सरल, प्रवाहपूर्ण रेखाओं और मनुष्य एवं भगवान के समान स्तर पर चित्रण के लिए उल्लेखनीय, मजूमदार के भक्ति मार्ग के प्रभाव को दर्शाता है।

चित्र 3.54: रास-लीला

राधिका

- मुहम्मद अब्दुल रहमान चुगतई (**1898-1975** ई.) ने वॉश और टेम्परा तकनीक का प्रयोग करते हुए कागज़ पर यह चित्र बनाया है।
- वह शाहजहाँ के मुख्य वास्तुकार उस्ताद अहमद के वंशज थे, जिन्होंने दिल्ली में जामा मस्जिद और लाल किला तथा आगरा का ताजमहल डिज़ाइन किया था। वह अवनीन्द्रनाथ टैगोर, गगनेंद्रनाथ टैगोर और नंदलाल बोस से प्रभावित थे।
- उन्होंने वॉश तकनीक में प्रयोग किए और मुगल पांडुलिपियों तथा पुराने फ़ारसी चित्रों में सुलेख की रेखाओं का प्रयोग किया।
- यह चित्र एक नाजुक वातावरण को दर्शाता है। इस चित्र में राधिका को एक जलते दीपक से दूर जाते हुए दिखाया गया है जहाँ पृष्ठभूमि का वातावरण उदासीन है।
- यह चित्र हिंदू पौराणिक कथाओं पर आधारित है। उन्होंने महान विभूतियों, लोक कथाओं, भारतीय-इस्लाम संबंधी और राजपूत तथा मुगल आदि सभी विषयों पर चित्र बनाए।

चित्र 3.55: राधिका

- उन्होंने राधिका नामक इस चित्र में पृष्ठभूमि की रोशनी और छाया प्रकाश का जो सरलीकरण किया है, उसका संयोजन इस चित्र को सुंदर बनाता है। वह चीनी और जापानी शैली से प्रभावित थे।

शांतिनिकेतन: प्रारंभिक आधुनिकतावाद

- **कला भवन** भारत का पहला राष्ट्रीय कला विद्यालय था, जिसकी स्थापना **शांतिनिकेतन में विश्वभारती विश्वविद्यालय के एक भाग के रूप में** कवि और दार्शनिक **रवींद्रनाथ टैगोर ने की थी।**

Search On TG: @apna_pdf

Join Telegram: @apna_library

- अवनीन्द्रनाथ टैगोर के शिष्य **नंदलाल बोस कला भवन में चित्रकला विभाग के प्रमुख थे।**
- उन्होंने शांतिनिकेतन में प्रचलित लोक कला रूपों से प्रेरणा लेकर और कला की भाषा पर जोर देकर एक भारतीय कलात्मक शैली विकसित की।

चित्र 3.56: नंदलाल बोस, ढाकी (हरिपुरा पोस्टर, 1937 ई.)

- शिक्षा में कला का उनका एकीकरण बंगाली प्राथमिक पुस्तकों के लिए उनके द्वारा लकड़ी काटकर बनाए गए चित्रों में स्पष्ट दिखाई देता है।

राष्ट्रवाद में नंदलाल बोस का योगदान

- **महात्मा गांधी ने बोस को हरिपुरा में वर्ष 1937 के कांग्रेस अधिवेशन** के लिए कला पैनल बनाने का काम सौंपा, जिसे **'हरिपुरा पोस्टर्स' के नाम से जाना जाता है।**
- इन पोस्टरों में ग्रामीण इलाकों के आम लोगों- संगीतकारों, किसानों, महिलाओं आदि, को विभिन्न गतिविधियों में संलग्न दिखाया गया है, जो राष्ट्र निर्माण में उनके योगदान का प्रतीक है। एक प्रसिद्ध चित्र में एक किसान को हल से खेत जोतते हुए दिखाया गया है।
- ये चित्र कला के माध्यम से समावेशी राष्ट्र निर्माण के गांधीवादी दृष्टिकोण से मेल खाते थे।

टिलर ऑफ द सॉयल

- यह चित्र 1938 ई. में कांग्रेस के हरिपुरा सम्मेलन के लिए नंदलाल बोस द्वारा बनाए गए पैनलों में से एक है।
- इस पट्टिका (पैनल) में एक किसान को खेत की जुताई करते हुए दिखाया गया है, एक गाँव में आम आदमी के दैनिक क्रियाकलापों का चित्रण किया गया है।
- बोस ने ग्रामीण जीवन के तत्त्वों या अनुभवों को दर्शाने के लिए स्थानीय ग्रामीणों या ग्रामवासियों का कलम और स्याही से चित्रण किया है, जिसमें उन्होंने गहरे टेम्परा से प्रभावशाली तिरछी रेखाओं के लिए चौड़े ब्रुश का प्रयोग किया है।
- इस तकनीक और शैली का प्रयोग 'पटुआ' लोक कला प्रथा की याद दिलाता है। लोक शैली का विशेष रूप से प्रयोजन, ग्रामीण जीवन दर्शाने के लिए किया गया है, साथ ही यह गांधीजी के ग्रामीण जीवन के राजनीतिक विचारों को भी प्रस्तुत करता है।

चित्र 3.57: टिलर ऑफ द सॉयल

जैमिनी रॉय

- जैमिनी रॉय ने अपने शैक्षणिक प्रशिक्षण के बाद ग्रामीण लोक कला की जीवंत और सरल शैली को अपनाया।
- उन्होंने अपने चित्रों का विषय ग्रामीण समाज की **महिलाओं और बच्चों** को बनाया। वह चाहते थे उनके चित्र सरल और स्पष्ट हों, ताकि वे व्यापक रूप से सामान्य जन-जीवन तक पहुँच सकें।

भारतीय और यूरोपीय कला के बीच जारी संघर्ष

- ब्रिटिश राज की कला नीति भारतीय और यूरोपीय कलात्मक संवेदनाओं के बीच चल रहे तनाव को प्रतिबिंबित करती थी।
- **बंबई स्कूल ऑफ आर्ट के कलाकारों को यथार्थवाद में प्रधानाचार्य ग्लेडस्टोन सोलोमन** द्वारा प्रशिक्षित किया गया था, उन्हें लुटियन की दिल्ली के लिए भित्ति-चित्र की सजावट का काम सौंपा गया था, जबकि बंगाल स्कूल के कलाकारों को ब्रिटिश के निरीक्षण में लंदन स्थित भारतीय भवन को सजाने के लिए नियुक्त किया गया था।

Search On TG: @apna_pdf

PW ONLYIAS BY PHYSICS WALLAH

Join Telegram: @apna_library

अखिल एशियावाद और आधुनिकतावाद

- औपनिवेशिक कला नीति ने यूरोपीय अकादमिक शैली के समर्थकों और भारतीय शैली के समर्थकों के बीच एक खाई पैदा कर दी।
- 1905 ई. के बंगाल विभाजन के बाद स्वदेशी आंदोलन अपने चरम पर पहुँच गया, जिसने कला के नजरिए को प्रभावित किया। प्रसिद्ध कला इतिहासकार **आनंद कुमारस्वामी ने स्वदेशी कला** के बारे में लिखा है।
- कलकत्ता में रवीन्द्रनाथ टैगोर से मिलने आए एक **जापानी राष्ट्रवादी "काकुज़ो ओकाकुरा"** ने अखिल-एशियावाद का विचार प्रस्तुत किया, जिसका उद्देश्य पश्चिमी साम्राज्यवाद के खिलाफ भारत को अन्य पूर्वी देशों के साथ एकजुट करना था।
- ओकाकुरा के साथ कलकत्ता आए दो जापानी कलाकारों ने शांतिनिकेतन में वॉश पेंटिंग सिखाई, जो पाश्चात्य तैल रंग के चित्रण का विकल्प था।

कला भवन की विरासत

कला भवन राष्ट्रवादी दृष्टिकोण वाले कलाकारों को बढ़ावा देने के केंद्र के रूप में उभरा। दक्षिण भारत के के. वेंकटप्पा जैसे इसके कई पूर्व विद्यार्थियों ने इसकी शिक्षाओं को पूरे देश में फैलाया। संस्था का उद्देश्य कला का लोकतंत्रीकरण करना था, जो केवल अभिजात वर्ग से परे व्यापक दर्शकों को लक्षित करता था।

चित्र 3.58: के. वेंकटप्पा पेंटिंग

भारत में आधुनिक यूरोपीय कला का आगमन

- 1922 एक ऐसा वर्ष है, जब जर्मनी के बाहौस स्कूल के पॉल क्ली और कैंडिंस्की जैसे कलाकारों की कलाकृतियों की एक प्रदर्शनी कलकत्ता में प्रदर्शित की गई थी।
- इन कलाकारों ने अकादमिक यथार्थवाद को अस्वीकार कर दिया तथा भारत में वर्ग, वृत्त और रंगीन पैच जैसे अमूर्त कला तत्त्वों को प्रस्तुत किया, जिससे देश का इस तरह की आधुनिक कला से पहली बार प्रत्यक्ष परिचय हुआ।

गगनेन्द्रनाथ टैगोर

- अवनीन्द्रनाथ टैगोर के भाई गगनेन्द्रनाथ टैगोर आधुनिक पश्चिमी कला शैली से प्रभावित थे।
- उनकी पेंटिंग्स में क्यूबिस्ट शैली का प्रदर्शन किया गया, जिसमें इमारतों के अंदरूनी हिस्से को ज्यामितीय शैली में दर्शाया गया है।
- इसके अतिरिक्त वे अपने कैरीकेचर (कार्टून) के लिए भी जाने जाते थे, जिनमें वे उन संपन्न बंगालियों की हास्यपूर्ण आलोचना करते थे, जो आँख मूँदकर यूरोपीय जीवन शैली को अपना लेते थे।

भारतीय चित्रकला में आधुनिकतावाद

चित्रकला में आधुनिकतावाद पर परिप्रेक्ष्य

- **बिनय सरकार,** जो एंग्लिसिस्टों से संबद्ध थे, यूरोपीय आधुनिकतावाद को प्रामाणिक और बंगाल स्कूल ऑफ आर्ट्स को प्रतिगामी मानते थे।
- इसके विपरीत **ई. बी. हैवेल** नामक अंग्रेज ने वास्तविक आधुनिक भारतीय कला के मार्ग के रूप में देशी कला की ओर वापसी की वकालत की। अवनीन्द्रनाथ टैगोर के साथ उनके सहयोग को इसी दृष्टिकोण से देखा जाता है।
- अमृता शेरगिल पश्चिमी और भारतीय कला दृष्टिकोण के सम्मिश्रण का उदाहरण हैं। बाहौस प्रदर्शनी में प्रदर्शित शैलियों से प्रेरणा लेते हुए, उन्होंने भारतीय परिदृश्यों को चित्रित किया।

चित्र 3.59: अमृता शेरगिल, ऊँट (1941 ई.)

भारत में आधुनिक कला: उपनिवेशवाद बनाम राष्ट्रवाद

- आधुनिक भारतीय कला ने औपनिवेशिक और राष्ट्रवादी प्रभावों के बीच तनाव से आकार ग्रहण किया। उपनिवेशवाद ने नवीन कला संस्थाओं की शुरुआत की, यथा- कला स्कूल, प्रदर्शनी दीर्घाएँ, पत्रिकाएँ और कला समाज।
- राष्ट्रवादी कलाकारों ने इन परिवर्तनों को अपनाते हुए कला में विशिष्ट भारतीय गुणों पर जोर दिया तथा कभी-कभी व्यापक एशियाई पहचान को भी अपनाया।
- अंतरराष्ट्रीयतावाद (पश्चिम के विचार ग्रहण करना) और स्वदेशीयता (भारतीय देशी विरासत और परंपराओं के प्रति समर्पित बने रहना) के बीच टकराव आधुनिक भारतीय कला की दिशा को लगातार प्रभावित करेगा।

Search On TG: @apna_pdf

Join Telegram: @apna_library

सिटी इन द नाइट

- यह जलरंग चित्र गगनेंद्रनाथ टैगोर द्वारा 1922 ई. में चित्रित किया गया था, जो उनकी घनवाद शैली को दर्शाता है। वह पहले ऐसे भारतीय कलाकार थे जिन्होंने भारतीय कला के परिदृश्य को ही परिवर्तित कर दिया।
- उन्होंने अपने चित्रों में आंतरिक भाव के उथल-पुथल को ज्यामितीय रूप में अंकित किया जो विश्लेषणात्मक घनवाद शैली के नाम से जाना जाता है, जिसमें मानव आकृति हो या रूपरेखा सभी को ज्यामितीय घनवाद में बनाया जाता है।
- उन्होंने अपने काल्पनिक कला जगत को विभिन्न दृष्टिकोणों से समझकर चित्रित किया, जैसे द्वारका (कृष्ण का काल्पनिक आवास) या स्वर्णपुरी। शहर और पर्वत के चित्रांकन में हीरे के समान चमकदार प्रकाश और प्रिज़्मीय रंगों का परस्पर समायोजन है।
- वे टेढ़ी-मेढ़ी आकृतियों से एक घनात्मक भाव उत्पन्न करने में सक्षम रहे। उनके चित्रों की रहस्यमयी कृत्रिम रोशनी तथा रंगमंच की विशेषताओं से यह स्पष्ट है, कि उन्होंने रवींद्रनाथ टैगोर के नाटक में रुचि लेने के साथ-साथ उसमें भागीदारी भी की।
- चित्रकार गगनेंद्रनाथ टैगोर ने अपने चित्रों में रंगमंच की सारी वस्तुओं की सजावट, स्क्रीन का विभाजन, कृत्रिम प्रकाश आदि के संदर्भ लिए हैं। अंतहीन गलियारे, खंभे, हॉल, आधे खुले दरवाजे, परदा, रोशनी वाली खिड़कियाँ, सीढ़ियाँ और दीवारें, एक जादू-भरी दुनिया का आभास कराते हैं।

चित्र 3.60: सिटी इन द नाइट

राम समुद्र का मद मर्दन करते हुए

- यह चित्र राजा रवि वर्मा द्वारा पौराणिक विषय (पौराणिक कहानियाँ) पर केंद्रित है। वह भारत के पहले कलाकार हैं, जिन्होने तैल रंग और लिथोग्राफ़ी तकनीक का प्रयोग करके पौराणिक विषयों के चित्र बनाए।
- यह दृश्य वाल्मीकि रामायण से लिया गया है जहाँ राम अपनी सेना के साथ समुद्र को पार करना चाहते हैं। इसके लिए वह समुद्र देव, वरुण से प्रार्थना करते हैं, लेकिन जब समुद्र देव ने कोई उत्तर नहीं दिया तब क्रोधित होकर राम ने वरुण देव को मारने के लिए अपना धनुष और बाण उठा लिया। तुरंत, वरुण देव प्रकट हुए और राम को शांत किया।
- इस शृंखला के प्रत्येक चित्र अगले चित्र की पृष्ठभूमि है जिनमें न केवल राम एवं सीता अपितु संपूर्ण महाकाव्य के प्रमुख विषय शामिल हैं।
- राजा रवि वर्मा के अन्य प्रमुख चित्रों में **अहिल्या की मुक्ति; राम का धनुष तोड़ना; सीता के विवाह से पहले; राम, सीता और लक्ष्मण सरयु को पार करते हुए; सीता हरण और जटायु; अशोक वाटिका में सीता; राम का तिलक** आदि शामिल हैं।

चित्र 3.61: राम समुद्र का मद मर्दन करते हुए

वुमन विद चाइल्ड

- जैमिनी रॉय को लोककला को भारतीय आधुनिक कला में एक पृथक पहचान देने के कारण **"लोककला के पुर्नजागरण का पिता"** कहा जाता है।
- 1920 के दशक के मध्य में उन्होंने बंगाल के ग्रामीण इलाकों में घूमकर वहाँ के लोक कलाकारों से उनकी कला सीखी।
- उन्होंने अपने चित्र 'मदर विद चाइल्ड' में बहुत ही साधारण रंगों द्वारा गतिपूर्ण रेखाओं का प्रयोग किया है, जो उनकी तूलिका के अभ्यास के साथ उनके साधारण भावनात्मक व्यक्तित्व को भी स्पष्ट करता है।
- उन्होंने चित्र की पृष्ठभूमि में धुँधला पीला और ईंट जैसे लाल रंग का प्रयोग किया है, जो उनके गाँव बाकुँरा मृण्य मूर्तियों का गेरू रंग था। इस द्वि-आयामी चित्र और उसे बड़े ही सरल ढंग से कपड़े पर बनाना उनकी स्वयं की खोज थी।
- जैमिनी रॉय ने बाल लयात्मकता, अलंकरण की स्पष्टता और चित्रों की संगीतमयता को दिखाया। चित्र बनाने की कला में पारंगत होने के लिए उन्होंने पहले कई एकरंगीय चित्र बनाए और तब जाकर उन्होंने टेम्परा पद्धति में प्रारंभिक सात रंगों का प्रयोग किया। उन्होंने सभी रंगों को जैविक सामग्री से बनाया, जैसे पत्थर के चूर्ण से स्लेटी रंग, हल्दी से पीला, पारा पाउडर से सफेद रंग, जलोढ़ मिट्टी से धुंधला पीला, नील से नीला और दूधिया आदि।
- ये सभी उन्हें आसानी से अपने आस-पास गाँव में ही मिल गए, जिन्हें पत्थर की धूल, मिट्टी, नील अथवा खड़िया से बनाया। उन्होंने अपने कैनवास घर पर ही बनाए जिसमें चित्र बनाने के लिए सबसे पहले काले एवं गाढ़े रंगों का प्रयोग कर रेखाचित्र बनाया। जैमिनी रॉय ने ग्रामीण विचारधारा के माध्यम से उपनिवेशवाद का विरोध किया एवं स्थानीय कला को गौण बनाया।

चित्र 3.62: माँ बच्चे के साथ (वुमन विद चाइल्ड)

Search On TG: @apna_library

PW ONLYIAS BY PHYSICS WALLAH

Join Telegram: @apna_library

यात्रा का अंत

चित्र 3.63: यात्रा का अंत (जर्नीस एंड)

- अवनीन्द्रनाथ टैगोर को भारत में राष्ट्रवादी और आधुनिक कला के जनक के रूप में देखा जाता है। उन्होंने भारतीय और प्राच्य परंपराओं के कुछ पहलुओं को पुनर्जीवित किया, विशेष रूप से विषय, शैली और तकनीक के रूप में वॉश चित्रण का आविष्कार किया।
- वॉश चित्रण तकनीक एक कोमल, धुँधली और प्रभाववादी परिदृश्य उत्पन्न करती है। धुलाई के कारण चित्रों में धुँधला और वायुमंडलीय प्रभाव उत्पन्न होता है, जिसका उपयोग जीवन के अंत को सांकेतिक रूप में दशनि के लिए किया जाता है।
- इस चित्र में एक थक कर बैठते हुए ऊँट को सूर्यास्त के लाल रंग की पृष्ठभूमि पर "यात्रा के अंत" को संध्या से सांकेतिक रूप से दर्शाया गया है। अवनीन्द्रनाथ ने एक तरफ अनुभव और कथन को प्रतीकात्मक सौंदर्य से प्रकट करने का प्रयास किया, वहीं दूसरी तरफ सुंदरता और साहित्य का गठजोड़ करने की चेष्टा की है।
- अवनीन्द्रनाथ द्वारा चित्रित अन्य चित्र - द फ़ॉरेस्ट, कमिंग ऑफ नाइट, माउंटेन ट्रैवलर, क्वीन ऑफ़ द फ़ॉरेस्ट और अरेबियन नाइट्स पर आधारित 45 चित्रों की एक शृंखला हैं।

निष्कर्ष

भारतीय कला के समृद्ध इतिहास की जड़ें मुगल लघुचित्रों और राजस्थानी चित्रों के जटिल विवरणों से जुड़ी हैं। भव्यता और विवरण पर बल देने वाली इन प्राचीन शैलियों ने राजा रवि वर्मा जैसे कलाकारों के लिए भारतीय विषयों को यूरोपीय तकनीकों के साथ मिश्रित करने की नींव रखी। बाद में "बंगाल स्कूल ऑफ आर्ट" ने एक राष्ट्रवादी भावना को प्रज्वलित किया, जिसमें स्वदेशी शैलियों की वापसी पर बल दिया गया। जैमिनी रॉय और गगनेंद्रनाथ टैगोर जैसे आधुनिक कलाकारों ने इन परंपराओं के भीतर और भी नवाचार किए। स्पष्ट है कि प्रत्येक युग में भारतीय कला ने अतीत को वर्तमान के साथ बेहतरीन ढंग से मिलाया है, जिससे इसका कालातीत आकर्षण और सांस्कृतिक महत्त्व सुनिश्चित हुआ है।

महत्त्वपूर्ण शब्दावलियाँ

- **कंपनी चित्रकला:** यह चित्रकला की एक शैली है, जो भारत में ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन के दौरान उभरी, जहाँ भारतीय कलाकारों ने अंग्रेजों की रुचि के अनुसार अपने पारंपरिक तरीकों को अपनाया। इस शैली में अक्सर स्थानीय लोगों, वनस्पतियों, जीवों और रीति-रिवाजों का प्रलेखन किया जाता था।
- **राजा रवि वर्मा:** एक उल्लेखनीय भारतीय चित्रकार, जिन्होंने यूरोपीय अकादमिक कला तकनीकों को भारतीय विषयों, विशेष रूप से रामायण और महाभारत के दृश्यों के साथ जोड़ा।
- **बंगाल स्कूल ऑफ आर्ट:** स्वदेशी आंदोलन के दौरान कलकत्ता में उत्पन्न एक कला आंदोलन और शैली, जिसने मुगल और पहाड़ी लघुचित्रों से प्रेरणा लेते हुए भारतीय शैलियों और विषयों पर जोर दिया।
- **अवनीन्द्रनाथ टैगोर:** बंगाल स्कूल ऑफ आर्ट में एक महत्त्वपूर्ण व्यक्ति, जिन्होंने ई. बी. हैवेल के साथ मिलकर पारंपरिक भारतीय कला शैलियों को बढ़ावा दिया।
- **शांतिनिकेतन:** भारत के पहले राष्ट्रीय कला विद्यालय का स्थान, जिसकी स्थापना रवींद्रनाथ टैगोर ने विश्वभारती विश्वविद्यालय के भाग के रूप में की थी।
- **अखिल एशियावाद:** पश्चिमी साम्राज्यवाद के खिलाफ एशिया के देशों को एकजुट करने की कोशिश करने वाला एक सांस्कृतिक और राजनीतिक आंदोलन।
- **घनवाद (क्यूबिज्म):** 20वीं सदी की शुरुआत की एक कला शैली जो विषय को ज्यामितीय आकृतियों में विभाजित करती थी, जिससे कला के एक साथ कई दृष्टिकोण मिलते थे।
- **रागमाला चित्र:** 'राग' नामक विभिन्न भारतीय संगीत विधाओं को दर्शाते लघु चित्र।
- **पौराणिक विषय:** पुराणों के नाम से जाने जाने वाले प्राचीन भारतीय ग्रंथों से प्राप्त विषय, जिनमें देवताओं, किंवदंतियों और परंपराओं की कहानियाँ शामिल हैं।
- **वॉश तकनीक:** एक पेंटिंग विधि, जिसमें पतला पेंट इस तरह लगाया जाता है कि वह पारदर्शी और चिकना दिखाई दे।
- **गौचे:** पानी में मिले हुए अपारदर्शी पिगमेंट का उपयोग करके पेंटिंग करने की एक विधि, जिसे गोंद जैसे पदार्थ से गाढ़ा किया जाता है।

Search on TG: @apna_pdf

Join Telegram: @apna_library

4 भारत की जीवंत कला परंपराएँ

संदर्भ: इस अध्याय में NCERT पाठ्यपुस्तक की कक्षा-XII (भारतीय कला का परिचय: भाग-II) के अध्याय-8 का सारांश शामिल है।

परिचय

भारत देश प्रारंभ से ही स्वदेशी ज्ञान का भंडार रहा है, जो एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तांतरित होता रहा है। प्रत्येक पीढ़ी के कलाकारों ने उपलब्ध सामग्री और तकनीक से सर्वश्रेष्ठ कलाकृतियों का निर्माण किया है। असंख्य विद्वानों ने इन कला रूपों को **लघु कला, उपयोगिता कला, लोक कला, जनजातीय कला, जन-साधारण कला, संस्कार कला, शिल्प** आदि नाम दिए हैं। यहाँ पूर्व-ऐतिहासिक काल के भित्ति-चित्र या सिंधु घाटी सभ्यता के मिट्टी के बर्तन, टेराकोटा, कांस्य, हाथी दाँत की कलाकृतियों आदि के उत्कृष्ट उदाहरण देखने को मिलते हैं। भारत में, स्वतंत्रता के बाद हस्तशिल्प उद्योग का पुनरुद्धार हुआ। भारत की कला और शिल्प परंपराएँ पाँच हज़ार से अधिक वर्षों के इतिहास के साथ देश की मूर्त विरासत को प्रदर्शित करती हैं।

विचारणीय बिंदु

भारत में लोक चित्रकला संस्कृति अपनी तकनीक, रंगों और विषयों में बहुत विविधतापूर्ण है। इसने विभिन्न जनजातियों और इलाकों की पारंपरिक संस्कृति को प्रतिबिंबित किया है। क्या आपको लगता है, कि ये लोक चित्रकलाएँ उस समय की प्रमुख चित्रकला परंपराओं से भी प्रभावित थीं? साथ ही, क्या वे अपनी विशिष्टता को बनाए रखने में सक्षम हैं?

भारत में चित्रकला

- चित्रकला सौंदर्यबोध की अभिव्यक्ति है, जो दीवारों और फर्श को सजाने तथा दैनिक आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए कई अन्य कलात्मक कार्य करने हेतु बनाई जाती है।
- इन्हें बर्तन और कपड़ों, आभूषण और संस्कार या मन्नत की मूर्तियों पर बनाया जाता है। इसमें प्रतीकात्मकता, रूपांकन का विशेष उपयोग, सामग्रियों, रंग आदि को बनाने की विधियों का विशिष्ट उपयोग होता है।

चित्रकला के प्रकार

प्राचीन काल में विभिन्न क्षेत्रों में अनेक प्रकार की चित्रकला विकसित हुई। चित्रकला की अनेक प्रचलित परंपराओं में बिहार की मिथिला या मधुबनी पेंटिंग, महाराष्ट्र की वर्ली पेंटिंग, उत्तरी गुजरात और पश्चिमी मध्य प्रदेश की पिथोरा पेंटिंग, राजस्थान की पाबूजी की फड़ पेंटिंग, नाथद्वारा की पिछवाई, मध्य प्रदेश की गोंड और सांवरा पेंटिंग, ओडिशा और बंगाल की पटचित्र आदि इसके कुछ प्रमुख उदाहरण हैं। यहाँ उनमें से कुछ पर विस्तारपूर्वक चर्चा की गई है।

मिथिला चित्रकला

- इसका नामकरण प्राचीन विदेह और सीता की जन्मस्थली मिथिला के नाम पर आधारित है। इसे **मधुबनी पेंटिंग** भी कहा जाता है। यह एक व्यापक रूप से मान्यता प्राप्त लोक कला परंपरा है। इस कला की उत्पत्ति राजकुमारी सीता और भगवान राम के विवाह के समय से मानी जाती है।
- **चमकीले रंगों** की विशेषता वाले इन चित्रों को मुख्य रूप से घर के तीन क्षेत्रों में चित्रित किया जाता है - केंद्रीय या बाहरी आँगन, घर का पूर्वी भाग (जो कुलदेवी, आमतौर पर काली का निवास स्थान है) तथा घर के दक्षिणी भाग में एक कमरा, जिसमें सबसे महत्त्वपूर्ण चित्र का चित्रण किया जाता है।
- भीतर के बरामदे में, जहाँ पारिवारिक मंदिर **देवस्थान या गोसाईं का स्थान है, वहाँ गृह देवता और कुल देवता का** चित्रण किया जाता है।
- सबसे असाधारण और रंगीन चित्रकारी घर के उस हिस्से में की जाती है जिसे **कोहबर घर या भीतरी कमरा के नाम से जाना जाता है,** जहाँ कमरे के नए पलस्तर वाली दीवारों पर एक संपूर्ण खिला हुआ कमल अपने डंठल के साथ दीवारों पर चित्रित किया जाता है। इसके साथ ही देवी-देवताओं का भी चित्रण किया जाता है।

Search On TG: @apna_pdf

Join Telegram: @apna_library

चित्र 4.1: मिथिला चित्रकला

- अन्य विषयो में भागवत पुराण, रामायण, शिव-पार्वती, दुर्गा, काली और राधा-कृष्ण की रासलीला के प्रसंग भी चित्रित किए जाते हैं।
- मिथिला कलाकारों को **रिक्त स्थान पसंद नहीं है**। वे पूरे स्थान को पक्षी, पुष्प, मछली, साँप, सूर्य और चंद्रमा जैसे प्राकृतिक तत्त्वों से भर देते हैं, जिनका अक्सर प्रतीकात्मक अर्थ होता है, जो प्रेम, समर्पण, उर्वरता, अनंत काल, कल्याण और समृद्धि को दर्शाता है।

वर्ली चित्रकला

- यह चित्रकारी वर्ली समुदाय द्वारा की जाती है, जो **उत्तरी महाराष्ट्र में** उत्तरी सह्याद्री पर्वतमाला के आस-पास निवास करते हैं। विवाहित महिलाएँ विशेष अवसरों पर **चौक** नामक अपनी सबसे महत्त्वपूर्ण चित्रकला बनाने में केंद्रीय भूमिका निभाती हैं।
- यह चित्रकला विवाह, प्रजनन, फसल और बुवाई-कटाई के रीति-रिवाजों से संबंधित है। चौक देवी माँ **पालघाट की आकृति** पर आधारित होती है, जिसे मुख्य रूप से प्रजनन की देवी के रूप में पूजा जाता है जो मकई की देवी **कंसारी का** प्रतिनिधित्व करती है।
- कंसारी देवी को एक छोटे से चौकोर फ्रेम में लगाया जाता है जिसके बाहरी किनारों को **'नुकीले' कड़ी (शेवरॉन)** से सजाया जाता है, **जो हरियाली देवता अर्थात् पौधों के देवता का प्रतीक है।**

चित्र 4.2: वर्ली चित्रकला

Search pna_pdf

Join Telegram: @apna_library

- कंसारी देवी के प्रहरी और संरक्षक की कल्पना एक बिना सिर वाले योद्धा के रूप में की जाती है, जो घोड़े पर सवार होते हैं या उनकी बगल में खड़े होते हैं और उनकी गर्दन से मकई के पाँच पौधे उगते हुए चित्रण किया जाता है, इसलिए इन्हें **पंच सिर्या देवता (पाँच सिर वाले देवता) कहा जाता है।** यह **खेत्रपाल या** खेतों के संरक्षक का भी प्रतीक माना जाता है।
- पालघाट के चित्रों का केंद्रीय विषय **रोजमर्रा के जीवन के दृश्यों** से घिरा हुआ है, जिसमें शिकार, मछली पकड़ना, कृषि, नृत्य, पौराणिक कहानियों के किरदार, जहाँ बाघ स्पष्ट रूप से दिखाई देता है, बसों के दृश्य और मुंबई के व्यस्त शहरी जीवन को दर्शाया गया है, जैसा कि वर्ली के लोग अपने आस-पास देखते हैं।
- इन चित्रों को पारंपरिक रूप से **चावल के आटे से** अपने घरों की मिट्टी के रंग की दीवारों पर चित्रित किया जाता है। **बीमारियों को दूर करने,** मृतकों को संतुष्ट करने और पूर्वजों की इच्छाओं को पूरा करने के लिए इनका चित्रण किया जाता है। एक बाँस की छड़ी के एक सिरे को चबाकर तूलिका (पेंटब्रश) के रूप में उपयोग किया जाता है।

गोंड चित्रकला

- मंडला के गोंड और उसके आस-पास के क्षेत्रों में पशु, मनुष्य और वनस्पतियों के रंगीन चित्रों का चित्रण किया जाता है।
- ये झोपड़ियों की दीवारों पर बनाए गए **ज्यामितीय चित्र हैं, जिनमें कृष्ण को गायों तथा** गोपियों से घिरा हुआ चित्रित किया जाता है। इनमें गोपियों के सिर पर घड़ा होता है, जिसे बालक एवं बालिकाएँ कृष्ण को भेंट कर रहे होते हैं।

चित्र 4.3: गोंड चित्रकला

पिथोरा चित्रकला

- **गुजरात में पंचमहल क्षेत्र के** राठवा भीलों द्वारा तथा **मध्य प्रदेश में झाबुआ में** चित्रित **इन चित्रों को** घरों की दीवारों पर विशेष अवसर या **धन्यवाद उत्सवों** पर चित्रित किया जाता है।

चित्र 4.4: पिथोरा चित्रकला

- ये बड़े भित्ति-चित्र हैं, जिनमें पंक्तियों में कई भव्य रंगीन देवताओं को **घोड़े पर सवार दिखाया जाता है।**
- घोड़े पर सवार देवताओं की पंक्तियाँ, राठवाओं के ब्रह्मांड का प्रतिनिधित्व करती हैं। सबसे ऊपर घुड़सवार **देवताओं का खंड, आकाशीय पिंडों और पौराणिक प्राणियों की दुनिया को दर्शाता है।**

क्या आप जानते हैं?

पटुआ, जिन्हें चित्रकार भी कहा जाता है, मुख्य रूप से पश्चिम बंगाल के मिदनापुर, बीरभूम और बांकुरा क्षेत्रों, बिहार और झारखंड के कुछ हिस्सों में बसे समुदायों से संबंधित हैं।

Search On TG: @apna_pdf

PW ONLYIAS BY PHYSICS WALLAH

Join Telegram: @apna_library

- एक **अलंकृत लहरदार रेखा** इस खंड को निचले खंड से अलग करती है, जहाँ पिथोरा के विवाह की बारात जिसमें गौण देवता, राजा, भाग्य की देवी, आदर्श किसान, घरेलू पशु आदि को पृथ्वी पर दर्शाया जाता है।

पट चित्रकला

यह आमतौर पर कपड़े, ताड़ के पत्ते या कागज़ पर की जाने वाली चित्रकला है। पटचित्र या स्क्रॉल पेंटिंग देश के विभिन्न हिस्सों में प्रचलित कला का एक प्रमुख उदाहरण है, जो मुख्य रूप से **पश्चिम में गुजरात और राजस्थान** तथा **पूर्व में ओडिशा और पश्चिम बंगाल में की जाती है। इसे पट, पचेड़ी, फड़** आदि के नाम से भी जाना जाता है।

बंगाल पट

- बंगाल के पट में **कपड़े (पट) पर** चित्रकारी होती है, जो पश्चिम बंगाल के क्षेत्रों में **कहानी सुनाने** की परंपरा है। **कहानी सुनाना** सबसे अधिक ग्रहणशील **मौखिक परंपरा है,** जो लगातार नए विषयों की और दुनिया में प्रमुख घटनाओं पर प्रतिक्रियाएँ प्रस्तुत करती है।

चित्र 4.5: बंगाल पट

- लंबवत चित्रित पट, **पटुआ (कलाकार) द्वारा** पट चित्रकला में प्रयोग किया जाता है।
- पटों को संभालना उनका **वंशानुगत व्यवसाय है।** वे गाँवों में घूमते हैं, चित्रों को प्रदर्शित करते हैं और चित्रित किए गए आख्यानों को गाते हैं। प्रदर्शन गाँव के साझा (या सामान्य) स्थानों पर होते हैं। पटुआ हर बार **तीन से चार कहानियाँ** सुनाता है। प्रदर्शन के बाद, पटुआ को नकद या वस्तु के रूप में भिक्षा या उपहार दिए जाते हैं।

पुरी पट या चित्रकला

- इसे ओडिशा के **मंदिरों के शहर पुरी से पहचान मिली है।** इसमें शुरुआत में मुख्यतः पट पर चित्रण किया जाता था, लेकिन अब कागज पर भी चित्रण किया जाता है।
- **पुरी पट के विषय**
  - **जगन्नाथ, बलभद्र और सुभद्रा** के दैनिक और विशेष अवसरों की **वेशभूषा (पोशाक)।**
  - **रस चित्र, अंसारा पट्टी** (गर्भगृह के देवी-देवताओं का प्रतीकात्मक चित्रण, जिन्हें सफाई और स्नान यात्रा के समय नई रंगाई के लिए हटाया जाता है)।
  - **जात्री पट्टी** (तीर्थयात्रियों के लिए यादगार के रूप में और उन्हें घर के व्यक्तिगत मंदिरों में रखने के लिए)।
  - जगन्नाथ की पौराणिक कथाओं से संबंधित प्रसंग, जैसे- **काँची कावेरी पट।**
  - **थिया-बड़हिया पट,** मंदिर के हवाई और पार्श्व दृश्यों के संयोजन के साथ देवी-देवताओं और मंदिर के आस-पास त्योहारों का चित्रण किया जाता है।

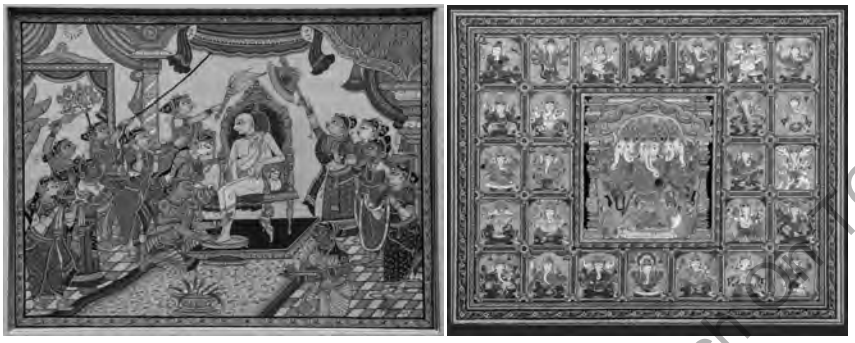

चित्र 4.6: बंगाल पट

Search on TG: @apna_pdf

Join Telegram: @apna_library

पटचित्र चित्रकला

- ये चित्रकारी सूती कपड़े की छोटी-छोटी पट्टियों पर की जाती है, जिसे मुलायम सफेद पत्थर के पाउडर और इमली के बीजों से बने गोंद से लेपित करके तैयार किया जाता है।
- **सबसे पहले किनारों को** बनाने की प्रथा है। फिर, ब्रश से सीधे आकृतियों की संरचना की जाती है और सपाट रंग भरे जाते हैं। सामान्यतः सफेद, काला, पीला और लाल रंगों का प्रयोग किया जाता है।

क्या आप जानते हैं?

राजस्थान के भीलवाड़ा के समुदायों के लिए पशुधन बहुत महत्त्वपूर्ण है, इसलिए वे उन देवताओं की पूजा करते हैं जो पशु नायक हैं, जो वीर हैं जिन्होंने समुदाय के मवेशियों को लुटेरों से बचाते हुए अपने प्राणों की आहुति दे दी।

- चित्रण पूरा होने के बाद, चित्र को कोयले की आग के ऊपर रखा जाता है और सतह पर लाह को लगाया जाता है, जिससे चित्र जलरोधी बनाया जा सके और इसमें चमक लाई जा सके।
- ये रंग **जैविक और स्थानीय रूप से** प्राप्त किए जाते हैं। उदाहरण के लिए, काला रंग दीप कालिख से, पीला और लाल रंग क्रमशः हरिताली और हिंगल पत्थर से तथा सफेद रंग शंख के चूर्ण से प्राप्त किया जाता है।
- ताड़ की पांडुलिपियों को एक विशेष प्रकार के ताड़, जिसे **खर-ताड़** के नाम से जाना जाता है, पर चित्रित किया जाता है। इन पर चित्रकारी **ब्रश से नहीं की जाती है** बल्कि लोहे की कलम से आकृतियों को उकेरा जाता है, फिर स्याही से भरा जाता है और कभी-कभी इनमें रंगों को भी भरा जाता है।

फड़ चित्रकला

- फड़ लंबे, क्षैतिज, कपड़े के पटचित्र होते हैं, जिस पर **राजस्थान के भीलवाड़ा** के आस-पास के क्षेत्र में रहने वाले पशुपालक समुदायों के लोग लोक देवता का चित्रण करते हैं।
- इन लोक देवताओं को **'भोमिया'** कहा जाता है। इन नायकों को उनकी शहादत के कार्यों के लिए सम्मानित, पूजा और याद किया जाता है।
- फड़ को **भोमिया देवताओं** की वीरतापूर्ण कहानियों को दर्शाते हुए, **भोपा अर्थात् भ्रमणशील भाट** पूरे क्षेत्र में भ्रमण करते हैं तथा इन्हें प्रदर्शित करते हुए रात भर चलने वाले कथा-प्रदर्शनों में इन वीर देवताओं से संबंधित कहानियाँ सुनाते हैं तथा भक्ति गीत गाते हैं।
- जिन चित्रों के बारे में बात की जा रही होती है, उन्हें रोशन करने के लिए फड़ के सामने एक दीपक से प्रकाश किया जाता है। भोपा और उनके साथी रावणहत्था और वीणा जैसे वाद्य यंत्रों के साथ प्रस्तुति करते हैं और गायन की ख्याल शैली का गान करते हैं।

चित्र 4.7: फड़ चित्रकला

- **समुदाय फड़ और फड़ बंचन के** माध्यम से नायक को शहीद के रूप में याद करता है और उसके आख्यान को जीवित रखता है। हालाँकि, फड़ **भोपों द्वारा चित्रित नहीं किए जाते हैं।**
- उन्हें पारंपरिक रूप से **'जोशी'** नामक जाति द्वारा चित्रित किया जाता रहा है, जो राजस्थान के राजाओं के दरबार में चित्रकार होते थे। राज दरबार इन चित्रकारों को लघुचित्रों के निर्माण के लिए संरक्षण प्रदान करते थे, इसलिए कुशल व्यवसायी संघ, भाट संगीतकार और दरबारी कलाकार फड़ को अन्य समान सांस्कृतिक परंपराओं की तुलना में उच्च स्थान प्रदान करते हैं।

Search on TG: @apna_pdf

ONLYIAS BY PHYSICS WALLAH

Join Telegram: @apna_library

मूर्तिकला परंपरा

मूर्तिकला परंपरा मिट्टी (टेराकोटा), धातु और पत्थर से मूर्तियाँ बनाने की लोकप्रिय परंपराओं से संबंधित है। देश भर में ऐसी अनेक लोक कला परंपराएँ हैं, जिनमें से कुछ पर यहाँ चर्चा की गई है:

विचारणीय बिंदु

बस्तर के धातु शिल्पकारों को 'घड़वा' कहा जाता है। प्रचलित व्युत्पत्ति में 'घड़वा' शब्दका अर्थ है- आकार देने और निर्माण करने का कार्य।

ढोकरा कास्टिंग

- ढोकरा या धातु की मूर्तियाँ, जो **मोम या सेरे पर्दु तकनीक से बनाई जाती हैं,** छत्तीसगढ़ के बस्तर, मध्य प्रदेश के कुछ हिस्सों, ओडिशा और पश्चिम बंगाल के मिदनापुर के सबसे प्रमुख धातु शिल्पों में से एक हैं।
- ढोकरा ढलाई एक जटिल प्रक्रिया है। इसमें पिघला हुआ मोम विधि के माध्यम से कांस्य की ढलाई की जाती है। नदी के किनारे की काली मिट्टी को चावल की भूसी के साथ मिलाकर पानी से गूंथ लिया जाता है। इससे मुख्य आकृति या साँचा बनाया जाता है। सूखने के बाद इस पर गोबर में मिट्टी मिलाकर इसे दूसरी परत से ढक दिया जाता है।
- साल के पेड़ से एकत्रित राल को तब तक मिट्टी के बर्तन में गर्म किया जाता है, जब तक कि वह तरल न हो जाए, फिर उसमें सरसों का तेल मिलाया जाता है।
- उबलते तरल को जमने दिया जाता है लेकिन यह नरम और मुलायम बना रहता है। फिर इसे छोटे-छोटे टुकड़ों में अलग कर दिया जाता है, कोयले की धीमी आँच पर इन्हें थोड़ा गर्म किया जाता है और फिर बारीक **धागे या कुंडल में फैलाया जाता है।**

चित्र 4.8: ढोकरा कास्टिंग

- ऐसे धागों को आपस में जोड़कर **पट्टियाँ बनाई जाती हैं।** फिर, सूखी मिट्टी के आकार के ऊपर इन राल की पट्टियों या कुंडल को मढ़ा या जोड़ा जाता है और सभी आंगिक विवरण जैसे- आँखें, नाक आदि को आकृति के साथ बनाया जाता है।
- इसके बाद मिट्टी के साँचे को कई परतों से ढक दिया जाता है, सबसे पहले बारीक मिट्टी से, फिर मिट्टी और गाय के गोबर के मिश्रण से तथा अंत में चावल की भूसी के साथ चींटियों के टीलों से प्राप्त मिट्टी से।
- तत्पश्चात पिघली हुई धातु को उस स्थान पर डाला जाता है जहाँ पहले राल था, जो अब तक वाष्पित हो चुका होगा। साँचे को ठंडा होने के लिए छोड़ दिया जाता है और धातु की मूर्ति को प्राप्त करने के लिए मिट्टी की परत को हथौड़े से तोड़ दिया जाता है।

टेरकोटा (मृण्मूर्ति)

- आमतौर पर कुम्हारों द्वारा बनाए गए टेराकोटा या मृण्मूर्ति इच्छाओं की पूर्ति पर स्थानीय देवताओं को चढ़ाए जाते हैं या अनुष्ठानों और त्योहारों के दौरान उपयोग किए जाते हैं।
- इन्हें नदी के किनारे या तालाबों पर पाई जाने वाली **स्थानीय मिट्टी से बनाया जाता है।** टेराकोटा को स्थायित्व के लिए पकाया जाता है।
- भारत में प्रत्येक स्थान पर यथा- पूर्वोत्तर में मणिपुर या असम, पश्चिमी भारत में कच्छ, दक्षिण में तमिलनाडु, गंगा के मैदान या मध्य भारत आदि में विभिन्न क्षेत्रों के लोगों द्वारा बनाई गई टेराकोटा की विविधता देखने को मिलती है।

Search On TG: @apna_pdf

Join Telegram: @apna_library

चित्र 4.9: मृण्मूर्ति या टेराकोटा कला

- इन्हें हाथ से ढाला जाता है या कुम्हार के चाक पर बनाया जाता है, तत्पश्चात रंगा और सजाया जाता है।
- इनके रूप ओर उद्देश्य प्रायः समान होते हैं। ये प्रायः **देवी या देवताओं** की आकृतियाँ होती हैं।

निष्कर्ष

भारत में लोक चित्रकला एक जीवंत और विविध कलात्मक परंपरा है, जो देश की समृद्ध सांस्कृतिक विरासत और इसके लोगों की रचनात्मकता को दर्शाती है। स्थानीय रीति-रिवाजों, पौराणिक आख्यानों और परंपराओं पर आधारित ये चित्र, भारत की विविध संस्कृतियों तथा कहानियों की झलक प्रस्तुत करते हैं। बिहार की जटिल मधुबनी पेंटिंग से लेकर महाराष्ट्र की रंगीन वर्ली कला तक, इन लोक चित्रकलाओं ने न केवल सदियों पुरानी परंपराओं को संरक्षित किया है, बल्कि ये समकालीन समय के अनुकूल विकसित भी हुई हैं।

महत्त्वपूर्ण शब्दावलियाँ

- **मिथिला चित्रकला:** इसे मधुबनी पेंटिंग के नाम से भी जाना जाता है। इन चित्रों की विशेषता है - चमकदार रंग, कोई रिक्त स्थान नहीं और पूरी जगह को पक्षियों, फूलों, पशु, मछलियों और सर्प जैसे प्राकृतिक तत्त्वों से सजाना। यह मिथिला (बिहार) क्षेत्र की एक प्रसिद्ध कला है।
- **वर्ली चित्रकला:** यह चित्रकारी वर्ली समुदाय द्वारा की जाती है, जो **उत्तरी महाराष्ट्र में** उत्तरी सह्याद्री पर्वतमाला के आस-पास निवास करते हैं।
- **गोंड चित्रकला:** यह चित्रकारी मध्य प्रदेश के गोंड समुदाय द्वारा की जाती है। गोंड समुदाय की एक समृद्ध परंपरा है, जो मध्य भारत पर शासन करते थे और प्रकृति की पूजा करते थे।
- **पिथोरा चित्रकला:** गुजरात के पंचमहल क्षेत्र और पड़ोसी राज्य मध्य प्रदेश के झाबुआ के राठवा भीलों द्वारा चित्रित, यह चित्रकला विशेष अवसरों या इच्छाओं की पूर्ति आदि होने पर घरों की दीवारों पर बनाए जाते हैं।
- **पट चित्रकला:** पट चित्र कपड़े, ताड़ के पत्ते या कागज पर बनाए जाते हैं। यह चित्रकला पश्चिम में गुजरात और राजस्थान तथा पूर्व में ओडिशा (पुरी पट) एवं पश्चिम बंगाल (बंगाल पट) के क्षेत्रों में प्रचलित है।
- **फड़ चित्रकला:** फड़ लंबे, क्षैतिज, कपड़े के बने चित्र होते हैं, जो राजस्थान के भीलवाड़ा क्षेत्र के आस-पास रहने वाले पशुपालक समुदायों के लोक देवताओं (पशु नायकों) के सम्मान में चित्रित किए जाते हैं।
- **ढोकरा कास्टिंग:** ये धातु की मूर्तियाँ होती हैं, जो पिघले हुए **मोम या सेरे पर्दु तकनीक से बनाई जाती हैं।** यह छत्तीसगढ़, मध्य प्रदेश, ओडिशा और पश्चिम बंगाल के मिदनापुर के क्षेत्रों में प्रचलित हैं।
- **टेराकोटा:** ये **स्थानीय मिट्टी से बने होते हैं,** टेराकोटा **इच्छापूर्ति के प्रतीक होते हैं, जिन्हें** स्थानीय देवताओं को चढ़ाया जाता है या अनुष्ठानों एवं त्योहारों के दौरान उपयोग किया जाता है।
- **भित्ति-चित्र:** दीवार, छत या किसी अन्य बड़ी द्वि-आयामी सतह पर सीधे बनाई गई कलाकृति। यह कला के सबसे पुराने स्वरूपों में से एक है, जिसका इतिहास प्रागैतिहासिक गुफाओं से जुड़ा है।
- **लिनोकट:** यह उभरे मुद्रण की प्रक्रिया है, जिसमें लिनोलियम की एक पतली परत का उपयोग किया जाता है (इसे लकड़ी के ब्लॉक पर भी लगाया जा सकता है), इसे काटना आसान है क्योंकि यह एक कोमल पदार्थ है।
- **फोलियो (Folio):** कागज या चर्मपत्र का एक अलग पन्ना, जो या तो शृंखला के एक भाग के रूप में होता है या किसी खण्ड का भाग होता है, जिस पर केवल मुख पृष्ठ पर ही संख्या अंकित होती है।

Search On TG: @apna_pdf

ONLYIAS BY PHYSICS WALLAH

Join Telegram: @apna_library

5 आधुनिक भारतीय कला

संदर्भ: इस अध्याय में NCERT पाठ्यपुस्तक की कक्षा-XII (भारतीय कला का परिचय: भाग-II) के अध्याय-7 का सारांश शामिल है।

परिचय

19वीं शताब्दी में अंग्रेजों द्वारा ललित कला को यूरोपीय रूप में देखा गया तथा उन्होंने अनुभव किया कि भारतीयों के पास कलात्मक संवेदना नहीं है। प्रमुख भारतीय शहरों में कला विद्यालय स्थापित किए गए, जो पारंपरिक शिल्प और विक्टोरियन-प्रवृत्ति की अकादमिक कला को बढ़ावा देते थे। **अवनीन्द्रनाथ टैगोर** और **ई. बी. हैवेल** द्वारा विकसित **"बंगाल स्कूल ऑफ आर्ट"** इस औपनिवेशिक पूर्वाग्रह के खिलाफ राष्ट्रवादी कला का एक प्रमुख उदाहरण बनकर उभरा। भारत का पहला राष्ट्रवादी कला विद्यालय **"कला भवन" वर्ष 1919** में रवींद्रनाथ टैगोर के "विश्वभारती विश्वविद्यालय" के भाग के रूप में स्थापित किया गया था। प्रथम विश्व युद्ध की पृष्ठभूमि में भारतीय कलाकार पत्रिकाओं के माध्यम से आधुनिक यूरोपीय कला से प्रभावित हुए, जिससे अमूर्तता की ओर झुकाव हुआ और यह विश्वास पैदा हुआ कि कला रूप, रेखाओं और रंगों के प्रयोग से अपनी दुनिया का सृजन कर सकती है।

भारतीय कला में आधुनिकता का परिचय

- आधुनिक भारतीय कला विभिन्न गतिशील बदलावों और प्रभावों के माध्यम से विकसित हुई है, जो विशिष्ट कलात्मक परिवर्तनों से चिह्नित है।
- **1930 के दशक के राष्ट्रवादी संघर्ष** के दौरान इसकी शुरुआत हुई, जब कलाकारों ने स्वतंत्रता के लिए कार्यरत राष्ट्र की भावना को व्यक्त करने का प्रयास किया।
- इस युग के दौरान आकृतिमूलक कला कहानी कहने के एक सशक्त माध्यम के रूप में उभरी, जिसमें भारतीय अनुभव को बयान करने के लिए स्वदेशी परंपराओं और लोक कथाओं का सहारा लिया गया।

विचारणीय बिंदु

आपके विचार में राष्ट्रवादी संघर्ष के दौरान भारतीय और पश्चिमी कलात्मक प्रभावों के सम्मिश्रण ने एक अद्वितीय और विशिष्ट आधुनिक भारतीय कला के विकास में किस प्रकार योगदान दिया; साथ ही क्या आप यह भी बता सकते हैं कि यह कला उस समय के सामाजिक- सांस्कृतिक तथा राजनीतिक संबंधों को किस प्रकार प्रतिबिंबित करती है?

- कला जगत ने **आकृतिमूलक कला और आधुनिक कला की ओर एक परिवर्तन देखा,** जहाँ भारतीय कलाकारों ने पारंपरिक बाधाओं से हटकर विविध शैलियों, कथाओं और माध्यमों की खोज की।
- इसके अलावा **1990** के दशक में **न्यू मीडिया आर्ट का युग शुरू हुआ,** क्योंकि प्रौद्योगिकी ने कलात्मक अन्वेषण के लिए नए रास्ते खोले। वर्तमान में आधुनिक भारतीय कला लगातार विकसित हो रही है, जो देश के सांस्कृतिक परिदृश्य की गतिशीलता और विविधता को दर्शाती है।
- समय के साथ यह यात्रा बताती है कि किस प्रकार भारतीय कला ने निरंतर अनुकूलन किया है तथा राष्ट्र के निरंतर बदलते सांस्कृतिक, सामाजिक और तकनीकी परिदृश्य को प्रतिबिंबित किया है।

राष्ट्रीय संघर्ष के दौरान उद्भव

- भारत में आधुनिक कला निस्संदेह पश्चिम से प्रभावित थी, लेकिन इसमें महत्त्वपूर्ण अंतर भी थे।
- भारत में इसका प्रारंभ ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन के दौरान हुआ, जब **गगनेन्द्रनाथ टैगोर, अमृता शेरगिल और जैमिनी रॉय जैसे** कलाकारों को **1930** के दशक की शुरुआत में ही आधुनिक माना जाने लगा था।
- यूरोप में आधुनिक कला अकादमिक यथार्थवाद के विरुद्ध विद्रोह के रूप में उभरी, इसके विपरीत भारतीय आधुनिकता उपनिवेशवाद और सांस्कृतिक राष्ट्रवाद के साथ जुड़ी हुई थी।

Search On TG: @apna_pdf

Join Telegram: @apna_library

चित्र 5.1: रबींद्रनाथ टैगोर द्वारा चित्रित 'घनचित्रण शैली का शहर' (वर्ष 1925, विक्टोरिया मेमोरियल हॉल, कोलकाता)

- **एफ. एन. सूजा और जे. स्वामीनाथन** जैसे कलाकारों ने कला संस्थाओं के खिलाफ विद्रोह किया तथा पश्चिमी अवांत-गार्डे कलाकारों के साथ अपनी पहचान बनाई।
- भारत में आधुनिकता और उपनिवेशवाद आपस में घनिष्ठ रूप से जुड़े हुए थे, जिससे **सांस्कृतिक राष्ट्रवाद और कला में स्वदेशी के विचार** को बढ़ावा मिला।
- आधुनिक भारतीय कलाकारों ने पश्चिमी कला का अंधाधुंध अनुकरण करने के बजाय उसमें से तत्त्वों का सावधानीपूर्वक चयन किया।
- भारतीय कला में राष्ट्रवाद की जड़ें अवनीन्द्रनाथ टैगोर के नेतृत्व में बंगाल स्कूल में देखी जा सकती हैं और बाद में कला भवन, शांतिनिकेतन में इसने एक अनूठा रूप ग्रहण किया, जहाँ नंदलाल बोस जैसे कलाकारों ने पारंपरिक भारतीय कला रूपों से प्रेरणा ली।
- हालाँकि **गगेन्द्रनाथ टैगोर, रवींद्रनाथ टैगोर, जैमिनी रॉय, अमृता शेरगिल, रामकिंकर बैज और विनोद बिहारी मुखर्जी जैसे कलाकारों ने** भारतीय कला में एक विशिष्ट आधुनिक दृष्टिकोण का संचार किया।

20वीं सदी के आरंभ में भारत में कला का विकास

- **गगनेन्द्रनाथ टैगोर: उन्होंने घनवादी तत्त्वों (क्यूबिज्म)** से प्रभावित एक अनूठी शैली विकसित की। उन्होंने अपने रहस्यमयी विशाल कक्षों और कमरों के निर्माण में ऊर्ध्वाधर, क्षैतिज और तिरछी रेखाओं का प्रयोग किया, जो प्रसिद्ध कलाकार 'पाब्लो पिकासो' के ज्यामितीय पहलुओं से भिन्न थे।
- **रवींद्रनाथ टैगोर:** रवींद्रनाथ टैगोर अपने जीवन में काफी समय पश्चात् दृश्य कला की ओर अग्रसर हुए। वे अपनी कविताओं को लिखते समय अक्सर 'डूडल' (बिना सोचे-समझे किया गया रेखांकन) बनाते थे। इस प्रकार उन्होंने **सुलेख की एक विशेष शैली विकसित कर ली थी।** इनमें से कुछ मानव चेहरे और कुछ भू-दृश्य उनकी कविताओं के साथ मनोरम रूप में दिखाई पड़ते थे। उनका पैलेट काले, पीले, गेरू, लाल और भूरे रंग तक ही सीमित था। उन्होंने एक छोटा-सा दृश्य संसार बनाया था, जो अजंता भित्ति-चित्रों के साथ मुगल और पहाड़ी लघुचित्रों से प्रभावित था।

चित्र 5.2: रवींद्रनाथ टैगोर द्वारा चित्रित 'डूडल' (वर्ष 1920, विश्वभारती विश्वविद्यालय, शांतिनिकेतन, पश्चिम बंगाल)

Search On TG: @apna_pdf

PW ONLYIAS BY PHYSICS WALLAH

Join Telegram: @apna_library

- **नंदलाल बोस: वे राष्ट्रवाद** से प्रभावित थे और उन्होंने **कला भवन में कलात्मक अन्वेषण की अनुमति दी।** अवनीन्द्रनाथ टैगोर के अधीन उनके प्रशिक्षण ने उन्हें कला में राष्ट्रवाद से परिचित कराया।
- **विनोद बिहारी मुखर्जी तथा रामकिंकर बैज:**
  - बोस के विद्यार्थियों- **विनोद बिहारी मुखर्जी** और **रामकिंकर बैज ने** अपनी स्वयं की शैली विकसित की तथा अपने चित्रों में अपने आस-पास के परिवेश, **संथाल जनजाति** और मध्यकालीन संतों को शामिल किया, जो सुरुचिपूर्ण बंगाल स्कूल शैली से अलग था।
  - शांतिनिकेतन में **विनोद बिहारी के "मध्यकालीन संत" नामक** भित्ति-चित्र में **तुलसीदास** और **कबीर** जैसे संतों की मानवीय शिक्षाओं पर प्रकाश डाला गया है। विनोद बिहारी मुखर्जी रामायण और महाभारत जैसे प्रसिद्ध महाकाव्यों से संबंधित चित्र बनाने के बजाय, मध्यकालीन संतों के जीवन की ओर आकर्षित हुए।
- **रामकिंकर बैज:** उनकी कला में **प्रकृति और दैनिक जीवन के अनुभवों** को स्पष्ट देखा जा सकता है। **संथाल परिवार** जैसी मूर्तियों में आधुनिक सामग्रियों का प्रयोग करके संथाल परिवार के दैनिक जीवन को दर्शाया गया है। उनकी शैली **डी. पी. रॉय चौधरी** जैसे पहले के मूर्तिकारों से अलग थी, जिन्होंने **श्रम की विजय (The Triumph of Labour)** नामक चित्र में श्रमिक वर्ग के श्रम का चित्रण करने के लिए अकादमिक यथार्थवाद का प्रयोग किया था।
- **जैमिनी रॉय:** उन्होंने लोक कला और आधुनिक यूरोपीय कलाकारों से प्रभावित होकर सरल रंगों और ग्रामीण विषयों का प्रयोग किया तथा वे अपने चित्रों पर हस्ताक्षर किया करते थे। ग्रामीण कलाकारों की तरह, उन्होंने भी **वनस्पतियों और खनिजों से अपने रंग बनाए।**
- **अमृता शेरगिल:** उन्होंने पेरिस में प्रशिक्षण प्राप्त किया था, जहाँ उन्होंने भारतीय और यूरोपीय कला प्रभावों को मिलाया तथा अपने पीछे एक उल्लेखनीय कृति छोड़ी, जिसने भारतीय आधुनिकतावादियों की अगली पीढ़ी को प्रभावित किया। उनकी कला ने भारतीय विषयों को यूरोपीय आधुनिकतावाद के साथ मिश्रित किया, जिसने आधुनिक भारतीय कला में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया। भारत को अपना आधार बनाने का निर्णय लेने के बाद, उन्होंने भारतीय विषयों और छवियों के साथ कला विकसित करने का कार्य किया।

चित्र 5.3: जैमिनी रॉय द्वारा चित्रित 'ब्लैक हॉर्स' (वर्ष 1940, राष्ट्रीय आधुनिक कला संग्रहालय, नई दिल्ली)

भारत में आधुनिक विचारधारा और राजनीतिक कला

- अमृता शेरगिल की मृत्यु के उपरांत और द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान बंगाल में आए अकाल के बाद, कलकत्ता के कलाकारों ने **प्रोदोष दास गुप्ता** के नेतृत्व में **कलकत्ता समूह (Calcutta Group) का गठन किया।** इन कलाकारों में **निरोद मजूमदार, परितोष सेन, गोपाल घोष और रथिन मोइत्रा शामिल थे।**
- उन्होंने "बंगाल स्कूल ऑफ आर्ट्स" की भावुकता से स्वयं को दूर रखते हुए **सार्वभौमिक और समकालीन कला की खोज की।**

चित्र 5.4: प्रोदोष दास गुप्ता द्वारा चित्रित 'ट्विंस ब्रॉन्ज' (जुड़वाँ कांस्य) [वर्ष 1973, राष्ट्रीय आधुनिक कला संग्रहालय, नई दिल्ली]

चित्र 5.5: चित्तप्रसाद द्वारा चित्रित 'हंगरी बंगाल' (भूखा बंगाल) [वर्ष 1943, दिल्ली आर्ट गैलरी, नई दिल्ली]

Search On TG: @apna_pdf

Join Telegram: @apna_library

- समूह ने अपनी दृश्य अभिव्यक्तियों को सरल बनाया तथा **सामग्री, सतह, रूप, रंग, छटा और बनावट जैसे तत्त्वों पर जोर दिया।**
- इनमें से कई कलाकार गरीबी और सामाजिक मुद्दों के कारण **समाजवाद और मार्क्सवाद** की ओर आकर्षित हुए।
- **चित्त प्रसाद** और **सोमनाथ होरे** ने गरीबों की दुर्दशा को चित्रित करने के लिए प्रिंट मेकिंग का प्रयोग किया, बंगाल के अकाल पर चित्त प्रसाद के चित्र **"भूखा बंगाल" (Hungry Bengal)** के रूप में प्रकाशित हुए, जिससे ब्रिटिश अधिकारी नाराज़ हो गए।
- चित्त प्रसाद की **नक्काशी (एचिंग), लीनोकट (मुद्रण) और लिथोग्राफ (शिलामुद्रण) में** गरीबों की विकट परिस्थितियों को दिखाया गया है। उन्हें "भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी" ने बंगाल के अकाल से सबसे अधिक प्रभावित गाँवों की यात्रा करने और रेखाचित्र बनाने के लिए कहा था।

प्रोग्रेसिव आर्टिस्ट्स ग्रुप ऑफ बॉम्बे तथा बहुमुखी भारतीय कला

- ब्रिटिश शासन से स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद, युवा कलाकारों ने राजनीतिक और कलात्मक स्वतंत्रता की माँग की।
- बम्बई में **फ्रांसिस न्यूटन सूजा के नेतृत्व में 'द प्रोग्रेसिव'** नामक एक समूह का गठन किया गया, जिसमें **एम. एफ. हुसैन, के. एच. आरा, एस. ए. बाकरे, एच. ए. गाडे तथा एस. एच. रजा** जैसे कलाकार शामिल थे।
- सूजा ने पारंपरिक कला विद्यालय के मानदंडों को चुनौती दी तथा प्रयोगात्मक कार्यों, विशेषकर महिलाओं के अतिरंजित नग्न चित्रण पर ध्यान केंद्रित किया।
- **एम. एफ. हुसैन** का उद्देश्य **आधुनिक कला को भारतीय संदर्भ से संबंधित बनाना** था, जिसमें जीवंत भारतीय रंगों के साथ पश्चिमी अभिव्यक्तिवादी तकनीकों का उपयोग किया गया तथा भारतीय पौराणिक कथाओं, धार्मिक विषयों, लघु चित्रों, ग्रामीण शिल्प और लोक जीवन के खिलौनों से प्रेरणा ली गई।
- भारतीय विषयों के साथ आधुनिक शैली को मिश्रित करने की उनकी क्षमता ने उन्हें वैश्विक मंच पर भारतीय आधुनिक कला के प्रतिनिधि के रूप में स्थापित किया, जिसका उदाहरण **आधुनिक कलात्मक संदर्भ में 'मदर टेरेसा' तथा 'किसान परिवार' का उनका चित्रण है।**

चित्र 5.6: एम. एफ. हुसैन द्वारा चित्रित 'किसान परिवार' (वर्ष 1940, राष्ट्रीय आधुनिक कला संग्रहालय, नई दिल्ली)

अमूर्तन: एक नई अवधारणा

- भारतीय आधुनिक कला के क्षेत्र में एम. एफ. हुसैन मुख्य रूप से एक आकृतिमूलक कलाकार बने रहे, जबकि **एस. एच. रजा** अमूर्तन की ओर अग्रसर हुए, उन्होंने विशेष रूप से भू-दृश्यों पर ध्यान केंद्रित किया और अनेक प्रकार के रंगों का उपयोग किया।
- रज़ा के चित्र **मंडल और यंत्र डिजाइनों से प्रेरित थे** और उन्होंने **भारतीय दर्शन की एकात्मकता के प्रतीक 'बिंदु'** का प्रयोग किया है।

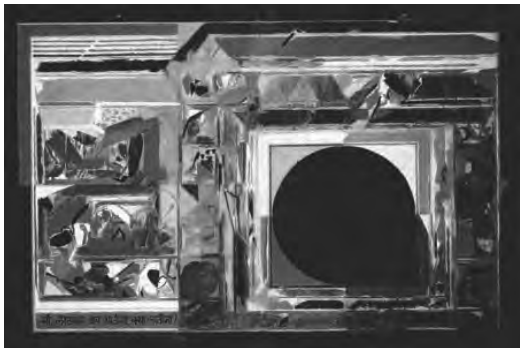

चित्र 5.7: एच. एस. रजा द्वारा चित्रित 'माँ' (वर्ष 1972, बॉम्बे)

चित्र 5.8: के. सी. एस. पणिकर द्वारा चित्रित 'द डॉग' (वर्ष 1973, राष्ट्रीय आधुनिक कला संग्रहालय, नई दिल्ली)

- **गायतोंडे, के. के. हेब्बार, एस. चावड़ा, अकबर पदमसी, तैयब मेहता और कृष्ण खन्ना** जैसे कलाकार अमूर्त और आकृतिमूलक शैलियों के मध्य ही कार्य करते रहे।
- कई मूर्तिकारों जैसे **पिलो पोचखानवाला** और कृष्ण रेड्डी जैसे ग्राफिक कलाकारों के लिए अमूर्तन महत्त्वपूर्ण था। उन्होंने अपनी रचनाओं में सामग्री के महत्त्व पर बल दिया।

Search On TG: @apna_pdf

PW ONLYIAS BY PHYSICS WALLAH

Join Telegram: @apna_library

- **1960** और **1970** के दशक के दौरान अमूर्तन का आकर्षण चित्रकला, मुद्रण और मूर्तिकला सहित विभिन्न कला रूपों में विस्तृत हुआ।
- दक्षिण भारत में **के. सी. एस. पणिकर** ने अमूर्तन की शुरुआत की तथा तमिल और संस्कृत लिपियों, फर्श की सजावट और ग्रामीण शिल्प से रूपांकनों को शामिल करके इसकी ऐतिहासिक जड़ों को प्रदर्शित किया, जिससे स्पष्ट होता है कि भारतीय कला में अमूर्तन का एक लंबा इतिहास रहा है।

विशिष्ट भारतीय कला की खोज

- **1970** के दशक के अंत तक भारतीय आधुनिक कला में अन्तर्राष्ट्रीयतावाद (पश्चिमी आधुनिक प्रवृत्तियों को अपनाना) और स्वदेशी कला के बीच तनाव बढ़ गया था।
- **अमरनाथ सहगल** और **मृणालिनी मुखर्जी** जैसे कलाकारों ने अपने चित्रों में अमूर्त और मूर्त तत्त्वों के बीच संतुलन किया।
- पश्चिमी कला की नकल करने की चिंताओं ने एक विशिष्ट भारतीय कलात्मक पहचान स्थापित करने की खोज हेतु प्रेरित किया।
- **बीरेन डे, जी. आर. संतोष और के. सी. एस. पणिकर ने स्थानीय कलात्मक परम्पराओं की ओर रुख किया तथा नव-तांत्रिक कला** के रूप में प्रसिद्ध कला का सृजन किया, जिसमें तांत्रिक तत्त्वों से प्रेरित ज्यामितीय आकृतियों की विशेषता थी।
- इस शैली को पश्चिम और भारत में सफलता मिली, क्योंकि इसमें भारतीय प्रभावों को अमूर्तन के साथ जोड़ा गया था।
- **संकलनवाद (Eclecticism),** जिसमें कई स्रोतों से कलाकारों ने विचारों को संगृहीत किया, अनेक भारतीय आधुनिकतावादियों की एक उल्लेखनीय विशेषता बन गई। इनमें **राम कुमार, सतीश गुजराल, ए. रामचंद्रन और मीरा मुखर्जी** जैसे कुछ नाम उल्लेखनीय हैं।

चित्र 5.9: जी. आर. संतोष द्वारा चित्रित 'अनटाइटल्ड' (वर्ष 1970, राष्ट्रीय आधुनिक कला संग्रहालय, नई दिल्ली)

- कलाकारों ने अपने कलात्मक उद्देश्यों को स्पष्ट करने के लिए घोषणा-पत्र लिखना शुरू कर दिया, जिसमें जे. स्वामीनाथन के नेतृत्व में **'समूह 1890' ने** अपने चित्रों में बनावट और सतह के महत्त्व पर बल दिया।
- इस आंदोलन ने मद्रास के निकट **चोलमंडलम स्कूल से जुड़े लोगों को प्रभावित किया** तथा कलाकारों की अगली पीढ़ियों पर अमिट छाप छोड़ी।

नवीन कला आकृतियाँ और 1980 के दशक की आधुनिक कला

- **1970** के दशक से कई भारतीय कलाकारों ने आकृतियों और कहानियों की ओर रुख किया, जिन्हें पहचानना आसान है। संभवतः यह **1971** के भारत-पाकिस्तान युद्ध और बांग्लादेश के निर्माण के बाद सामाजिक समस्याओं पर अपनी चिंताओं को व्यक्त करने का एक तरीका था।
- **के. जी. सुब्रमण्यम, गुलाम मोहम्मद शेख, भूपेन खक्कर, जोगेन चौधरी, विकास भट्टाचार्य और गणेश पाइन** जैसे कलाकारों ने सामाजिक समस्याओं को चित्रित किया।

चित्र 5.10: जी. एम. शेख द्वारा चित्रित 'सिटी फ़ॉर सेल' (बिक्री के लिए शहर) [वर्ष 1984, विक्टोरिया और अल्बर्ट संग्रहालय, लंदन, यू.के.]

Search on TG: @apna_pdf

Join Telegram: @apna_library

- उन्होंने अपनी कहानियों को ज्यादा लोगों तक पहुँचाने के लिए पुराने लघु चित्रों, कैलेंडर और लोक कला से प्रेरणा ली।
- **ज्योति भट्ट, लक्ष्मा गौड़ और अनुपम सूद** जैसे ग्राफिक चित्रकारों ने अपने कार्य के माध्यम से पुरुषों और महिलाओं के बीच संघर्ष और सामाजिक असमानता को दर्शाया।
- **अर्पिता सिंह, नलिनी मालानी और सुधीर पटवर्धन** जैसे कलाकारों ने शहरी निवासियों के सामने आने वाली चुनौतियों पर ध्यान केंद्रित किया तथा **शोषितों की दृष्टि** से दुनिया को समझने की कोशिश की।

क्या आप जानते हैं?

चित्रकला और मूर्तिकला में विषयवस्तु मुख्यतः ग्रामीण भारत से ली गई थी। **1940** और **1950** के दशक में बॉम्बे प्रोग्रेसिव और कलकत्ता समूह के साथ भी यही स्थिति थी। भारतीय कलाकारों के कार्यों में शहर और शहरी जीवन शायद ही कभी दिखाई देता था। शायद, यह महसूस किया गया कि असली भारत गाँवों में बसता है। **1940** और **1950** के दशक के भारतीय कलाकारों ने शायद ही कभी अपने तात्कालिक सांस्कृतिक परिवेश पर ध्यान दिया हो।

- **1980** के दशक में **"बड़ौदा आर्ट स्कूल" में** एक महत्त्वपूर्ण बदलाव देखा गया, क्योंकि कलाकारों ने अपने आस-पास के परिवेश में रुचि लेना आरंभ किया तथा सामाजिक और राजनीतिक समस्याओं को संबोधित करना शुरू कर दिया। उन्होंने तथ्य के साथ कल्पना, **आत्मकथा के साथ कल्पना (फैंटेसी)** को संयोजित करने का एक नया रास्ता निकाला और विभिन्न ऐतिहासिक कला शैलियों से प्रेरणा ली।
- **गुलाम मोहम्मद शेख ने** लोरेंजेटी बंधुओं जैसे इतालवी चित्रकारों की शैली का उपयोग करते हुए, बड़ौदा की व्यस्त गलियों को चित्रित किया तथा एक मध्ययुगीन शहर इटली के सिएना के वातावरण को दर्शाया।

विचारणीय बिंदु

क्या आपको लगता है कि 1980 के दशक में विभिन्न कलात्मक प्रभावों और बढ़ती सामाजिक जागरूकता के सम्मिश्रण ने भारतीय कलाकारों के एक अधिक सक्रिय और सामाजिक रूप से जागरूक समूह को जन्म दिया तथा क्या आप ऐसे उदाहरणों के बारे में सोच सकते हैं, जहाँ उनकी कृतियों में समाज के ज्वलंत मुद्दों पर ध्यान केन्द्रित किया गया हो?

- इस अवधि के कलाकारों में लोकतंत्र में नागरिक के रूप में अपनी भूमिका के प्रति जागरूकता बढ़ी, जिसके परिणामस्वरूप विविध और समाज से जुड़ी कलाकृतियों का निर्माण हुआ।

भारतीय कलाकारों की सार्वजनिक भूमिका

- बड़ौदा कला विद्यालय के संस्थापक सदस्य के. जी. सुब्रमण्यम शांतिनिकेतन से जुड़े थे। उन्होंने कला की सार्वजनिक भूमिका के बारे में अपने शिक्षकों **विनोद बिहारी मुखर्जी** और **रामकिंकर बैज से सीखा था**।
- वह बड़ी सार्वजनिक इमारतों पर भित्ति-चित्र बनाने की ओर आकर्षित थे, उनका उद्देश्य कला को सभी के लिए सुलभ बनाना था।
- उन्होंने राजस्थानी कलाकारों की सैंड कास्टिंग तकनीक अपनाई और **बड़े पैमाने पर उभारयुक्त मूर्तियाँ बनाई**।
- सुब्रमण्यम की कलाकृतियों में एक प्रमुख कलाकृति **कला भवन की बाहरी दीवार पर** भित्ति-चित्र है, जो सार्वजनिक स्थानों पर कला की उपस्थिति को दर्शाता है।

चित्र 5.11: के. जी. सुब्रमण्यम द्वारा निर्मित 'तीन पौराणिक देवियाँ' (वर्ष 1988, कला भवन, शांतिनिकेतन, पश्चिम बंगाल)

चित्र 5.12: भूपेन खक्कर द्वारा चित्रित 'जनता वॉच रिपेयरिंग' (वर्ष 1972, निजी संग्रह, भारत)

Search On TG: @apna_pdf

ONLYIAS BY PHYSICS WALLAH

Join Telegram: @apna_library

- कला का ऐसा सार्वजनिक दृश्य **"प्लेस फॉर पीपल"** नामक **1981** की एक ऐतिहासिक प्रदर्शनी में देखा जा सकता है, जिसमें **भूपेन खक्कर, गुलाम मोहम्मद शेख, विवान सुंदरम, नलिनी मालानी, सुधीर पटवर्धन और जोगेन चौधरी जैसे कलाकार शामिल थे।**
- दिल्ली और बम्बई में प्रदर्शित इस प्रदर्शनी में कलाकारों के उद्देश्यों की व्याख्या करने में **गीता कपूर** जैसे **कला समीक्षकों की भूमिका पर प्रकाश डाला गया।**
- खक्कर और बड़ौदा के कथा चित्रकारों ने ट्रक और ऑटो रिक्शा से लेकर छोटी दुकानों तक, रोजमर्रा के जीवन में दिखाई देने वाली लोकप्रिय कला रूपों का चित्रण किया।
- मुंबई में युवा चित्रकारों ने कैलेंडर, विज्ञापनों और फिल्म होर्डिंग्स पर लोकप्रिय चित्रों से प्रेरणा ली, यहाँ तक कि कैनवास पर फोटोग्राफी चित्रों का भी प्रयोग किया।
- यह शैली **दोहरे अर्थों और प्रयोगात्मक तकनीकों पर निर्भर थी,** जो प्रायः छायाचित्र (फोटोग्राफ) के समान प्रतीत होती थी, लेकिन गहरे संदेश देती थी।

न्यू मीडिया आर्ट: 1990 के दशक से

- **1990** के दशक में भारतीय अर्थव्यवस्था के उदारीकरण ने सामाजिक और राजनीतिक मुद्दों के साथ-साथ वैश्वीकरण के प्रभाव को भी सामने ला दिया, **विशेष रूप** से बड़े शहरों में यह अधिक दृष्टिगत हुआ।
- कलाकारों ने परिवर्तन के समय के साथ प्रतिक्रिया देने के लिए नए माध्यम खोजे। **ईज़ल पेंटिंग और मूर्तिकला जैसे पारंपरिक माध्यमों** की जगह वीडियो और फ़ोटोग्राफ़ी ने ले ली, जिससे उनके काम का व्यापक प्रसार हुआ।
- हालाँकि, सबसे समकालीन कला रूप संस्थापन (**इंस्टॉलेशन**) बन गया। इससे एक गहरे अनुभव की प्राप्ति हुई जिसने हमारी सभी इंद्रियों को प्रभावित किया।
- प्रमुख शहरों से **नलिनी मालानी और विवान सुंदरम** जैसे संस्थापन कलाकारों ने **विचारोत्तेजक विषयों पर कार्य किया।**
- फोटोग्राफी को अक्सर चित्रकला की प्रतिद्वंद्वी के रूप में देखा जाता है। फोटोग्राफी ने **फोटोयथार्थवाद (photorealism) के विकास को प्रेरित किया, जिसका उपयोग अतुल डोडिया** जैसे कलाकारों द्वारा किया गया।
- **टी. वी. संतोष और शिबू नटसन** जैसे युवा कलाकारों ने **सामाजिक परिवर्तन और तकनीकी प्रगति** पर टिप्पणी करने के लिए इस तकनीक का प्रयोग किया।
- फोटोग्राफी और वीडियो के माध्यम से भी **हाशिये पर व्याप्त व्यक्तियों और पर्यावरण संबंधी चिंताओं को दर्शाया गया, जिसका समर्थन शीबा चाची, रवि अग्रवाल और अतुल भल्ला** जैसे कलाकारों ने किया।
- भारत में समकालीन कला लगातार बदल रही है। कलाकार और क्यूरेटर तकनीकी के साथ प्रयोग कर रहे हैं तथा दुनिया को बेहतर ढंग से समझने के लिए कला की भूमिका को पुनः परिभाषित कर रहे हैं।
- बड़े शहरों में व्यक्तिगत और सार्वजनिक दोनों प्रकार की कला दीर्घाएँ हैं और कलाकार डिजिटल पेंटिंग सहित विभिन्न प्रकार के मीडिया का उपयोग करते हैं।
- सोशल मीडिया ने स्थानीय कला परिदृश्य को आकार देने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है, जिससे दृश्य कला के विद्यार्थियों के लिए स्थानीय कलाकारों के कार्य को जानना, कला दीर्घाओं में जाना और समाज में उनके योगदान को समझना महत्त्वपूर्ण हो गया है।

विचारणीय बिंदु

भारत में "न्यू मीडिया आर्ट" की ओर परिवर्तन आर्थिक उदारीकरण और वैश्वीकरण द्वारा प्रेरित है। क्या आप विभिन्न नए प्रभावित विषयों के बारे में सोच सकते हैं, जिन्हें समकालीन कलाकारों ने खोजा है? आपको इस परिवर्तन में तकनीकी की क्या भूमिका लगती है?

प्रभावशाली आधुनिक भारतीय कलाकृतियाँ (चित्रकला तथा मूर्तिकला)

मध्यकालीन संतों का जीवन

- **विनोद बिहारी मुखर्जी ने 1946** से **1947** में भारत की स्वतंत्रता के समय, शांतिनिकेतन के हिंदी भवन में **"मध्यकालीन संतों का जीवन" नामक भित्ति चित्र बनाया था।**
- **यह भित्ति चित्र फ्रेस्को बूनो तकनीक का एक अद्भुत उदाहरण है, जो** कक्ष की तीन दीवारों के ऊपरी आधे हिस्से को ढकते हुए लगभग **23** मीटर के क्षेत्र में बनाया गया है।
- अल्प नेत्र ज्योति के बावजूद मुखर्जी ने बिना किसी प्रारंभिक रचनात्मक रेखाचित्र के सीधे दीवारों पर रेखाचित्र बनाए।
- भित्ति चित्र में मध्यकालीन संतों के जीवन को दर्शाया गया है और यह भारतीय जीवन की **सामंजस्यपूर्ण तथा सहिष्णु परंपरा को दर्शाता है, जो रामानुज, कबीर, तुलसीदास और सूरदास जैसे भक्ति कवियों से प्रेरित है।**
- यह कलाकृति आधुनिक शैली की है, जिसमें प्रत्येक आकृति न्यूनतम रेखाओं से बनी है।

Search On TG: @apna_pdf

Join Telegram: @apna_library

- प्रत्येक आकृति को जोड़ने वाली रेखाओं का एक लयबद्ध ताना-बाना है, जो एक **बुने हुए कपड़े जैसा दिखता है।** यह शैली अधिकांशतः संतों के चित्रण से जुड़ी होती है।
- विनोद बिहारी मुखर्जी आधुनिक भारत के उन शुरुआती कलाकारों में से एक थे, जिन्होंने सार्वजनिक कला के रूप में भित्ति-चित्रों की क्षमता को पहचाना।

चित्र 5.13: मध्यकालीन संतों का जीवन

मदर टेरेसा

चित्र 5.14: मदर टेरेसा

- **एम. एफ. हुसैन** द्वारा बनाई गई 'मदर टेरेसा' की संत जैसी छवि का चित्र **1980** के दशक का है। यह एक विशेष शैली में उस कलाकार द्वारा चित्रित है, जिसने आधुनिक भारतीय कला की नई परिभाषा का सृजन किया था।
- चित्र में मदर टेरेसा को कई बार दिखाया गया है, हर बार **उन्होंने अपने हाथों में एक शिशु को पकड़ा हुआ है तथा उन पर विशेष ध्यान केंद्रित किया गया है।**
- केंद्र में बैठी हुई मदर टेरेसा की गोद में एक युवक क्षैतिज रूप से लेटा है, जो **माइकल एंजेलो की कृति 'पिएटा' की याद दिलाता है।**
- हुसैन की कला में पारंपरिक यूरोपीय कला के तत्त्वों, जैसे- पीटा, को आधुनिक सपाट आकृतियों के साथ जोड़ा गया है, जो कागज के कटआउट जैसी दिखती हैं।
- कलाकार का उद्देश्य मदर टेरेसा के जीवन का यथार्थवादी चित्रण करना नहीं है, बल्कि इसके स्थान पर वह विचारोत्तेजक कल्पना प्रस्तुत करता है।
- दर्शकों को कहानी का सार समझने के लिए कलाकार संकेत छोड़ता है।
- दृश्य में घुटनों के बल बैठी महिला की आकृति है, जो एक तरह से हमें उस कहानी की ओर संकेत करती है जो भारत में असहायों के उपचार एवं पोषण को प्रकट करती है।

हल्दी ग्राइंडर

चित्र 5.15: हल्दी ग्राइंडर

- **अमृता शेरगिल** ने **1940** में **'हल्दी ग्राइंडर'** नामक चित्र चित्रित किया। यह वह समय था जब वे **भारत के सुखद ग्रामीण दृश्य** से प्रेरणा ले रही थीं।
- इस कलाकृति में भारतीय महिलाओं को सूखी हल्दी पीसने के पारंपरिक कार्य में संलग्न दिखाया गया है तथा इसे भारतीय शैली में चित्रित किया गया है।
- शेरगिल ने दृश्य के सार को समझाने के लिए चमकदार एवं नम रंगों का प्रयोग किया है।
- यूरोपीय आधुनिक कला में प्रशिक्षित शेरगिल को उत्तरी भारत की लघुचित्र शैली परंपरा और प्रशंसित कलाकार **'पॉल गांग'** के आधुनिक कला की भी समान समझ थी।
- उन्होंने चमकीले रंगों को एक-दूसरे के पास लाते हुए बाहरी रेखाओं के बजाय रंग विरोधी संयोजन से व्यक्ति के आकारों को बनाया, जो उत्तर भारत के **बसोहली चित्र शैली** की याद दिलाते हैं।
- 'हल्दी ग्राइंडर' में महिलाओं और पेड़ों दोनों को सपाट आकृतियों के रूप में दर्शाया गया है। शेरगिल जानबूझकर **परिदृश्य में गहराई पैदा करने से बचती हैं।**
- इसके बजाय, वह **एक अर्द्ध-अमूर्त प्रतिरूप को अपनाती हैं** तथा भारतीय कलात्मक परंपराओं में गहराई से निहित एक आधुनिक कलाकार के रूप में अपनी पहचान प्रदर्शित करती हैं।

Search on TG: @apna_library

PW ONLYIAS BY PHYSICS WALLAH

Join Telegram: @apna_library

फेयरी टेल्स फ्रॉम पूर्वपल्ली (पूर्वपल्ली की परीकथाएँ)

चित्र 5.16: फेयरी टेल्स फ्रॉम पूर्वपल्ली (पूर्वपल्ली की परीकथाएँ

- **के. जी. सुब्रमण्यम** द्वारा वर्ष **1986** में निर्मित **'पूर्वपल्ली'** चित्र एक बहुसर्जनात्मक कलाकार, विद्वान, शिक्षक और कला-इतिहासकार के कार्य को दर्शाता है।
- सुब्रमण्यम ने भारत और विश्व भर में पाई जाने वाली विभिन्न कला परंपराओं से प्रेरणा ली है।
- कलाकृति का शीर्षक शांतिनिकेतन के पूर्वपल्ली स्थित **उनके घर** को संदर्भित करता है। यह एक ऐसा स्थान है, जो विश्व भर में उनकी कल्पनाशील यात्रा के लिए प्रस्थान बिंदु के रूप में कार्य करता है।
- उनके काल्पनिक भू-दृश्य में एक अजीब दुनिया है, जिसमें **पक्षी** और **जंतु मनुष्यों से अपने कंधे रगड़ते हैं, असामान्य पेड़ हैं जिन पर पत्तियों के स्थान पर पंख उगते हैं।**
- सुब्रमण्यम की चित्रकला शैली **रेखाचित्रीय है,** जिसमें रंगों को तीव्रता से ब्रुश से रेखाएँ बनाकर भरा जाता है। **धूसर, हरे और भूरे रंगों का प्रयोग किया गया है।**
- चित्र के शीर्ष पर दर्शायी गई पुरुष और महिला आकृतियाँ **शहरी लोक कला के तत्त्वों की याद दिलाती हैं,** जो उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्द्ध में औपनिवेशिक कलकत्ता में लोकप्रिय **कालीघाट चित्रकला की याद दिलाती हैं।**
- इसके अतिरिक्त एक दूसरे के ऊपर आकृतियों की व्यवस्था एक **समतल स्थान बनाती है,** जो आधुनिक कला की विशेषता है।
- 'पूर्वपल्ली' सुब्रमण्यम की **विविध कला परंपराओं के अनूठे मिश्रण का प्रतीक है,** जो उनकी कल्पनाशील और कलात्मक क्षमता को प्रदर्शित करता है।

व्हर्लपूल (Whirlpool)

चित्र 5.17: व्हर्लपूल

- प्रसिद्ध भारतीय प्रिंटमेकर (ग्राफिक कलाकार) **कृष्ण रेड्डी द्वारा वर्ष 1963 में निर्मित 'व्हर्लपूल'** एक उल्लेखनीय प्रिंट (ग्राफिक चित्र) है, जो **मुख्य रूप से नीले रंग की छटाओं में एक जटिल संरचना को प्रदर्शित करता है।**
- इस कलाकृति में ग्राफिक कला की एक नई तकनीक का उपयोग किया गया है, जिसे **"विस्कोसिटी प्रिंटिंग" कहा जाता है, जिसे रेड्डी ने प्रसिद्ध ग्राफिक कलाकार स्टेनली विलियम हेटर** के साथ मिलकर **'एटेलियर 17'** नामक प्रसिद्ध स्टूडियो में विकसित किया था।
- विस्कोसिटी प्रिंटिंग में एक ही धातु की प्रिंटिंग प्लेट पर अलग-अलग रंग लगाए जाते हैं तथा प्रत्येक रंग को **अलसी के तेल के साथ** अलग-अलग सांद्रता में मिलाया जाता है, जिससे यह सुनिश्चित किया जा सके कि रंग एक-दूसरे में न मिलें।
- छापाचित्र की विषयवस्तु मुख्यतः जल की तरंग से संबंधित है, जो जल एवं तेल किस प्रकार अंतर्क्रिया करते हैं, इस समझ पर आधारित है।
- यह प्रसिद्ध ग्राफिक चित्र अमेरिका के न्यूयॉर्क स्थित **"मेट्रोपॉलिटन म्यूजियम ऑफ आर्ट"** में संगृहीत है।

चिल्ड्रन (बच्चे)

चित्र 5.18: चिल्ड्रेन (बच्चे)

- यह एक ग्राफिक चित्र है, जिसको कागज पर एक-रंगीय एचिंग से **सोमनाथ होर (1921-2006)** ने **1958** में तैयार किया था।
- वर्ष **1943** के बंगाल अकाल के दौरान होर के अनुभव ने उनकी कलात्मकता को गहराई से प्रभावित किया। इस अवधि के दौरान उन्होंने किसानों, बेसहारा व्यक्तियों सहित **अकाल पीड़ितों की पीड़ा और दुर्दशा को दर्शाते हुए विभिन्न रेखाचित्र और चित्र बनाए।**
- उनकी प्रारंभिक कृतियों में **इन विषयों का सटीक और सजीव चित्रण शामिल था,** जिसमें निरूपणात्मक रूपरेखा और रंग तकनीकों का प्रयोग किया गया था।
- इस विशेष ऐचिंग में होर ने **1943 के अकाल ग्रस्त बच्चों की त्रासदी को दिखाया है।**
- यह एक सघन बुना हुआ संयोजन है, जिसमें पाँच खड़ी आकृतियाँ हैं, जो किसी भी पृष्ठभूमि, परिप्रेक्ष्य या प्रासंगिक परिवेश से रहित हैं।

Search On TG @apna_pdf

Join Telegram: @apna_library

- ये आकृतियाँ **अपने विचारों और वार्तालापों में मग्न दिखाई देती हैं।**
- ये आकृतियाँ रेखा प्रधान हैं और इनमें उनका धड़ कंकालनुमा है, जो मलेरिया से ग्रसित हैं और जिनकी पसलियों की हड्डियाँ स्पष्ट रूप से दिख रही हैं।
- प्रत्येक आकृति में एक विशाल सिर, छोटा सा चेहरा और पूरा शरीर पतली-पतली दो डंडे जैसी टांगों पर खड़ा दिखाई देता है।
- वक्षस्थल की प्रत्येक पसली और गाल की हड्डी पर उभरी हुई स्पष्ट रेखाएँ **गहरे घावों का आभास कराती हैं।**
- त्वचा के नीचे हड्डियों की संरचना **कुपोषण के विनाशकारी प्रभाव को दिखाती है।**
- **परिस्थितिजन्य संदर्भ या दृश्यगत आँकड़ों के बिना,** इसे दिखाने के लिए बहुत ही सरल और संक्षिप्त विधि का प्रयोग किया गया है।
- इस कलाकृति में चित्रित बच्चे समाज के सबसे कमजोर वर्ग का प्रतिनिधित्व करते हैं।
- होर की कुछ अन्य उल्लेखनीय कृतियों में **"पीजेंट्स मीटिंग", "वाउंडेड एनिमल", "द चाइल्ड", "मदर विद चाइल्ड", "मोरनर्स" और "द अनक्लैड बेगर फैमिली" शामिल हैं।**

देवी

चित्र 5.19: देवी

- यह कागज पर छपा **ज्योति भट्ट (जन्म 1934)** द्वारा **1970** में बनाया गया एचिंग है। वह अपने गुरु **के. जी. सुब्रमण्यम** से प्रभावित थे।
- भट्ट की कलात्मक यात्रा में चित्रकला, मुद्रण और फोटोग्राफी का क्षेत्र शामिल था। उन्होंने लोक परंपराओं और लोकप्रिय प्रविधियों के आधार पर एक अनूठी कलात्मक भाषा विकसित की।
- उनकी कलाकृतियों में विविध दृश्य तत्त्वों को एक समग्र कथानक में कुशलतापूर्वक मिश्रित किया गया है।
- उनके कार्य में **पारंपरिक स्थानीय कलाओं और आधुनिकता के बीच** के कोमल संबंध को देखा जा सकता है, जिसमें अतीत के पारंपरिक रूपाकार को समकालीन गत्यात्मकता में रूपांतरित किया गया है।
- इस विशेष प्रिंट में भट्ट ने देवी की चित्रात्मक छवि को एक महिला के सामने के चेहरे, लोक रूपांकनों और प्रतिरूप के एक रेखीय चित्रण के साथ पुनः परिकल्पित और पुनः सन्दर्भित किया है।
- देवी के चित्र का केंद्रीय स्थान उसे रचना में एक प्रतिष्ठित दर्जा प्रदान करता है।
- चित्र के चारों ओर शब्दों तथा रूपांकनों की द्वि-आयामी संरचना **तांत्रिक दर्शन का सार** तथा आत्म-विकास और आत्म-उत्पत्ति की शक्ति का जीवंत चित्रण प्रस्तुत करती है।
- यह दर्शन यथार्थ को **शक्ति में सन्निहित गतिशील और स्थिर सिद्धांतों** के परस्पर अंतर्संबंधित प्रभाव के रूप में देखता है।
- ज्योति भट्ट ने अन्य उल्लेखनीय कलाकृतियाँ भी बनाईं, जैसे- **"कल्पवृक्ष", "सेल्फ पोट्रेट", "फॉरगॉटन मोन्युमेंट्स", "सीता का तोता", "स्टिल लाइफ विद टू लेंप्स", "स्केटर्ड इमेज अंडर द वार्म स्काई", "तीर्थंकर"** आदि।

ऑफ वाल्स

चित्र 5.20: ऑफ वाल्स

- यह वर्ष **1982** में बनाया गया एचिंग है, जो **अनुपम सूद के** कलात्मक प्रयास का परिणाम है।
- सूद का यह ग्राफिक चित्र जिंक प्लेट से कागज पर छापा गया है, जो ग्राफिक कला के प्रति उनके समर्पण को दर्शाता है। उन्होंने **1970** के दशक की शुरुआत में यूनिवर्सिटी कॉलेज, लंदन के "स्लेड स्कूल ऑफ फाइन आर्ट" में अपनी पढ़ाई के दौरान ग्राफिक चित्र कला का अध्ययन किया था।
- भारत लौटने पर उन्हें भारत के दैनिक जीवन के यथार्थ चित्रण के लिए प्रेरित किया।
- सूद ने भारतीय समाज में हाशिये पर व्याप्त समुदायों को प्रभावित करने वाले गहन सामाजिक मुद्दों पर ध्यान केंद्रित किया।
- उनका कार्य कलात्मक संदर्भ में इन मुद्दों की खोज और समझने के लिए एक माध्यम के रूप में कार्य करता था।
- इस विशेष कृति में, उन्होंने एक अनूठी तकनीक का प्रयोग किया है, जिसमें एक स्त्री की रिक्त मुखाकृति के द्वारा एक नारी का आकर्षक चित्र सृजित किया।
- चित्रण में चेहरे की अनुपस्थिति आकृति को एक चिंतनशील और गंभीर अभिव्यक्ति प्रदान करती है।
- चित्र में एक नारी को विदीर्ण दीवार के साथ फुटपाथ पर बैठी हुई दिखाया गया है। अग्रभूमि में ज़मीन पर सोते हुए गरीब व्यक्ति का अधोभाग दर्शाया गया है।
- कपड़े पहने महिला और सोते हुए आदमी के बीच यह विरोधाभास ग्राफिक चित्र में विषाद के भाव को अभिव्यक्त करता है।

Search On TG: @apna_

PW ONLYIAS BY PHYSICS WALLAH

Join Telegram: @apna_library

रूरल साउथ इंडियन मेन-वुमन (ग्रामीण दक्षिण भारतीय पुरुष-महिला)

चित्र 5.21: रूरल साउथ इंडियन मेन-वुमन (ग्रामीण दक्षिण भारतीय पुरुष-महिला)

- यह कागज़ पर **लक्ष्मा गौड़** द्वारा **2017** में बनाई गई एचिंग है। अपनी कुशल ड्राफ्ट्समैनशिप और ग्राफिक चित्रकला कौशल के लिए प्रसिद्ध लक्ष्मा गौड़ ने बड़ौदा में एम. एस. विश्वविद्यालय में भित्ति-चित्र और ग्राफिक चित्र (प्रिंटमेकिंग) की शिक्षा प्राप्त की।
- वे अपने गुरु के. जी. सुब्रमण्यम से बहुत प्रभावित थे, जो शास्त्रीय, लोक और लोकप्रिय संस्कृतियों सहित दृश्य परंपराओं से ली गई कथात्मक पद्धतियों तथा आकृति तत्त्वों के अपने अभिनव अन्वेषणों के लिए जाने जाते थे।
- लक्ष्मा गौड़ प्रमुख और लघु कला रूपों के बीच कठोर सीमाओं को मिटाना चाहते हैं, उन्हें एक भाषाई सार के साथ जोड़ते हैं।
- इस दृष्टिकोण ने उन्हें ग्लास पेंटिंग, टेराकोटा और कांस्य मूर्तिकला सहित विभिन्न कलात्मक माध्यमों पर अपना अधिकार स्थापित करने में सक्षम बनाया है।
- इस विशेष एचिंग में गौड़ ने मानव आकृतियों को पृष्ठभूमि में पेड़ों के साथ चित्रित किया है, जो प्रकृति में गहराई से डूबे अपने बचपन की यादों से प्रेरणा लेते हैं।
- कलाकृति में विस्तृत रूपरेखा, किसानों का यथार्थवादी चित्रण और शैलीगत सौम्यता शामिल है, जिससे चित्रित आकृतियाँ कठपुतली की भाँति प्रतीत होती हैं।
- ग्राफिक चित्र रेखांकन पर आधारित रंगीन छवि है, जो कलात्मक दृष्टि से यथार्थवादी किंतु सामान्य और सौम्य अभिव्यंजनावादी विरूपण है। उनकी अन्य उल्लेखनीय कृतियों में **"वुमन," "मेन," "लैंडस्केप ऑफ टर्की," "अनटाइटल्ड," और "शियान चाइना"** जैसी कलाकृतियाँ शामिल हैं।

ट्राइम्फ ऑफ लेबर (श्रम की विजय)

चित्र 5.22: ट्राइम्फ ऑफ लेबर (श्रम की विजय)

- कांस्य से बनी यह विशालकाय मूर्ति **देवी प्रसाद रॉय चौधरी (1899-1975)** द्वारा निर्मित है। इसका अनावरण वर्ष **1959** में गणतंत्र दिवस की पूर्व संध्या पर चेन्नई के मरीना बीच पर किया गया था।
- इस मूर्ति में चार व्यक्तियों को एक विशाल चट्टान को सरकाने का प्रयास करते दिखाया गया है, जो **राष्ट्र के विकास में मानव श्रम की सर्वोपरि भूमिका का प्रतीक है।**
- इस शिल्प में अजेय पुरुषों को प्रकृति की चुनौतियों से अडिग दृढ़ संकल्प और अदम्य शक्ति के साथ जूझते हुए दर्शाया गया है।
- यह श्रम की प्रकृति के विरुद्ध वह छवि है, जो उन्नीसवीं शताब्दी का एक लोकप्रिय स्वच्छंद विषय रहा है।
- देवी प्रसाद का **श्रमिकों की मजबूत माँसपेशियों और शारीरिक संरचना** के प्रति विशेष आकर्षण था, इसलिए वह उनकी अस्थियों, माँसपेशियों, नसों और मांसलता को जटिल रूप से चित्रित करते हैं।
- उन्होंने एक स्थिर चट्टान को हटाने के लिए आवश्यक शारीरिक परिश्रम का कुशलतापूर्वक चित्रण किया है।
- मूर्तिकला में मानव आकृतियों की व्यवस्था दर्शकों में जिज्ञासा पैदा करती है तथा उन्हें चारों तरफ से घूमकर इसे देखने के लिए आकर्षित करती है।
- इस शिल्प में श्रमिक आकृतियों का समूह एक विशाल मंच पर स्थापित है। यह ठीक उस परंपरा के विपरीत है, जिसमें राजाओं या ब्रिटिश गणमान्य व्यक्तियों की प्रतिमाएँ लगाई जाती थीं। यह राष्ट्र की प्रगति में साझा प्रयास के महत्त्व पर प्रकाश डालता है।

चित्र 5.23: संथाल फैमिली (संथाल परिवार)

संथाल फैमिली (संथाल परिवार)

- **रामकिंकर बैज ने वर्ष 1937** में इस विशालकाय मूर्तिशिल्प को निर्मित किया था।
- इसे धातु के आर्मेचर और कंक्रीट मिश्रित सीमेंट से बनाया गया है तथा शांतिनिकेतन में स्थित भारत के सर्वप्रथम राष्ट्रीय कला विद्यालय 'कला भवन' के प्रांगण में रखा गया है।
- मूर्ति में एक संथाल पुरुष अपने बच्चों को एक डंडे से जोड़े हुए दोहरी टोकरी में ले जा रहा है और उसके साथ उसकी पत्नी को चलते हुए प्रदर्शित किया गया है तथा दूसरी तरफ एक कुत्ते को दिखाया गया है।

Search On Telegram: @apna_library_pdf

Join Telegram: @apna_library

- यह शिल्प संभवतः प्रवासी परिवार के एक स्थान से दूसरे स्थान की ओर पलायन यात्रा को दिखाता है, जो अपनी समस्त संपत्ति को ले जा रहा है।
- ग्रामीण परिवेश में रहने वाले कलाकार के लिए ऐसे दृश्य रोजमर्रा के जीवन का हिस्सा थे। हालाँकि, उन्होंने इस साधारण दृश्य को एक स्मारकीय स्तर प्रदान करने का निर्णय किया।
- इस मूर्ति का एक उल्लेखनीय पहलू यह है, कि इसे चारों तरफ से उकेरकर बनाया गया है, जिससे दर्शक इसे सभी दिशाओं से देख सकते हैं।
- यह एक कम ऊँचे अधिस्ठान पर रखा गया है, जो दर्शकों को अपनी ओर खींचता है।
- यह शिल्प ऐतिहासिक महत्त्व रखता है क्योंकि इसे भारत की पहली सार्वजनिक आधुनिकतावादी मूर्ति माना जाता है।
- एक अतिरिक्त उल्लेखनीय विशेषता इसकी सुलभता है, क्योंकि यह कला भवन के बाहर स्थित है, जिससे इसे देखने के लिए संग्रहालय जाने की आवश्यकता नहीं होती।
- रामकिंकर बैज ने इस शिल्प के लिए संगमरमर, लकड़ी या पत्थर जैसे पारंपरिक माध्यमों का प्रयोग न करते हुए सीमेंट को वरीयता दी है, जो आधुनिकीकरण का प्रतीक है।

क्राइज अन हर्ड (अनसुनी चीखें)

- वर्ष **1958** में **अमरनाथ सहगल** द्वारा निर्मित इस कांस्य मूर्ति में मुख्यतः अमूर्तन का प्रयोग किया गया है।
- इस कलाकृति में तीन आकृतियों को **सपाट, लयबद्ध समतल में व्यवस्थित छड़ी के आकार में चित्रित किया गया है।**
- अमूर्त शैली के बावजूद दर्शक आसानी से उन्हें पति, पत्नी और बच्चे वाले परिवार के रूप में समझ सकते हैं।
- इन आकृतियों को बाहें फैलाए हुए दिखाया गया है, जो **मदद के लिए चीखते हुए प्रतीत होती हैं, लेकिन उनकी आवाज को कोई नहीं सुनता है।**
- मूर्तिकला के माध्यम से हाथ के संकेत अभिव्यक्त करके उनकी विवशता को एक स्थायी आकार में बदल दिया गया है।
- इस मूर्तिकला को समाजवादी परिप्रेक्ष्य से देखा जा सकता है, जहाँ कलाकार उन लाखों निस्सहाय परिवारों को श्रद्धांजलि अर्पित करता है, जिन्हें सहायता की आवश्यकता है, जिनकी चीखें बहरे कानों में पड़ती हैं।
- यह उल्लेखनीय है कि समाजवादी कवि **मुल्क राज आनंद ने** इस कलाकृति पर एक मार्मिक टिप्पणी लिखी थी।
- यह कलाकृति अब नई दिल्ली स्थित **"राष्ट्रीय आधुनिक कला संग्रहालय"** में संगृहीत है।

चित्र 5.24: क्राइज अन हर्ड (अनसुनी चीखें)

गणेश

- **ऑक्सीकृत तांबे से बनी** इस मूर्ति का निर्माण वर्ष **1970** में **पी. वी. जानकीराम** ने किया था और यह वर्तमान में दिल्ली स्थित राष्ट्रीय आधुनिक कला गैलरी में संगृहीत है।
- जानकीराम ने स्वतंत्र आकृतियों के रूप में इस चित्रात्मक मूर्ति को बनाने के लिए तांबे की चादरों का प्रयोग किया है।
- उन्होंने इन आकृतियों की सतह को जटिल रैखिक तत्त्वों से अलंकृत किया है। ये रेखाएँ दोहरे उद्देश्य से कार्य करती हैं, जो चेहरे की विशेषताओं और सजावटी रूपांकनों दोनों के रूप में काम करती हैं और दर्शकों को चिंतन-मनन करने के लिए आमंत्रित करती हैं।
- जानकीराम ने दक्षिण भारत की प्राचीन मंदिर मूर्तियों से प्रेरणा ली। गणेश की आकृति को सम्मुख मुद्रा में तैयार किया गया है, जो कि गुफा और मंदिर शिल्प का एक महत्त्वपूर्ण देशज चरित्र है।
- इस मूर्ति में गणेश को **वीणा** बजाते हुए दिखाया गया है, जो एक संगीत वाद्ययंत्र है।
- सामग्री का तकनीकी सम्मिश्रण होने के बाद भी मूर्तिशिल्प का विवरण जानकीराम के शिल्प कौशल को दर्शाता है।
- इसके अलावा जानकीराम ने स्वदेशी शिल्प कौशल में पाए जाने वाले **'खुलेपन'** की अवधारणा के साथ प्रयोग किया।
- गणेश पारंपरिक कल्पना की उनकी गहरी समझ का प्रतीक हैं, जहाँ उन्होंने जटिल रैखिक विवरणों को एक व्यापक रूप में बदल दिया।
- त्रि-आयामी गुणों पर जोर देने के बजाय, उन्होंने मूर्तिशिल्प की रूपरेखा रैखिक आकार की तैयार की है। काव्यात्मक शैली के द्वारा लय एवं वृद्धि को सम्मिलित किया गया है।
- कुल मिलाकर यह लोक और पारंपरिक शिल्प कौशल के सामंजस्यपूर्ण मिश्रण को दर्शाता है।

चित्र 5.25: गणेश

Search On TG: @

PW ONLYIAS BY PHYSICS WALLAH

Join Telegram: @apna_library

वनश्री

- **'वनश्री'** या **'जंगल की देवी'** नामक इस कलाकृति को **मृणालिनी मुखर्जी ने वर्ष 1994** में बनाया था।
- इस मूर्ति को अद्वितीय बनाने वाली बात यह है, कि इसे बनाने में मुखर्जी ने असामान्य सामग्री **'सुतली के रेशा'** का उपयोग किया है।
- उन्होंने **1970** के दशक के आरम्भ में इस माध्यम के साथ प्रयोग करना शुरू किया तथा इसमें उनकी निपुणता उन जटिल और पेचीदा आकृतियों से स्पष्ट होती है, जिन्हें उन्होंने **जूट के रेशे का उपयोग करके बुना और गूंथा है**।
- कई वर्षों तक इस शैली में उनके कार्यों को **ललित कला के बजाय शिल्प मानकर खारिज कर दिया गया**।
- हालाँकि, हाल के दिनों में उनके रेशों के कार्यों ने उनकी कल्पना की मौलिकता एवं साहस के लिए अत्यधिक ध्यान आकर्षित किया है।
- 'वनश्री' में मुखर्जी ने इस साधारण सामग्री को एक स्मारकीय रूप दे दिया है।
- यदि आप आकृति के शरीर को ध्यानपूर्वक देखें, तो आप देख सकते हैं कि इसमें आंतरिक अभिव्यक्ति और उभरे हुए होंठ के साथ एक चेहरा है तथा सबसे ऊपर एक शक्तिशाली प्राकृतिक देवत्व की उपस्थिति है।

चित्र 5.26: वनश्री

निष्कर्ष

आधुनिक भारतीय कला परंपरा, उपनिवेशवाद और समकालीन प्रभावों के सक्रिय संबंधों के माध्यम से विकसित हुई है। रवींद्रनाथ टैगोर और अमृता शेरगिल जैसे अग्रदूतों ने **20**वीं सदी की शुरुआत में इसकी नींव रखी, उसके बाद एम. एफ. हुसैन और के. जी. सुब्रमण्यम जैसे कलाकारों ने विविध माध्यमों और विषयों की खोज की, जिसमें पश्चिमी आधुनिकता को स्वदेशी परंपराओं के साथ मिलाया गया। **1970** के दशक में सामाजिक टिप्पणी से लेकर **1990** के दशक में नवीन मीडिया को अपनाने तक, भारतीय कलाकार लगातार सामाजिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक संदर्भों को प्रतिबिंबित करने के लिए स्वयं को ढालते रहे हैं। देवी प्रसाद रॉय चौधरी, रामकिंकर बैज और अमरनाथ सहगल जैसे मूर्तिकारों ने श्रम और मनुष्य की दृढ़ता से संबंधित प्रसिद्ध मूर्तियाँ बनाईं। आधुनिक भारतीय कला रचनात्मकता और अनुकूलन की एक आकर्षक कहानी बनी हुई है। आधुनिक भारतीय कला का विकास इसकी जीवंतता और विविधता का प्रमाण है।

महत्त्वपूर्ण शब्दावलियाँ

- **आधुनिक भारतीय कला:** यह शब्द **19**वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध से लेकर वर्तमान तक भारत में दृश्य कला के कलात्मक आंदोलनों और विकास को संदर्भित करता है, जिसमें प्रायः पश्चिमी आधुनिकता के साथ स्वदेशी परंपराओं का मिश्रण दिखाई देता है।
- **बंगाल स्कूल:** **19**वीं शताब्दी के अंत में अवनीन्द्रनाथ टैगोर द्वारा स्थापित एक कला आंदोलन, जिसमें भारतीय कला परंपराओं के पुनरुद्धार पर बल दिया गया।
- **समन्वय:** विभिन्न सांस्कृतिक या धार्मिक तत्त्वों का सामंजस्यपूर्ण समग्रता में सम्मिश्रण या विलय।
- **भित्ति-चित्र (म्यूरल):** एक बड़ी कलाकृति या पेंटिंग, जो आमतौर पर सीधे दीवार या छत पर कथात्मक या सजावटी उद्देश्य से बनाई जाती है।
- **तांत्रिक दर्शन:** दक्षिण एशिया में विकसित आध्यात्मिक प्रथाओं और मान्यताओं का एक समूह, जो देवताओं की पूजा और ज्ञान की खोज से जुड़ा हुआ है।
- **समाजवादी कला:** समाजवादी या साम्यवादी आदर्शों को बढ़ावा देने वाली कलाकृतियाँ, जो श्रम, सामाजिक न्याय और श्रमिक वर्ग के संघर्षों के विषयों पर केंद्रित होती हैं।
- **रेखीय छायाचित्र:** किसी वस्तु या आकृति की रूपरेखा या समोच्च का द्वि-आयामी प्रदर्शन, जिसका उपयोग कला में शैलीकरण के लिए किया जाता है।
- **हेम्प-फाइबर:** हेम्प पौधे से प्राप्त एक सामग्री, जिसका उपयोग वस्त्रों तथा मूर्तिकला निर्माण में किया जाता है।
- **फाइबर कला:** एक कला रूप, जिसमें प्राकृतिक या सिंथेटिक फाइबर जैसे जूट या सुतली का उपयोग मूर्तियाँ, वस्त्र या कला के अन्य रूपों को बनाने के लिए किया जाता है।
- **समकालीन कला:** कला जो वर्तमान सामाजिक, सांस्कृतिक और तकनीकी प्रभावों को प्रतिबिंबित करती है।

Search On TG: @apna_pdf

Join Telegram: @apna_library

6 सिंधु घाटी की कलाएँ

संदर्भ: इस अध्याय में NCERT पाठ्यपुस्तक की कक्षा-XI (भारतीय कला का परिचय: भाग-I) के अध्याय-2 का सारांश शामिल है।

परिचय

सिंधु नदी की घाटी में कला का उद्भव ईसा-पूर्व तीसरी सहस्राब्दी के उत्तरार्द्ध में हुआ था, जो रचनात्मकता की एक समृद्ध झलक प्रस्तुत करती है। हड़प्पा और मोहनजोदड़ो जैसे स्थलों पर कलाकारों ने **प्रतिमाएँ, मुहरें, मिट्टी के बर्तनों, आभूषणों और पकी हुई मिट्टी की मूर्तियों** के माध्यम से अपनी उत्कृष्ट संवेदनशीलता और ज्वलंत कल्पना को व्यक्त किया। विशेष रूप से मनुष्यों और पशुओं की मूर्तियों का अत्यधिक स्वाभाविक चित्रण अद्वितीय शारीरिक विवरण को दर्शाता है। कला से परे, ये शहर नगर नियोजन के प्रारंभिक आश्चर्य के रूप में हैं, जिनमें मकान, बाजार और सार्वजनिक स्नानागार अत्यधिक व्यस्थित रूप से यथास्थान पर बने हुए हैं। पाकिस्तान के हड़प्पा और मोहनजोदड़ो से लेकर भारत के **लोथल और धौलावीरा** (गुजरात), **राखीगढ़ी** (हरियाणा), **रोपड़** (पंजाब) एवं **कालीबंगा** (राजस्थान) तक विस्तृत प्रमुख स्थलों के साथ, **अत्यधिक विकसित जल निकासी प्रणाली** इन प्राचीन समाजों की परिष्कृतता को और अधिक रेखांकित करती है।

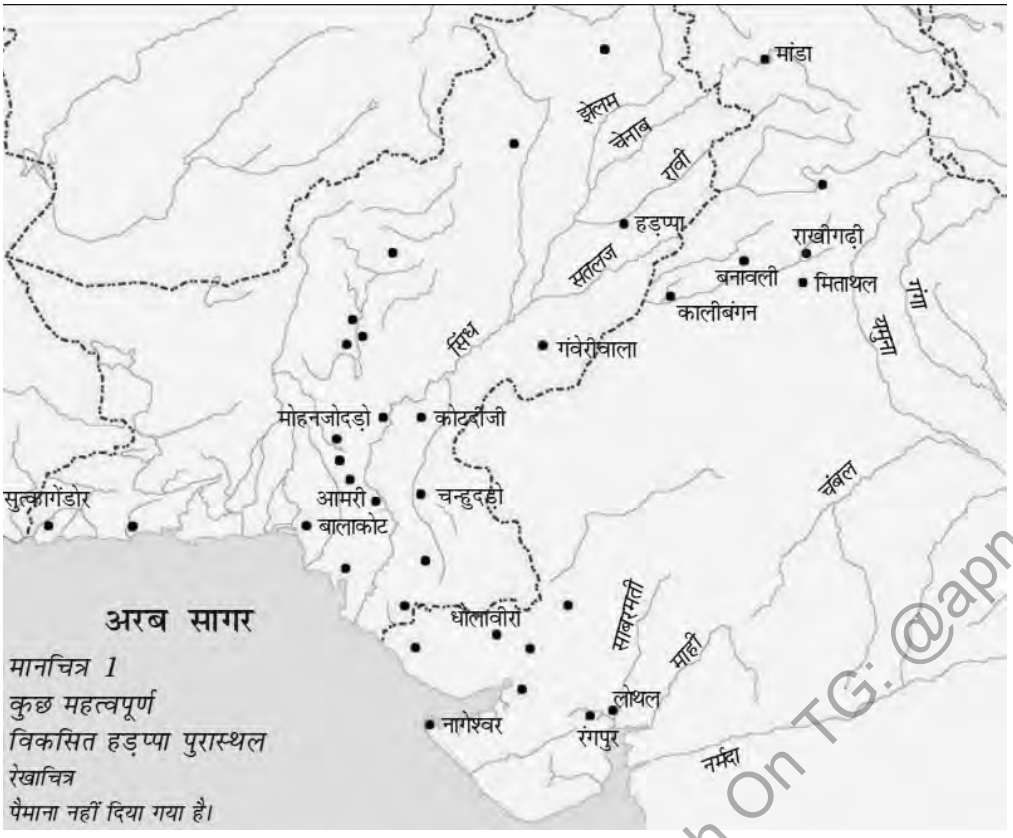

चित्र 6.1: सिन्धु घाटी सभ्यता स्थल

Search On TG: @apna_pdf

Join Telegram: @apna_library

पत्थर की मूर्तियाँ

चित्र 6.2: दाढ़ी वाले पुजारी की प्रतिमा

- हड़प्पाई स्थलों पर पाई गई मूर्तियाँ भले ही संख्या की दृष्टि से बहुत अधिक नहीं हैं, परंतु कला की दृष्टि से उच्च कोटि की हैं।
- हड़प्पा और मोहनजोदड़ो में पाई गई पत्थर की मूर्तियाँ **त्रि-आयामी वस्तुएँ** बनाने का उत्कृष्ट उदाहरण हैं।
- इनमें एक पुरुष धड़ है, जो **लाल चूना पत्थर** का बना है और **एक दाढ़ी वाले पुरुष की आवक्ष मूर्ति** है, जो सेलखड़ी की बनी है। दाढ़ी वाले पुरुष को एक धार्मिक व्यक्ति माना जाता है।
- इस आवक्ष मूर्ति को शॉल ओढ़े हुए दिखाया गया है। शॉल बाएँ कंधे के ऊपर से और दाहिनी भजा के नीचे से डाली गई है। शॉल त्रिफुलिया नमूनों से सजी हुई है। आँखें कुछ लंबी और आधी बंद दिखाई गई हैं, मानों वह पुरुष ध्यानावस्थित हो।
- नाक सुन्दर बनी हुई है और होंठ कुछ आगे निकले हुए हैं, जिनके बीच की रेखा गहरी है। कान सीप जैसे दिखाई देते हैं और उनके बीच में छेद हैं।
- बालों को बीच की माँग के द्वारा दो हिस्सों में बाँटा गया है और सिर के चारों ओर एक सादा बना हुआ फीता बंधा हुआ दिखाया गया है।

- पुरुष धड़ की यह मूर्ति लाल बलुआ पत्थर की बनी है। इसमें सिर और भुजाएँ जोड़ने के लिए गर्दन और कंधो में गड्ढे बने हुए हैं।
- धड़ के सामने वाले हिस्से को एक विशेष मुद्रा में सोच-समझकर बनाया गया है। पेट कुछ बाहर निकला हुआ है।

चित्र 6.3: पुरुष धड़

कांसे की ढलाई

- हड़प्पा के लोग कांस्य-ढलाई की कला में निपुण थे तथा **'लुप्त मोम' तकनीक** का प्रयोग करते थे।
- इसमें मोम की एक प्रतिमा को चिकनी मिट्टी से पूरी तरह लीपकर सुखाने के लिए छोड़ दिया जाता था। जब वह पूरी तरह सूख जाती थी, तो उसे गर्म किया जाता था और उसके मिट्टी के आवरण में एक छोटा सा छेद बनाकर उस छेद के रास्ते सारा पिघला हुआ मोम बाहर निकाल दिया जाता था। इसके बाद चिकनी मिट्टी के खाली साँचे में उसी छेद के रास्ते पिघली हुई धातु भर दी जाती थी। जब वह धात ठंडी होकर ठोस हो जाती थी, तो चिकनी मिट्टी के आवरण को हटा दिया जाता था।

- सिंधु घाटी सभ्यता की कलाकृतियों में सर्वोत्कृष्ट कृति एक नाचती हुई लड़की यानी नर्तकी की कांस्य प्रतिमा है, जिसकी ऊँचाई लगभग चार इंच है।
- मोहनजोदड़ो में पाई गई यह मूर्ति तत्कालीन ढलाई कला का एक उत्कृष्ट नमूना है। नर्तकी की त्वचा का रंग साँवला दिखाया गया है।
- वह लगभग निर्वस्त्र है और उसके लंबे केश सिर के पीछे एक जूड़े के रूप में गुथे हुए हैं। उसकी बाईं भुजा चूड़ियों से ढकी हुई है।
- वह अपनी दाईं भुजा के ऊपरी भाग में बाजूबंद और नीचे के भाग में कड़ा पहने हुए है। कौड़ियों से बना एक हार उसके गले की शोभा बढ़ा रहा है।
- उसका दाहिना हाथ उसकी कमर पर टिका है और बायाँ हाथ परंपरागत भारतीय नत्य की मुद्रा में उसके घुटने से कुछ ऊपर बाईं जंघा पर टिका हुआ है।

चित्र 6.4: कांस्य नर्तकी की मूर्ति

- मोहनजोदड़ो में पाई गई यह कांस्य प्रतिमा विशेष रूप से उल्लेखनीय है, क्योंकि इसमें एक भारी-भरकम वृषभ को आक्रामक मुद्रा में प्रस्तुत किया गया है।
- वृषभ गुस्से में अपना सिर दाई ओर घुमाए हुए है और उसके गले में एक रस्सा बंधा हुआ है।

चित्र 6.5: वृषभ

Search @apna_pdf

Join Telegram: @apna_library

- कांस्य में मनुष्यों **और पशुओं** दोनों की ही मूर्तियाँ बनाई गई हैं। **कांस्य की बनी हुई पशुओं की मूर्तियों में भैसा और बकरी** की मूर्तियाँ विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।
- सिंधु घाटी सभ्यता के सभी केंद्रों में कांस्य की ढलाई का काम बहुतायत में होता था। **लोथल** में पाया गया **तांबे का कुत्ता** और **पक्षी** तथा **कालीबंगा में पाई गई साँड़ की कांस्य मूर्ति** जैसे उदाहरण शामिल हैं।
- यह परंपरा हड़प्पा और ताम्रपाषाण स्थलों जैसे- दैमाबाद में व्याप्त रही, जहाँ मानव और पशु आकृतियों की धातु निर्मित मूर्तियों ने मूर्तिकला प्रतिमा की समृद्ध विरासत को बनाए रखा।

मृण्मूर्तियाँ (टेराकोटा)

- सिंधु घाटी के लोगों द्वारा तैयार की गई टेराकोटा प्रतिमाएँ मानव रूप को दर्शाने में तुलनात्मक रूप से अपरिष्कृत हैं, लेकिन विशेषकर गुजरात के स्थलों और कालीबंगा में **यथार्थवाद** प्रदर्शित करती हैं।
- सिंधु घाटी की मूर्तियों में **मातृदेवी की प्रतिमाएँ** अधिक उल्लेखलीय हैं।

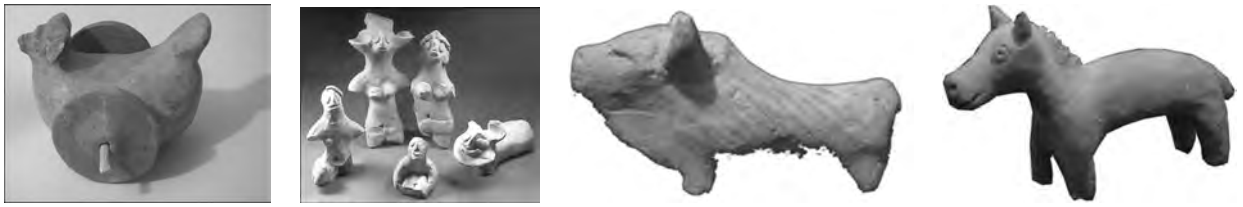

चित्र 6.6: टेराकोटा के खिलौने

- मातृदेवी की मूर्तियों को आमतौर पर भद्दी अपरिष्कृत खड़ी मुद्रा में, उठे हुए उरोजों पर हार लटकाए और कमर के चारों ओर एक अधोवस्त्र लपेटे हुए और करधनी पहने हुए दिखाया गया है।
- सिर पर पंखे जैसा आवरण और दोनों तरफ प्यालेनुमा ऊभार सिंधु घाटी की मातृदेवी की प्रतिमाओ की एक अलंकारिक विशेषता है।
- इन आकृतियों की गोल-गोल आँखें और चोंच जैसी नाक बहुत भद्दी दिखाई देती है तथा उनका मुँह ऐसा लगता है कि जैसे चीरकर बनाया गया हो।

चित्र 6.7: मातृदेवी की मूर्ति

- मिट्टी की मूर्तियों में कुछ दाढ़ी-मूँछ वाले ऐसे पुरुषों की भी छोटी-छोटी मूर्तियाँ पाई गई हैं, जिनके **बाल गुंथे हुए (कुंडलित) हैं**, जो एकदम सीधा खड़ा है, टांगें थोड़ी चौड़ी हैं और भुजाएँ शरीर के समानांतर नीचे की ओर लटकी हुई हैं।
- **एक सींग वाले देवता** का मिट्टी का बना मुखौटा भी मिला है।
- एक सींग वाले देवता का मिट्टी का बना मुखौटा भी मिला है। इनके अलावा मिट्टी की बनी पहिएदार गाड़ियाँ, सीटियाँ, पशु-पक्षियों की आकृतियाँ, **खेलने के पासे**, गिट्टियाँ, चक्रिका (डिस्क) भी मिली हैं।

मुद्राएँ (मुहरें)

- पुरातत्त्वविदों को हज़ारों की संख्या में मुहरें (मुद्राएँ) मिली हैं, जो आमतौर पर **सेलखड़ी** और कभी-कभी **गोमेद, चकमक पत्थर, तांबा, कांस्य और मिट्टी** से बनाई गई थीं।
- इन मुद्राओं पर एक सींग वाले **साँड़, गैंडा, बाघ, हाथी, जंगली भैंसा, बकरी आदि पशुओं** की सुंदर आकृतियाँ बनी हुई थीं। इन आकृतियों में प्रदर्शित विभिन्न स्वाभाविक मनोभावों की अभिव्यक्ति विशेष रूप से उल्लेखनीय है।
- इन मुद्राओं को तैयार करने का उद्देश्य मुख्य रूप से वाणिज्यिक था। ये मुद्राएँ **बाजूबंद** के तौर पर भी कुछ लोगों द्वारा पहनी जाती थीं, जिनसे उन व्यक्तियों की पहचान की जा सकती थी।

चित्र 6.8: एक सिंघे की मुहर

Search On TG: @apna_pdf

PW ONLYIAS BY PHYSICS WALLAH

Join Telegram: @apna_library

- हड़प्पा की **मानक मुद्रा 2x2 इंच की वर्गाकार पटिया होती थी**, जो आमतौर पर सेलखड़ी से बनाई जाती थी। प्रत्येक मुद्रा में एक चित्रात्मक लिपि खुदी होती थी, जो अभी तक पढ़ी नहीं जा सकी है।
- कुछ मुद्राएँ हाथी-दाँत की भी पाई गई हैं। मुद्राओं की आकृतियाँ अनेक प्रकार के होती थी, परंतु अधिकांश में कोई पशु जैसे- कूबड़दार या बिना कूबड़ वाला साँड़, हाथी, बाघ, बकरे और दैत्याकार पशु बने होते थे। उनमें कहीं-कहीं पेड़ों और मानवों की आकृतियाँ भी बनी पाई गई हैं।
- सर्वाधिक उल्लेखनीय मुहर "पशुपति की मुहर" है, जिसके केंद्र में एक मानव आकृति और उसके चारों ओर कई पशु बने हैं।

- इस मुद्रा में एक मानव आकृति पैरों को मोड़कर बैठी हुई दिखाई गई है।
- इस मानव आकृति के दाएँ ओर एक हाथी और एक बाघ (शेर) है, जबकि बाएँ ओर एक गैंडा और भैंसा दिखाए गए हैं।
- इन पशुओं के अलावा बैठे हुए मानव के नीचे दो बारहसिंघा हैं।
- यह मानव आकृति "पशुपति की मुहर" के नाम से प्रसिद्ध है।

चित्र 6.9: पशुपति की मुहर

- तांबे की वर्गाकार या आयताकार पट्टियाँ (टैबलेट) पाई गई हैं, जिनमें एक ओर मानव आकृति और दूसरी ओर कोई अभिलेख अथवा दोनों ओर ही कोई अभिलेख है।
- 2500 से 1900 ईसा पूर्व के मध्य वाली इन पट्टियों पर आकृतियाँ और अभिलेख किसी नोकदार औजार (छेनी) से सावधानीपूर्वक काटकर अंकित किए गए हैं।

मृदभांड

- इन पुरास्थलों से बड़ी संख्या में प्राप्त मृद्भांडों (मिट्टी के बर्तनों) तथा उन्हें बनाने की शैलियों से हमें तत्कालीन आकृतियों के भिन्न-भिन्न रूपों तथा विषयों के विकास का पता चलता है।
- मिट्टी के बर्तन अधिकतर कुम्हार की चाक पर बनाए गए बर्तन हैं, कुछ ही हाथ से बनाए गए बर्तन हैं।
- इनमें रंगे हुए बर्तन कम और **सादे बर्तन** अधिक हैं। ये सादे बर्तन आमतौर पर **लाल चिकनी मिट्टी** के बने हैं, इनमें से कुछ पर सुंदर लाल या स्लेटी लेप लगी है। कुछ **घुंडीदार पात्र** हैं, जो घुंडियों की पंक्तियों से सजे हैं।

- मोहनजोदड़ो में पाया गया यह पात्र कुम्हार की चाक पर चिकनी मिट्टी से बना हुआ है।
- कुम्हार ने अपनी कुशल अँगुलियों की सहायता से उसे एक आकर्षक रूप दिया है। आग में पकाने के बाद इस मिट्टी के पात्र को काले रंग से रंगा गया है।
- इस पर बने हुए चित्र वनस्पतियोंऔर ज्यामितीय आकृतियों के हैं। वैसे तो ये चित्र साधारण हैं, लेकिन इनमें अमूर्तिकरण की प्रवृत्ति दिखाई देती है।

चित्र 6.10: मिट्टी का एक पात्र

- काले रंगीन बर्तनों पर लाल लेप की एक सुन्दर परत है, जिस पर चमकीले काले रंग से ज्यामितीय आकृतियाँ और पशुओं के डिज़ाइन बने हैं।
- **बहुरंगी मृद्भांड** बहुत कम पाए गए हैं। इनमें मुख्य रूप से छोटे-छोटे कलश शामिल हैं, जिन पर लाल, काले, हरे और कभी-कभी सफ़ेद तथा पीले रंगों में ज्यामितीय आकृतियाँ बनी हुई हैं। उत्कीर्णित बर्तन भी बहुत कम पाए गए हैं और जो पाए गए हैं, उनमें उत्कीर्णन की सजावट पेंदे पर तथा बलि-स्तंभ की तश्तरियों तक ही सीमित थी।
- **छिद्रित पात्रों** में एक बड़ा छिद्र बर्तन के तल पर और छोटे छिद्र उनकी दीवार पर सर्वत्र पाए गए हैं। ऐसे बर्तन शायद पेय पदार्थों को छानने के काम में लाए जाते थे।
- **घरेलू कार्यों में प्रयोग किए जाने वाले मिट्टी के बर्तन** अनेक रूपों तथा आकारों में पाए गए हैं। सीधे और कोणीय रूपों वाले बर्तन अपवाद के तौर पर भले ही मिले हों, परंतु लगभग सभी बर्तनों में सुंदर मोड़ पाए गए हैं। छोटे-छोटे पात्र, जो अधिकतर आधे इंच से भी कम ऊँचाई वाले हैं, विशेष तौर पर इतने अधिक सुंदर बने हुए हैं कि कोई भी दर्शक उनकी प्रसंशा किए बिना नहीं रहता।

Search On TG: @apna_pdf

Join Telegram: @apna_library

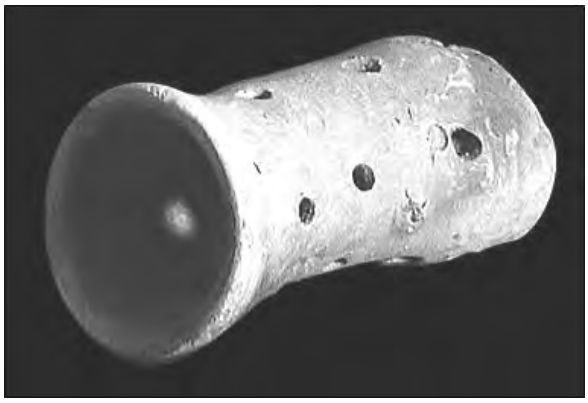

चित्र 6.11: (a) छिद्रित बर्तन और (b) मिट्टी के बर्तन

मनके और आभूषण

चित्र 6.12: मोती और आभूषण

- हड़प्पा के पुरुष और स्त्रियाँ स्वयं को तरह-तरह के आभूषणों से सजाते थे। ये आभूषण बहुमूल्य धातुओं और **रत्नों से लेकर हड्डी और पकी हुई मिट्टी** तक के बने होते थे।
- गले के **हार, फीते, बाजूबंद और अंगूठियाँ** आमतौर पर पुरुषों और स्त्रियों दोनों के द्वारा समान रूप से पहनी जाती थीं, परंतु करधनियाँ, बूंदे (कर्णफूल) और पैरों के कड़े या पैजनियाँ स्त्रियाँ ही पहना करती थी।
- मोहनजोदड़ो और लोथल से ढेरों गहने मिले हैं, जिनमें सोने और मूल्यवान नगों के हार, तांबे के कड़े और मनके, सोने के कुंडल, बूंदे/झुमकें और शीर्ष-आभूषण, लटकन और सेलखड़ी के मनके तथा बहुमूल्य रत्न शामिल हैं। सभी **आभूषणों को सुंदर ढंग** से बनाया गया है।
- यह ध्यान देने वाली बात है कि हरियाणा के फरमाना पुरास्थल पर एक कब्रिस्तान (शवाधान) पाया गया है, जहाँ **शवों को गहनों के साथ दफनाया** गया है।
- चन्हूदड़ो और लोथल के कारखानों में **मनका उद्योग** स्पष्ट रूप से दिखाई देता है, जहाँ विभिन्न सामग्रियों से मनके बनाए जाते हैं जो तकनीकी कौशल और विविध आकृतियों को दर्शाता है।
- हड़प्पा के लोग पशुओं विशेष रूप से बंदरों और गिलहरियों के नमूने बनाते थे, जो एकदम वास्तविक दिखाई देते थे। इनका उपयोग पिन की नोक और मनकों के रूप में किया जाता था।
- सिंधु घाटी के घरों में बड़ी संख्या में **तकुए और तकुआ चक्रियाँ** भी मिली हैं, जिससे पता चलता है कि उन दिनों कपास और ऊन की कताई बहुत प्रचलित थी।
- सिंधु घाटी के लोग शृंगार के प्रति काफ़ी जागरूक थे। उनमें केश-सज्जा की भिन्न-भिन्न शैलियाँ प्रचलित थीं। पुरुष दाढ़ी-मूँछ रखते थे। स्त्रियाँ सुंदर दिखने के लिए सिंदूर, काजल, लाली का प्रयोग करती थीं और चेहरे पर लेप लगाती थीं।
- धौलावीरा में पत्थरों के ढाँचों के अनेक अवशेष मिले हैं, जिनसे यह प्रकट होता है कि सिंधु घाटी के लोग अपने घर आदि के निर्माण में **पत्थर का प्रयोग** करते थे।
- सिंधु घाटी के कलाकार एवं शिल्पकार अनेकों शिल्पों में अत्यधिक पारंगत थे, जिनमें धातु का ढलाव, पत्थरों पर **नक्काशी, मिट्टी के बर्तन बनाना और उन्हें रंगना एवं पशु, पौधे और पक्षियों के साधारण रूप को लेकर टेराकोटा का निर्माण मुख्य** है।

निष्कर्ष

सिंधु घाटी सभ्यता प्राचीन कलात्मक और तकनीकी कौशल का प्रतीक है। पत्थर और कांस्य की परिष्कृत मूर्तियों से लेकर, वाणिज्यिक और ताबीज़ या बाजुबंदों से संबंधित उद्देश्यों को दर्शाने वाली जटिल मुहरों से लेकर आकृतियों के विकास को प्रदर्शित करने वाली विविध मिट्टी के बर्तनों की शैलियों तक, सिंधु घाटी सभ्यता की कलात्मक विरासत समृद्ध और विविध है। विभिन्न सामग्रियों द्वारा सटीकता के साथ तैयार किए गए अलंकरण और आभूषण, न केवल शृंगार की भावना को बल्कि सामाजिक जटिलता को भी दर्शाते हैं। इसके अतिरिक्त मनका उत्पादन में विशेषज्ञता, पशुओं के नमूनें और कताई का व्यापक अभ्यास, सभ्यता के बहुमुखी कौशल का साक्षी है। सिंधु घाटी सभ्यता एक परिष्कृत और सांस्कृतिक रूप से जीवंत प्राचीन समाज का प्रमाण है।

Search on TG: @apna_pdf

ONLYIAS BY PHYSICS WALLAH

Join Telegram: @apna_library

महत्त्वपूर्ण शब्दावलियाँ

- **मुहरें:** उत्कीर्ण प्रतीकों वाली छोटे आकार की कलाकृतियाँ, जिनका उपयोग व्यापार और पहचान के लिए किया जाता है।
- **मृण्मूर्तियाँ (टेराकोटा):** मिट्टी की पकी हुई कलाकृतियाँ, जिनमें मूर्तियाँ और मिट्टी के बर्तन शामिल हैं।
- **लिपि:** मुहरों पर लिखी गई अस्पष्ट लेखन प्रणाली।
- **टेराकोटा मूर्तियाँ:** मनुष्योंऔर पशुओं को दर्शाती मिट्टी की मूर्तियाँ।
- **प्रतिमाएँ:** नक्काशीदार कलाकृतियाँ, जो देवताओं, पशुओं या दैनिक जीवन को दर्शाती हैं।
- **मनकों से निर्मित आभूषण:** मिट्टी, शंख और धातु जैसी सामग्रियों का उपयोग करके जटिल रूप से तैयार किए गए आभूषण।
- **मिट्टी के बर्तन:** कुम्हार के चाक द्वारा और हस्तनिर्मित बर्तन, अद्वितीय ज्यामितीय प्रतिरूप से सुसज्जित।
- **कांस्य प्रतिमा:** सिंधु घाटी सभ्यता के लोगों की उन्नत धातुकर्म तकनीकों को प्रदर्शित करने वाली धातु कलाकृति।
- **मातृदेवी की मूर्ति:** उर्वरता की देवी का चित्रण, जो स्त्री संबंधी पहलुओं के प्रति सम्मान पर बल देता है।

Search On TG: @apna_pdf

Join Telegram: @apna_library

7 मौर्यकालीन कला

संदर्भ: इस अध्याय में NCERT पाठ्यपुस्तक की कक्षा-XI (भारतीय कला का परिचय-I) के अध्याय-3 का सारांश शामिल है।

परिचय

लगभग छठी शताब्दी ईसा पूर्व गंगा घाटी में नए विचारों यथा- बौद्ध तथा जैन मत जैसे नए धर्मों का आविर्भाव हुआ, जिन्होंने पारंपरिक हिन्दू मान्यताओं को चुनौती दी। श्रमण परंपराओं ने इन नए मतों के माध्यम से कुछ सनातन प्रथाओं का विरोध किया। इस दौरान, मगध एक शक्तिशाली राज्य के रूप में उभरा, जिसने मौर्य शासकों को असीम प्रतिष्ठा प्रदान की। 23वीं शताब्दी ईसा पूर्व तक, मौर्य सम्राट अशोक ने बौद्ध धर्म के प्रचार-प्रसार में विशेष भूमिका निभाई, जबकि सम्राट अशोक के समय तक भारत में विशाल साम्राज्य और नए धर्म प्रचलित हो चुके थे। लोगों के पास ईश्वर से जुड़ने के या उसकी उपासना करने के कई तरीके थे, जैसे- योग और भक्ति आदि। जैसे-जैसे बौद्ध धर्म लोकप्रिय हुआ, उसने पारंपरिक धार्मिक मान्यताओं में कुछ परिवर्तन लाए, जिससे प्राचीन भारतीय आध्यात्मिकता का एक नया स्वरूप सामने आया।

चित्र 7.1: सजावटी कमल सहित स्तंभ एवं शीर्ष

स्तंभ

- स्तंभ वास्तुकला और भवन निर्माण की ऊर्ध्वाधर संरचना का भाग हैं। ये एकाश्म पाषाण या लकड़ी के खंडों या टुकड़ों से बने हो सकते हैं, या ईंटों से निर्मित हो सकते हैं।
- स्तंभ, जो प्रायः चुनार बलुआ पत्थर से निर्मित हैं, वे राज्य के प्रतीक के रूप में स्थापित थे, जिनका संपूर्ण मौर्य साम्राज्य में अत्यधिक महत्त्व था।
- **उद्देश्य:** संपूर्ण मौर्य साम्राज्य में बौद्ध विचारधारा और राजकीय आदेशों का प्रचार करना।

मौर्य तथा हखामनी (अकेमेनियन) स्तंभ

स्तंभ निर्माण का इतिहास हखामनी साम्राज्य के समय से विद्यमान था। तालिका 7.1 मौर्य तथा हखामनी स्तंभों के मध्य अंतर को दर्शाती है:

तालिका 7.1: मौर्य बनाम हखामनी स्तंभ

मौर्य स्तंभ	हखामनी स्तंभ
❑ इनकी उत्पत्ति भारत में हुई थी। इसके निर्माण में पत्थर के एकल खंडों से नक्काशीदार चट्टान को काटकर उपयोग किया गया। स्तंभों में जटिल नक्काशी कौशल प्रदर्शित होते हैं। वे मुख्य रूप से मौर्य साम्राज्य के उत्तरी क्षेत्रों में थे। कई मौर्य स्तंभ, जैसे कि सिंह स्तंभ, अत्यधिक चमकदार हैं।	❑ इनकी उत्पत्ति फारस (आधुनिक ईरान) में हुई थी, जो मुख्य रूप से हखामनी साम्राज्य में पाए जाते थे।
❑ कई मौर्य स्तंभों पर शिलालेख उत्कीर्ण किए गए थे। इन स्तंभों की चोटी पर बैल, शेर, हाथी आदि पशुओं की आकृतियाँ उकेरी हुई है।	❑ सिंह शीर्ष धम्मचक्रप्रवर्तन का प्रतीक है। अबेकस(चौकी) का डिज़ाइन मुख्य रूप से चौकोर या गोलाकार था जिसे शैलीबद्ध कमल से सजाया गया था।
❑ इन्हें राजमिस्त्रियों द्वारा टुकड़ों में जोड़कर बनाया गया था। यह संभवतः एक चिनाई वाली इमारत थी।	

- स्तंभों पर सभी आकृतियाँ अत्यधिक कुशलतापूर्वक बारीकी से उकेरी गई हैं, जिन्हें कमल के फूलों से सजे चौकोर या गोलाकार स्तंभों पर खड़ा उकेरा गया हैं।
- शीर्षाकृतियों वाले प्रस्तर स्तंभों में से कुछ प्रमुख स्तंभ आज भी सुरक्षित हैं और बिहार में बसराह-बखीरा, लौरिया-नंदनगढ़ व रामपरुवा तथा उत्तर प्रदेश में संकिसा व सारनाथ में देखे जा सकते हैं।

Search On TG: @apna_pdf

Join Telegram: @apna_library

सारनाथ सिंह शीर्ष

- सारनाथ, वाराणसी में पाया गया मौर्य कालीन स्तंभ शीर्ष जो सिंह शीर्ष के नाम से प्रसिद्ध है, मौर्य वास्तुकला का सर्वाधिक उत्कृष्ट उदाहरण है। यह हमारा राष्ट्रीय प्रतीक भी है।
- इसका निर्माण अशोक द्वारा करवाया गया, यह बुद्ध के प्रथम उपदेश की स्मृति का द्योतक है, जिसे **धम्मचक्रप्रवर्तन** के नाम से जाना जाता है।

(a) सिंह (b) शीर्षफलक (c) कमलाधार

चित्र 7.2: सारनाथ शीर्ष

सिंह शीर्ष के भाग

- सिंह शीर्ष के मूलतः पाँच अव्यय/भाग थे: (i) स्तंभ (शैफ्ट) जो अब कई भागों में टूट चुका है, (ii) एक कमल घंटिका का आधार, (iii) उस पर बना हुआ एक ढोल, जिसमें चार पशु दक्षिणावर्त गति के साथ दिखाए गए हैं, (iv) चार तेजस्वी सिंहों की आगे-पीछे जुड़ी हुई आकृतियाँ, और (v) एक सर्वोपरि तल धर्मचक्र, जो एक बड़ा पहिया है। है। यह चक्र इस समय टूटी या खंडित अवस्था में है तथा सारनाथ के स्थलीय सग्रंहालय में प्रदर्शित है।
- इस सिंह शीर्ष को, उपरिचक्र और कमलाधार के बिना, स्वतंत्र भारत के राष्ट्रीय प्रतीक के रूप में स्वीकार किया गया है।
- वर्तमान में, सिंह शीर्ष सारनाथ के पुरातत्त्व संग्रहालय में सुरक्षित रखा गया है। (चित्र 7.2 देखें)
- **शेरसिंह:** वे प्रभावशाली रूप से अत्यधिक विशाल और स्मारकीय हैं। उनके मुख का पेशीय विन्यास अत्यधिक सुदृढ़ प्रतीक होता है। उनकी सतह पर पॉलिश की गई है, जो मौर्य कालीन कला की विशेषता को दर्शाता है। उनकी आगे निकली हुई घुंघराली अयाल राशि तथा शरीर के भारी बोझ को पैरों की फैली हुई मांसपेशियों के माध्यम से बखूबी दर्शाया गया है।

क्या आप जानते हैं?

- **शीर्षफलक (Abacus):** इसमें प्रत्येक दिशा में 24 तीलियों वाला एक चक्र (पहिया) है। प्रत्येक चक्र के बीच एक बारीक नक्काशीदार बैल, घोड़ा, हाथी और शेर है। चक्र की आकृति बौद्ध कला में धम्मचक्र के प्रतीक के रूप में महत्त्वपूर्ण है। अबेकस में प्रत्येक पशु सीमित स्थान के बावजूद गति को प्रकट करता है।
- **कमलाधार (Lotus Base):** प्रत्येक पंखुड़ी को उसके प्राकृतिक घनत्व पर ध्यान देते हुए बनाया गया है। इसे खूबसूरती से गढ़ी गई उलटी कमल की आकृति द्वारा बनाया गया है।

तुलना और विरासत

- साँची में भी इसी प्रकार की एक सिंह-शीर्ष वाली प्रतिमा पाई गई, परंतु वह खंडित अवस्था में है।
- सिंह शीर्ष वाले स्तंभों को बनाने का क्रम परवर्ती काल में भी जारी रहा, जो इसके स्थायी प्रभाव को दर्शाता है।

चित्र 7.3: यक्ष, परखम

मूर्तियाँ

- ईसा पूर्व तीसरी शताब्दी में मौर्य काल अपनी विशाल मूर्तियों के लिए प्रसिद्ध था, जिसमें यक्ष, यक्षिणियों और अन्य देवताओं के प्रभावशाली चित्रण शामिल थे।
- पटना, विदिशा और मथुरा जैसे अनेक स्थलों पर यक्षों तथा यक्षिणियों की बड़ी-बड़ी मूर्तियाँ पाई गई हैं।

यक्ष और यक्षिणी मूर्तिकला और उसका प्रभाव

- पटना, विदिशा और मथुरा जैसे अनेक स्थलों पर यक्षों तथा यक्षिणियों की बड़ी-बड़ी मूर्तियाँ पाई गई हैं। ये विशाल प्रतिमाएँ अधिकतर खड़ी अवस्था में हैं।
- यक्ष और यक्षिणी की मूर्तियों की पूजा का प्रभाव बौद्ध और जैन स्मारकों में देखा जा सकता है।
- यक्ष और यक्षिणी की प्रमुख मूर्तियाँ पटना, **विदिशा और मथुरा** में पाई गई, जिनमें यक्षिणी की प्रतिमा का एक सर्वोत्कृष्ट उदाहरण दीदारगंज, पटना में देखा जा सकता है।
- सबसे बेहतरीन उदाहरणों में से एक पटना के दीदारगंज की यक्ष की मूर्ति है, जो लंबी और सुडौल है। इसे देखने से ज्ञात होता है कि इसका निर्माता मानव रूपाकृति के चित्रण में अत्यधिक निपुण था। इस प्रतिमा की सतह चिकनी है। (चित्र 7.3 देखें)

विचारणीय बिंदु

मौर्य काल के दौरान विकसित बौद्ध वास्तुकला इस अर्थ में अत्यधिक प्रतीकात्मक थी कि उनमें बुद्ध की प्रतिमाएँ नहीं थी। हालाँकि समय के साथ इसमें बदलाव आया। क्या आप उन कारणों के बारे में सोच सकते हैं कि बौद्ध कला में प्रतीकवाद और कथाएँ समय के साथ क्यों विकसित हुईं तथा ये कलात्मक परिवर्तन बौद्ध धर्म के विकास को किस प्रकार दर्शाते हैं?

Search On TG: @apna_pdf

Join Telegram: @apna_library

यक्षिणी, दीदारगंज

- समकालीन पटना के निकट दीदारगंज से प्राप्त हाथ में चामर (चौरी) पकड़े खड़ी यक्षिणी की आदमकद मूर्ति मौर्य कालीन मूर्तिकला की परंपरा का एक उत्कृष्ट उदाहरण है। यह मूर्ति पटना संग्रहालय में रखी हुई है।
- यह बलुआ पत्थर से निर्मित है, इसकी सतह पॉलिश (चिकनी) की हुई है तथा गोल गठीली काय के रूप में एक स्वतंत्र मूर्तिकला का रूप धारण करती है।

चित्र 7.4: यक्षिणी, दीदारगंज

कलात्मक विशेषताएँ

- इस प्रतिमा के दाहिने हाथ में चामर (चौरी) पकड़े हुए दिखाया गया है। दुर्भाग्यवश बायाँ हाथ टूटा हुआ है।
- चेहरा एवं कपोल सुडौल और मांसल दिखाए गए हैं।
- मूर्तिकार की विशेषज्ञता मांसल शरीर और अपेक्षाकृत छोटी गर्दन के चित्रण में झलकती है।
- गले में हार के मोती, खूबसूरती के साथ पेट या उदर तक लटके हुए हैं। पेट पर पहनी हुई चुस्त पोशाक के कारण पेट आगे निकला हुआ प्रतीत होता है। (चित्र 7.4 देखें)

शारीरिक विशेषताएँ और आभूषण

- सिर के पीछे के शराशि एक गाँठ में बंधी है। पीछे का वस्त्र दोनों पैरों को ढकता है।
- चौरी की उत्कीर्ण रेखाओं को मूर्ति की पीठ पर दर्शाया गया हैं, जो डिजाइन में निरंतरता को दर्शाती हैं।
- अधोवस्त्र को बड़ी सावधानीपूर्वक बनाया गया है। पैरों पर पोशाक का हर मोड़ बाहर निकला हुआ दिखाया गया है, जो कुछ पारदर्शी प्रभाव उत्पन्न करता है। पोशाक की मध्यवर्ती पट्टी ऊपर से नीचे तक उसके पैरों तक गिरी हुई है।

शैलकृत वास्तुकला

- पारंपरिक रूप से निर्मित स्तूपों और विहारों के अलावा, इस अवधि के दौरान चट्टानों को काटकर गुफा बनाने की कला भी व्यापक रूप से विकसित हुई।
- तीसरी शताब्दी ईसा पूर्व के उल्लेखनीय उदाहरण संपूर्ण भारत में पाए गए हैं, जो यक्ष पूजा की व्यापक लोकप्रियता को रेखांकित करते हैं।
- सर्वाधिक प्रतिष्ठित शैलकृत गुफाओं में से एक लोमस ऋषि गुफा है, जो बिहार में गया के पास बराबर की पहाड़ियों में स्थित है।
- ओडिशा के **धौली स्थल पर चट्टान को काटकर बनाया गया हाथी**, अशोक के प्रभाव और कलात्मक कुशलता का उदाहरण है।

- शैलकृत/चट्टानों को काटकर बनाई गई गुफाएँ: लोमस ऋषि गुफा बिहार के बराबर पहाड़ियों में गया के पास स्थित है।
- इसमें अर्द्धवृत्ताकार चैत्य मेहराब प्रवेश द्वार और एक उच्च-उभरा हुआ हाथी चित्रित है।
- आजीवक संप्रदाय के लिए अशोक द्वारा दान की गई, जो भविष्य की बौद्ध गुफाओं के लिए एक उदाहरण प्रस्तुत करती है।

चित्र 7.5: लोमस ऋषि गुफा

बौद्ध धर्म के धार्मिक स्थल

- स्तूप,विहार और चैत्य, बौद्ध तथा जैनों के मठीय संकुलों (परिसर) के भाग हैं लेकिन इनमें से अधिकांश भवन/प्रतिष्ठान बौद्ध धर्म से संबंधित हैं।
- इनका निर्माण बौद्ध धर्म और जैन धर्म की बढ़ती लोकप्रियता के कारण तेजी से हुआ।
- **राजगृह, वैशाली और कुशीनगर** जैसे उल्लेखनीय स्तूपों में बुद्ध के अवशेष रखे हुए हैं।
- साँची का महान स्तूप इस परंपरा का प्रतीक है, जिसका निर्माण आरंभ में अशोक के शासनकाल में हुआ था तथा बाद में इसका विस्तार किया गया।

क्या आप जानते हैं?

बौद्ध धर्म में चैत्य भिक्षुओं के पूजा और सभा स्थल तथा विहार निवास स्थल होते हैं।

संरक्षण और कलात्मकता/कला-कौशल

- यह दूसरी शताब्दी ईसा पूर्व का एक शिलालेख है, जो आम लोगों से लेकर राजाओं तक, दानदाताओं की विविधता को दर्शाता है।
- कुछ शिलालेखों में कारीगरों का उल्लेख है, जैसे पीतलखोरा में कान्हा और महाराष्ट्र में कोंडाने गुफाओं में बालाका। शिल्पकारों की श्रेणियों, जिनमें पत्थर तराशने वाले और सुनार शामिल हैं, का भी उल्लेख किया गया है।

Search On TG: @apna_pdf

PW ONLYIAS BY PHYSICS WALLAH

Join Telegram: @apna_library

- स्मारक अक्सर सामूहिक प्रयासों को दर्शाते हैं, जिसमें विशिष्ट वर्गों को व्यक्तिगत संरक्षकों के लिए जिम्मेदार ठहराया जाता है।
- व्यापारी दान करते समय, अपने मूल स्थानों को दर्ज करने का एक बिंदु बनाते थे।

स्तूप स्थापत्य

- परवर्ती शताब्दी तक स्तूपों में और अधिक सुधार/सुविधाएँ देखी गई।
- उनमें प्रतिमाओं से **अलंकृत घिरे हुए परिक्रमा पथ** का निर्माण शुरू किया।
- ऐसे अनेक स्तूप भी हैं जिनका निर्माण मूल रूप से पहले किया गया था, परंतु आगे चलकर दूसरी शताब्दी में उनमें कुछ और नए निर्माण कार्यों को शामिल कर दिया गया।
- स्तूप में एक बेलनाकार ढोल, एक वृत्ताकार अंड और चोटी पर एक हर्मिका और छत्र होता है। ये भाग या हिस्से सदा ज्यों के त्यों रहे हैं लेकिन आगे चलकर समय के साथ इनके रूप और आकार में थोड़ा-बहुत परिवर्तन किया गया।
- स्तूपों में नए हिस्से या भाग के रूप में **प्रवेश द्वार** का निर्माण किया गया, जिससे वास्तुकारों और मूर्तिकारों को अपना कौशल दिखाने की अधिक रचनात्मक स्वतंत्रता प्राप्त हो गई।

बुद्ध के प्रारंभिक प्रतीकात्मक चित्रण

- बौद्ध धर्म के आरंभिक चरण में बुद्ध का प्रतिनिधित्व प्रतीकात्मक रूप में किया गया था। प्रतीकों में **पदचिह्न, स्तूप, कमल सिंहासन और चक्र** शामिल थे। ये प्रतीक या तो पूजा, श्रद्धा या बुद्ध के जीवन की ऐतिहासिक घटनाओं को दर्शाते थे।

बौद्ध कला में आख्यान

- जैसे-जैसे बौद्ध धर्म का विकास हुआ, **जातक कथा या बुद्ध के जीवन** की किसी घटना का वर्णन बौद्ध परंपरा का अभिन्न अंग बन गया। बुद्ध के जीवन की घटनाओं और जातक कथाओं को स्तूप के परिक्रमा पथों तथा तोरण द्वारों पर चित्रित किया गया। इसमें शामिल कथा शैलियों में संक्षेप आख्यान, सतत् आख्यान और घटनात्मक आख्यान पद्धति का प्रयोग किया गया है।

बौद्ध कला में प्रमुख विषय

- बुद्ध के जीवन की प्रमुख घटनाएँ **जन्म, गृह त्याग, ज्ञान (बुद्धत्व) प्राप्ति, धम्मचक्रप्रवर्तन और महापरिनिर्वाण (जन्म चक्र से मुक्ति) थी।**
- चित्रित लोकप्रिय जातक कहानियों में छदंत जातक, विदुरपुंडित जातक, रुरु जातक, सिबि जातक, वेस्सांतरा जातक और शम जातक शामिल हैं।

निष्कर्ष

यह परिचर्चा प्राचीन भारतीय इतिहास की समृद्ध विरासत पर केंद्रित थी, जिसमें मौर्य काल की वास्तुकला और मूर्तिकला की उपलब्धियों पर विशेष ध्यान केंद्रित किया गया। बौद्ध कालीन और वास्तुकला का विकास स्तूप निर्माण में प्रतीकात्मक से कथात्मक चित्रण में हुए परिवर्तन में स्पष्ट था। सारनाथ सिंह स्तंभ और दीदारगंज यक्षिणी जैसी प्रतिष्ठित कलाकृतियों ने उस युग के सामूहिक संरक्षण और गहन प्रतीकात्मकता को दृष्टिगोचर किया, जो भारत की प्राचीन सांस्कृतिक विरासत की जटिलता या गूढ़ता को रेखांकित करता है।

महत्त्वपूर्ण शब्दावलियाँ

- **गंगा घाटी:** उत्तर भारत का एक क्षेत्र जहाँ से गंगा नदी प्रवाहित होती है।
- **बौद्ध धर्म और जैन धर्म:** प्राचीन भारतीय धार्मिक और दार्शनिक परंपराएँ जिनका उद्भव 6वीं शताब्दी ईसा पूर्व के आस-पास हुआ।
- **श्रमण परम्परा:** प्राचीन भारत की तपस्वी परम्पराएँ, जिनमें बौद्ध धर्म और जैन धर्म शामिल हैं।
- **मगध:** भारत का एक प्राचीन साम्राज्य, जो बाद में मौर्य साम्राज्य का अंग बन गया।
- **यक्ष और यक्षिणी:** प्रकृति के देवता, प्राचीन भारत में इनकी पूजा की जाती थी तथा परवर्ती काल में इन्हें बौद्ध और जैन परंपराओं में शामिल किया गया।
- **सिंह शीर्ष:** मौर्य कालीन मूर्तिकला का अवशेष, जो सारनाथ में खोजा गया तथा बाद में भारत का राष्ट्रीय प्रतीक बन गया।
- **धम्मचक्रप्रवर्तन:** यह बुद्ध के प्रथम उपदेश और धर्म चक्र प्रवर्तन को संदर्भित करता है।
- **जातक कथाएँ:** बुद्ध के पूर्व जन्मों का वर्णन करने वाली कथाएँ, नैतिक शिक्षा प्रदान करती हैं।
- **चौरी:** एक औपचारिक/आनुष्ठानिक कूंची (Whisk), जिसे प्रायः शाही या दैवीय अधिकार के प्रतीक के रूप में मूर्तियों में देखा जाता है।

Search On TG: @apna_pdf

Join Telegram: @apna_library

8 भारतीय कला और स्थापत्य में मौर्योत्तर कालीन प्रवृत्तियाँ

संदर्भ: इस अध्यान में NCERT पाठ्यपुस्तक की कक्षा-XI (भारतीय कला का परिचय-I) के अध्याय-4 का सारांश शामिल है।

परिचय

ईसा पूर्व दूसरी शताब्दी के बाद अनेक शासकों ने विशाल मौर्य साम्राज्य में अलग-अलग हिस्सों पर अपना नियंत्रण स्थापित कर लिया। **उत्तर और मध्य भारत के कुछ हिस्सों में शुंग, कण्व, कुषाण और गुप्त शासकों ने; दक्षिण और पश्चिमी भारत में सातवाहन, इक्ष्वाकु, अभीर, वाकाटक शासकों ने अपना वर्चस्व स्थापित कर लिया।** संयोगवश, **ईसा** पूर्व दूसरी शताब्दी में वैष्णव और शैव जैसे प्रमुख ब्राह्मणवादी संप्रदायों का उदय भी हुआ। मूर्तिकला के कुछ उत्कृष्ट उदाहरण **विदिशा, भरहुत (मध्य प्रदेश), बोधगया (बिहार), जगय्यपेट (आंध्र प्रदेश), मथुरा (उत्तर प्रदेश), खंडगिरि-उदयगिरि (ओडिशा), पुणे के पास भज और नागपुर (महाराष्ट्र) के पास पावनी** में पाए गए हैं।

उत्तर भारत में मूर्तिकला

भरहुत मूर्तिकला

- भरहुत में पाई गई मूर्तियाँ, मौर्यकाल की **यक्ष और यक्षिणी** की प्रतिमाओं की तरह दीर्घाकार(लंबी) हैं। प्रतिमाओं के आयतन के निर्माण में कम उभार है लेकिन रैखिकता का ध्यान रखा गया है। आख्यानात्मक उभार में **तीन आयामों का भ्रम एक ओर झुके हुए परिप्रेक्ष्य** के साथ दर्शाया गया है।
- भरहुत में आख्यान फलक अपेक्षाकृत कम पात्रों के साथ दिखाए गए हैं, लेकिन जैसे-जैसे समय आगे बढ़ता जाता है, कहानी के मुख्य पात्रों के अलावा अन्य पात्र भी चित्र की परिधि में प्रकट होने लगते हैं।
- कभी-कभी एक भौगोलिक स्थान पर एक से अधिक घटनाएँ चित्र की परिधि में एक साथ चित्रित की गई हैं, जबकि कहीं-कहीं एक घटना को संपूर्ण चित्र में चित्रित किया गया है। मूर्तिकारों द्वारा उपलब्ध स्थान का अधिकतम **उपयोग किया गया है।**

भरहुत मूर्तिकला की भौतिक विशेषता

- आख्यान में हाथ जोड़े हुए यक्ष और यक्षिणी की एकल आकृतियाँ छाती से चिपकी हुई दिखाई गई हैं, लेकिन कुछ मामलों में विशेष रूप से बाद के समय में, हाथों को छाती के सामने स्वाभाविक रूप से उभारते हुए दिखाया गया है।
- चित्र की सतह के छिछले उत्कीर्णन के कारण हाथों और पैरों को बाहर निकला हुआ दिखाना संभव नहीं था इसीलिए **हाथों को जुड़ा हुआ** और पैरों को बढ़ा हुआ दिखाया गया है।
- शरीर ज्यादातर कड़ा तथा तना हुआ दिखाई पड़ता है और भुजाएँ व पैर शरीर के साथ-साथ चिपके हुए से दिखाए गए हैं। किन्तु आगे चलकर ऐसी दृश्य प्रस्तुति में संशोधन कर दिया गया। आकृतियों का उत्कीर्णन गहरा होने लगा और आयतन बढ़ गया, जिससे मनुष्यों तथा पशुओं के शरीर का प्रतिरूपण असली जैसा होने लगा। **भरहुत, बोधगया, साँची स्तूप-2 और जगय्यपेट** में पाई गई मूर्तियाँ इस शैली के अच्छे उदाहरण हैं।

चित्र 8.1: यक्षिणी, भरहुत

Search On Telegram: @apna_pdf

Join Telegram: @apna_library

चित्र 8.2: जातक कथा तथा महारानी माया का स्वप्न (भरहुत)

- भरहुत की आख्यान उद्धृतियों (रिलीफ) से यह स्पष्ट प्रकट होता है कि **कलाशिल्पी** अपनी चित्रात्मक भाषा के माध्यम से कितने अधिक प्रभावशाली ढंग से अपनी कहानियाँ कह सकते थे। एक ऐसी ही आख्यान उद्धति में सिद्धार्थ गौतम की माता महारानी मायादेवी के एक स्वप्न की घटना को दिखाया गया है। इसमें महारानी की आकृति को लेटी अवस्था में और एक हाथी को ऊपर से उतरकर महारानी मायादेवी की कोख (गर्भाशय) की ओर बढ़ते हुए दिखाया गया है।
- जातक कथा का चित्रण बहुत सरल तरीके से किया गया है – इनमें कथा के भौगोलिक स्थल के अनुसार घटनाओं को प्रस्तुत किया गया है जैसे कि **रुरु जातक का चित्रण** जिसमें बोधिसत्व हिरण को एक आदमी की जान बचाने के लिए उसे अपनी पीठ पर ले जाते हुए दिखाया गया है। इसी चित्र में एक अन्य घटना में एक राजा को अपनी सेना के साथ खड़ा हुआ दिखाया गया है और राजा हिरण पर तीर छोड़ने ही वाला है तथा जिस आदमी की हिरण ने रक्षा की थी, उसे फिर राजा के साथ खड़े हुए अपनी अँगुली से हिरन की ओर संकेत करते हुए दिखाया गया है।
- ईसा पूर्व पहली दूसरी शताब्दियों की सभी पुरुष प्रतिमाओं में केश सज्जा को गुँथे हुए दिखाया गया है। कुछ मूर्तियों में तो यह सब जगह एक-सी पाई जाती है।
- ऐसी जातक कथाएँ **स्तूपों को अलंकृत** करने के लिये उपयोग में लाई गईं हैं। दिलचस्प बात यह है कि देश के विभिन्न भागों में ज्यों-ज्यों स्तूपों का निर्माण बढ़ता गया, उनकी शैलियों में भी अंतर आने लगे।
- **भरहुत में पाई गई कुछ मूर्तियाँ आज भारतीय संग्रहालय, कोलकाता में सुरक्षित रखी देखी जा सकती हैं।**

साँची मूर्तिकला

मूर्तिकला के विकास के अगले चरण को **साँची, मथुरा और आंध्र प्रदेश (गुंटूर जिला),के वेन्गी** स्थान पर पाई जाने वाली मूर्तियों में देखा जा सकता है। यह चरण शैलीगत प्रगति की दृष्टि से उल्लेखनीय है।

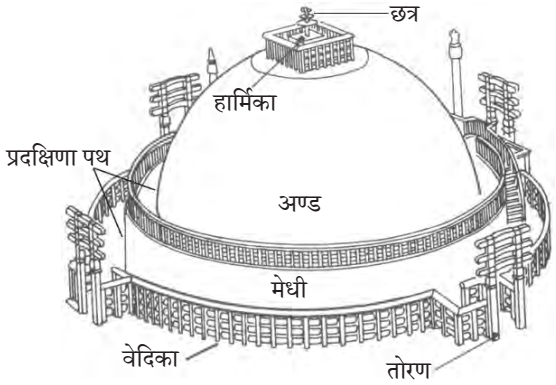

चित्र 8.3: स्तूप-I की योजना (साँची)

चित्र 8.4: उत्कीर्ण आकृतियाँ, स्तूप-I (साँची)

Search on TG: @apna_pdf

Join Telegram: @apna_library

साँची मूर्तिकला की भौतिक विशेषता

- साँची के स्तूप-I में ऊपर और नीचे दो प्रदक्षिणा पथ हैं। इसके चार तोरण हैं जो सुंदरता से सजे हुए हैं। इन तोरणों पर बुद्ध के जीवन की घटनाओं और जातक कथाओं के अनेक प्रसंगों को प्रस्तुत किया गया है। प्रतिमाओं का संयोजन अधिक उभारदार है और संपूर्ण अंतराल में भरा हुआ है।
- हाव-भाव और शारीरिक मुद्राओं का प्रस्तुतीकरण स्वाभाविक है और शरीर के अंग-प्रत्यंग में कोई कठोरता नहीं दिखाई देती। सिर काफ़ी उठे हुए हैं। बाहरी रेखाओं की कठोरता/अनम्यता कम हो गई है। आकृतियों को गति दे दी गई है। आख्यान में विस्तार आ गया है। उकेरने की तकनीकें भरहुत की तुलना में अधिक उन्नत प्रतीत होती हैं। बुद्ध को प्रतीकों के रूप में प्रस्तुत किया जाना अब भी जारी रहा।

साँची का आख्यान

- साँची के **स्तूप-1** में आख्यान अधिक विस्तृत कर दिए गए हैं, किन्तु स्वप्न प्रसंग का प्रस्तुतीकरण महारानी को लेटी अवस्था में और ऊपर से उतरते हुए हाथी के चित्रण द्वारा बहुत ही सरल तरीके से किया गया है।
- कुछ ऐतिहासिक आख्यानों, जैसे- **कुशीनगर की घेराबंदी, बुद्ध का कपिलवस्तु भ्रमण, अशोक द्वारा रामग्राम स्तूप के दर्शन** आदि को पर्याप्त विस्तार के साथ प्रस्तुत किया गया है।
- मथुरा में पाई गई इस काल की प्रतिमाओं में भी ऐसी ही विशेषताएँ पाई जाती हैं, हालाँकि उनके रूपाकृतिक यानी अंग-प्रत्यंगों के प्रस्तुतीकरण में कुछ अंतर है।

मूर्तिकला शैली (मथुरा, सारनाथ तथा गांधार)

मथुरा, सारनाथ और गांधार मूर्तिकला की तीन शैलियाँ थीं।

मूर्तिकला शैली का उदय:

- **पहली शताब्दी ईसवी के बाद:** ईसा की पहली शताब्दी में और उसके बाद, **उत्तर भारत में गांधार (अब पाकिस्तान में) व मथुरा और दक्षिण भारत में वेन्गी (आंध्र प्रदेश)** कला उत्पादन के महत्त्वपूर्ण केंद्र बन गए।
- **दूसरी शताब्दी ईसवी:** ईसा की दूसरी शताब्दी में, मथुरा में, प्रतिमाओं में विषयासक्ति केंद्रिकता आ गई, गोलाई बढ़ गई और वे अधिक मांसल हो गईं। ईसा की चौथी शताब्दी में भी यह प्रवृत्ति जारी रही।
- **चौथी शताब्दी ईसवी:** चौथी शताब्दी के अंतिम दशकों में विशालता और मांसलता में और कमी कर दी गई तथा मांसलता में अधिक कसाव आ गया। इनमें कम ओढ़े गए वस्त्रों को दर्शाया गया है।
- **ईसा की पाँचवी और छठी शताब्दी:** इसके बाद ईसा की पाँचवीं और छठी शताब्दी में वस्त्रों को प्रतिमाओं के परिमाण/आकार में ही शामिल कर दिया गया। बुद्ध की प्रतिमाओं में वस्त्रों की पारदृश्यता स्पष्टतः दृष्टि-गोचर होती है। इस अवधि में, उत्तर भारत में मूर्तिकला के दो महत्त्वपूर्ण संप्रदायों (घरानों) का उदय हुआ, जिनका उल्लेख करना जरूरी है।

चित्र 8.5: (a) ध्यानस्थ बुद्ध, गांधार (तीसरी-चौथी शताब्दी) (b) बोधिसत्व, गांधार (5वीं-6वीं शताब्दी)

- मूर्तिकला का **परंपरागत केंद्र मथुरा** तो कला के उत्पादन का मुख्य केंद्र बना ही रहा, उसके साथ ही सारनाथ और **कौशाम्बी** भी कला उत्पादन के महत्त्वपूर्ण केंद्रों के रूप में उभर आए।
- सारनाथ में पाई जाने वाली बौद्ध प्रतिमाओं में दोनों कंधों को वस्त्र से ढका हुआ दिखाया गया है। सिर के चारों ओर आभामंडल बना हुआ है जिसमें अलंकरण (सजावट) बहुत कम किया हुआ है जबकि मथुरा में बुद्ध की मूर्तियों में ओढ़ने के वस्त्र की कई तहें दिखाई गई हैं और सिर के चारों ओर के आभामंडल को अत्यधिक सजाया गया है।

Search on TG: @apna_pdf

PW ONLYIAS BY PHYSICS WALLAH

Join Telegram: @apna_library

- इन आरंभिक प्रतिमाओं की विशेषताओं का अध्ययन करने के लिए इन्हें **मथुरा, सारनाथ, वाराणसी, नई दिल्ली, चेन्नई, अमरावती** आदि के संग्रहालयों में देखा जा सकता है।
- गंगा की घाटी से बाहर के स्थलों पर स्थित कुछ महत्त्वपूर्ण स्तूपों में से एक **गुजरात में देवनिमोरी का स्तूप** है। परवर्ती शताब्दियों में बहुत कम बदलाव आया है, अलबत्ता प्रतिमाएँ छरहरे या पतले रूप में दिखाई गई हैं और वस्त्रों की पारदर्शिता प्रमुख सौंदर्यानुभूति बनी रही है।

विभिन्न परंपराओं का सम्मिश्रण

- **मथुरा और गांधार में बुद्ध के प्रतीकात्मक रूप को मानव रूप मिल गया। गांधार की मूर्तिकला की परंपरा में बैक्ट्रिया, पार्थिया और स्वयं गांधार की स्थानीय परंपरा का संगम हो गया।**
- मथुरा की मूर्तिकला की स्थानीय परंपरा इतनी प्रबल हो गई कि वह उत्तरी भारत के अन्य भागों में भी फैल गई। इसका सबसे बढ़िया उदाहरण हैं- **पंजाब में संघोल** स्थल पर पाई गई स्तूप की मूर्तियाँ।

चित्र 8.6: जंगले का भाग, संगोल

मूर्तिकला की विशेषता

- मथुरा में बुद्ध की प्रतिमाएँ **यक्षों** की आरंभिक मूर्तियों जैसी बनी हैं, लेकिन गांधार में पाई गई बुद्ध की प्रतिमाओं में यूनानी शैली की विशेषताएँ पाई जाती हैं। मथुरा में आरंभिक **जैन तीर्थंकरों** और **सम्राटों,** विशेषकर **कनिष्क** की बिना सिर वाली मूर्तियाँ एवं चित्र भी पाए गए हैं।
- **वैष्णव प्रतिमाएँ** (मुख्य रूप से विष्णु और उनके विभिन्न रूपों की प्रतिमाएँ) और **शैव प्रतिमाएँ** (मुख्य रूप से उनके लिंगों और मुखलिंगों की प्रतिमाएँ) भी मथुरा में पाई गई हैं, लेकिन संख्या की दृष्टि से बुद्ध की प्रतिमाएँ अधिक पाई गई हैं। ध्यान रहे कि विष्णु और शिव की प्रतिमाएँ उनके आयुधों (चक्र और त्रिशूल) के साथ प्रस्तुत की गई हैं।
- बड़ी प्रतिमाओं के उत्कीर्णन में विशालता दिखाई गई है। आकृतियों का विस्तार चित्र की परिधि से बाहर दिखाया गया है। चेहरे गोल हैं और उन पर मुस्कान दर्शायी गई है। मूर्तियों के आयतन का भारीपन कम कर दिया गया है, उनमें मांसलता दिखाई देती हैं। शरीर के वस्त्र स्पष्ट दृष्टि-गोचर होते हैं और वे बाएँ कंधों को ढके हुए हैं।
- इस काल में, **बुद्ध, यक्ष, यक्षिणी, शैव और वैष्णव देवी-देवताओं की प्रतिमाएँ और मानव मूर्तियाँ** भी बड़ी संख्या में बनाई गई।

विचारणीय बिंदु

हमने मथुरा शैली, गांधार शैली आदि के संदर्भ में कला और मूर्तिकला रूपों की विभिन्न शैलियों में महत्त्वपूर्ण वृद्धि देखी है। आपके अनुसार मथुरा, सारनाथ और गांधार की भौगोलिक स्थिति प्राचीन भारत में मूर्तिकला शैलियों और परंपराओं के विकास को कैसे प्रभावित करती है तथा मूर्तिकला की इन शैलियों को आकार देने में सांस्कृतिक प्रभावों ने क्या भूमिका निभाई?

आरंभिक मंदिर

चित्र 8.7: शिव मंदिर, नचना-कुठारा (मध्य प्रदेश, पाँचवी शताब्दी ई.पू.)

- स्तूपों का निर्माण जारी रहा, वहीं ब्राह्मणवादी मंदिर और देवी- देवताओं की प्रतिमाओं का निर्माण भी शुरू हो गया। अक्सर मंदिरों को देवताओं की प्रतिमाओं से सजाया जाता था।

Search On TG: @apna_pdf

Join Telegram: @apna_library

- पुराणों में वर्णित मिथक ब्राह्मणवादी धर्म के आख्यानात्मक चित्रण का हिस्सा बन गए। प्रत्येक मंदिर में **एक देवता की मुख्य प्रतिमा होती थी।**
- मंदिरों के तीर्थस्थान तीन प्रकार के थे:
  - **संधार प्रकार** (प्रदक्षिणापथ के बिना)
  - **निरंधार प्रकार** (प्रदक्षिणापथ के साथ), और
  - **सर्वतोभद्र** (जहाँ सभी ओर से पहुँचा जा सकता है)।
- इस काल के कुछ महत्त्वपूर्ण मंदिर स्थल हैं - **उत्तर प्रदेश में देवगढ़, मध्य प्रदेश में विदिशा के पास एरण, नचना- कुठारा और उदयगिरि।**
- ये मंदिर सरल संरचनाएँ हैं जिनमें एक बरामदा, एक हॉल और मंदिर के पीछे की ओर एक मूर्ति होती है।

दक्षिण भारतीय बौद्ध स्मारक

आंध्र प्रदेश के वेंगी क्षेत्र में अनेक स्तूप स्थल हैं, जैसे-**जगय्यपेट, अमरावती, भट्टीप्रोलुरो, नागार्जुनकोंडा, गोली** आदि।

अमरावती स्तूप

अमरावती में एक **महाचैत्य** है जिसमें अनेक प्रतिमाएँ थीं, जो अब **चेन्नई संग्रहालय, अमरावती स्थल के संग्रहालय, नई दिल्ली के राष्ट्रीय संग्रहालय और लंदन के ब्रिटिश म्यूज़ियम** में सुरक्षित रखी हुई हैं।

अमरावती स्तूप की विशेषता

- साँची के स्तूप की तरह अमरावती के स्तूप में भी **प्रदक्षिणा पथ** है जो वेदिका से ढका हुआ है और वेदिका पर अनेक आख्यानात्मक प्रतिमाएँ निरूपित की गई हैं। गुम्बदी स्तूप का ढाँचा (संरचना) उभारदार स्तूप प्रतिमाओं के चौकों से ढका हुआ है; यह उसकी खास विशेषता है।
- अमरावती स्तूप का तोरण समय की मार को नहीं झेल सका और गायब हो गया है। बुद्ध के जीवन की घटनाएँ और जातक कथाओं के प्रसंग चित्रित हैं।
- हालाँकि अमरावती के स्तूप में ईसा पूर्व तीन शताब्दियों के निर्माण कार्य दृष्टि-गोचर होते हैं, लेकिन इसका सर्वोत्तम विकास ईसा की पहली और दूसरी शताब्दी में हुआ।
- साँची की तरह, इस स्तूप में भी पहले चरण में बुद्ध की प्रतिमाएँ ढोल के चौकों और कई अन्य स्थानों पर उकेरी गई हैं।
- संयोजन के भीतरी अंतराल में आकृतियों को नाना रूपों, मुद्राओं, आसनों, जैसे सामने से, पीछे से, आगे से और एक तरफ से दिखाया गया है। प्रतिमाओं के चेहरों पर तरह-तरह के गंभीर हाव-भाव देखने को मिलते हैं। आकृतियाँ पतली हैं, उनमें गति और शरीर में तीन भंगिमाएँ (त्रिभंग रूप में) दिखाई गई हैं।
- साँची की प्रतिमाओं की तुलना में इन प्रतिमाओं का संयोजन अधिक जटिल है। रैखिकता में लोच आ गया है और प्रतिमाओं में दर्शायी गई गतिशीलता निश्चलता को दूर कर देती है। उभारदार प्रतिमाओं (उद्धृतियों) में तीन-आयामी अंतराल को तैयार करने का विचार उभरे हुए आयतन, कोणीय शरीर और जटिल अतिव्याप्ति के रूप में कार्यान्वित किया गया है। किन्तु रूप की स्पष्टता पर अधिक ध्यान दिया गया है, भले ही आख्यान में उसका आकार और भूमिका कैसी भी रही हो।

चित्र 8.8: (a) स्तूप की बाहरी दीवार पर नक्काशी, अमरावती, (b) स्तूप पटल, अमरावती (दूसरी शताब्दी ई.)

@apna_pdf Search

ONLYIAS BY PHYSICS WALLAH

Join Telegram: @apna_library

अमरावती स्तूप के आख्यान

- आख्यानों का चित्रण बहुतायत से किया गया है। इन आख्यानों से बुद्ध के जीवन की घटनाओं और जातक कथाओं के प्रसंगों को प्रस्तुत किया गया है।
- ईसा की तीसरी शताब्दी में **नागार्जुनकोंडा** और **गोली** की प्रतिमाओं में आकृतियों की अनुप्राणित गति कम हो जाती है।
- अमरावती की उद्धृत प्रतिमाओं की तुलना में **नागार्जुनकोंडा** और **गोली** के कलाकारों ने काया की उभरी हुई सतहों का प्रभाव उत्पन्न करने में सफलता पाई, जो स्वाभाविक है और उसका अभिन्न अंग दिखाई देती है।

चित्र 8.9: फलक, नागार्जुनकोंडा

अन्य बौद्ध स्थल

- **अमरावती, नागार्जुनकोंडा और गुंटापल्ली (आंध्र प्रदेश) में बुद्ध की स्वतंत्र प्रतिमाएँ भी पाई जाती हैं।**
- गुंटापल्ली में, चट्टान में काटी गई एक गुफ़ा है जो एलुरू के पास स्थित है। यहाँ छोटे गजपृष्ठीय (बहुकोणीय) तथा वृत्ताकार चैत्य कक्ष ईसा पूर्व दूसरी शताब्दी में खोदकर बनाए गए थे।
- एक अन्य महत्त्वपूर्ण स्थल जहाँ पर चट्टानों को काटकर स्तूप बनाए गए थे, विशाखापट्टनम के पास अनाकपल्ली है।
- अब तक खुदाई में मिला सबसे बड़ा स्तूप **सन्नति (जनपद गुलबर्ग, कर्नाटक)** में है। यहाँ एक ऐसा भी स्तूप है जिसे अमरावती के स्तूप की तरह उभारदार प्रतिमाओं से सजाया गया है।
- बुद्ध की प्रतिमाओं के साथ-साथ अन्य बौद्ध प्रतिमाएँ, जैसे- **अवलोकितेश्वर, पद्मपाणि, वज्रपाणि, अमिताभ और मैत्रेय जैसे बोधिसत्वों** की प्रतिमाएँ भी बनाई जाने लगीं।
- किन्तु बौद्ध धर्म की वज्रयान शाखा के उदय के साथ, बोधिसत्वों की कुछ ऐसी प्रतिमाएँ भी जोड़ी जाने लगीं जिनके द्वारा बौद्ध धर्म के जनहित के धार्मिक सिद्धांतों के प्रचार के लिए कतिपय सद्गुणों का मानवीयकरण करके प्रतिमा के रूप में प्रस्तुत किया गया था।

पश्चिम भारतीय गुफाएँ

पश्चिमी भारत में बहुत-सी बौद्ध गुफ़ाएँ हैं जो ईसा पूर्व दूसरी शताब्दी और उसके बाद की बताई जाती हैं। इनमें वास्तुकला के मुख्यतः तीन रूप मिलते हैं:

(i) गजपृष्ठीय मेहराबी छत वाले चैत्य कक्ष (जो अजंता, पीतलखोड़ा, भज में पाए जाते हैं);

(ii) गजपृष्ठीय मेहराबी छत वाले स्तंभहीन कक्ष (जो महाराष्ट्र के थाना-नादसर में मिलते हैं);

(iii) सपाट छत वाले चतुष्कोणीय कक्ष जिसके पीछे की ओर एक वृत्ताकर छोटा कक्ष होता है (जैसा कि महाराष्ट्र के कोंडिवाइट में पाया गया)।

पश्चिम भारतीय गुफाओं की प्रमुख विशेषताएँ

- चैत्य के विशाल कक्ष में अर्द्ध-वृत्ताकार चैत्य चाप (मेहराब) की प्रधानता होती थी। सामने का हिस्सा खुला होता था जिसका मोहरा लकड़ी का बना होता था, और कुछ मामलों में बिना खिड़की वाले मेहराब पाए जाते हैं जैसा कि कोंडिवाइट में भी देखा गया है। सभी चैत्य गुफ़ाओं में पीछे की ओर स्तूप बनाना आम थी।

विहार: ये भिक्षुओं के विश्राम स्थल होते थे, जो चतुष्कोणीय होते थे।

चैत्य: एक छोटा कक्ष, जो प्रार्थना कक्ष होता था, यह आमतौर पर कक्ष के पिछले भाग में स्थित होता है।

- **ईसा पूर्व पहली शताब्दी में, गजपृष्ठीय मेहरा नाले स्तूप की मानक योजना** (नक्शे) में कुछ परिवर्तन किए गए, जिसके अंतर्गत बड़े कक्ष को आयताकार बना दिया गया, जैसा कि **अजंता की गुफ़ा सं. 9** में देखने को मिलता है और मोहरे के रूप में एक पत्थर की परदी लगा दी गई। ऐसा निर्माण बेदसा, नासिक, कार्ले, कन्हेरी में भी पाया जाता है।

विचारणीय बिंदु

क्या आप उन कारणों के बारे में सोच सकते हैं कि क्यों चैत्य मेहराब और स्तूप की स्थापना जैसी विशिष्ट वास्तुकला विशेषताओं का उपयोग पश्चिमी भारतीय बौद्ध गुफाओं में महत्त्वपूर्ण रहा होगा और उन्होंने भक्तों के लिए पूजा-आराधना के अनुभव को कैसे प्रभावित किया होगा?

कार्ले की गुफा

कार्ले में, चट्टानों को काटकर सबसे बड़ा कक्ष बनाया गया था।

कार्ले चैत्य कक्ष की विशेषता

- गुफ़ा की योजना में पहले दो खंभों वाला खुला सहन है, वर्षा से बचाने के लिए एक पत्थर की परदी दीवार है, फिर एक बरामदा, मोहरे के रूप में पत्थर की परदी दीवार, एक खंभे पर टिकी गजपृष्ठीय छत वाला चैत्य कक्ष और अंत में पीछे की ओर स्तूप बना है।

Search On TG: @apna_pdf

Join Telegram: @apna_library

चित्र 8.10: (a) अधूरी निर्मित गुफा, कन्हेर; (b) चैत्य कक्ष, कार्ले

- कार्ले चैत्य कक्ष (मंडप) को मनुष्यों तथा पशुओं की आकृतियों से सजाया गया है। वे भारी और चित्र के अंतराल में चलती हुई दिखाई देती हैं। **कन्हेरी की गुफा सं. 3** में कार्ले के चैत्य कक्ष की योजना का कुछ और विशद (विस्तृत) रूप दिखाई देता है। इस गुफा के भीतरी भाग का संपूर्ण निर्माण कार्य एक साथ नहीं किया गया था इसलिए इसमें समय-समय पर संपन्न किए गए कार्य की प्रगति की झलक स्पष्ट दिखाई देती है।
- आगे चलकर चतुष्कोणीय चपटी छत वाली शैली को सबसे अच्छा डिज़ाइन समझा जाने लगा और यही डिजाइन व्यापक रूप से अनेक स्थानों पर पाया जाता है।

विहार

चित्र 8.11: गुफा सं. 3 (नासिक)

- सभी गुफा स्थलों पर विहारों की खुदाई की गई है। विहारों की निर्माण योजना में **एक बरामदा, बड़ा कक्ष और इस कक्ष की दीवार के चारों ओर प्रकोष्ठ होते हैं।**
- **कुछ महत्त्वपूर्ण विहार गुफ़ाएँ अजंता की गुफ़ा सं. 12, वेदसा की गुफ़ा सं. 11, नासिक की गुफ़ा सं. 3, 10 और 17 हैं।**

क्या आप जानते हैं?

अजंता पहली शताब्दी ईसा पूर्व और पाँचवीं शताब्दी ई.पू. की चित्रकला का एकमात्र जीवंत उदाहरण है।

- आरंभ की अनेक विहार गुफ़ाओं के भीतर से चैत्य के मेहराबों और गुफ़ा के प्रकोष्ठ द्वारों पर वेदिका डिज़ाइनों से सजाया गया है। बाद में इस तरह की सजावट को छोड़ दिया गया।
- **नासिक की गुफ़ा सं. 3, 10 और 17 में मोहरे** की डिज़ाइन में एक अलग उपलब्धि हुई। नासिक की विहार गुफ़ाओं में सामने के स्तंभों के घट-आधार और घट-शीर्ष पर मानव आकृतियाँ उकेरी गई हैं।
- ऐसी ही एक अन्य गुफ़ा **जुन्नार (महाराष्ट्र)** में भी खोदी हुई है जो आम जनता में **गणेशलेनी** के नाम से प्रसिद्ध है क्योंकि इसमें गणेश जी की प्रतिमा स्थापित की हुई है। आगे चलकर इस विहार के कक्ष के पीछे एक स्तूप भी जोड़ दिया गया जिससे यह एक **चैत्य-विहार** हो गया।
- ईसा की चौथी और पाँचवीं शताब्दी के स्तूपों में बुद्ध की प्रतिमाएँ संलग्न की गई हैं। **जुन्नार** (महाराष्ट्र) में खुदी हुई गुफ़ाओं का सबसे बड़ा समूह है। **नगर की पहाड़ियों के चारों ओर 200 से भी ज्यादा गुफ़ाएँ खुदी हुई हैं, जबकि मुंबई के पास कन्हेरी में ऐसी 108 गुफ़ाएँ हैं।**
- गुफ़ा स्थलों में सबसे महत्त्वपूर्ण स्थल हैं - **अजंता, पीतलखोड़ा, एलोरा, नासिक, भज, जुन्नार, कार्ले, कन्हेरी की गुफ़ाएँ।** अजंता, एलोरा और कन्हेरी आज भी फल-फूल रही हैं।

Search On TG: @apna_pdf

PW ONLYIAS BY PHYSICS WALLAH

Join Telegram: @apna_library

अजंता की गुफाएँ

चित्र 8.12: गुफा सं. 2 के बरामदे में उत्कीर्णित मूर्ति फलक, अजंता

- **यह महाराष्ट्र** राज्य के औरंगाबाद जिले में स्थित है। अजंता में **29** गुफाएँ हैं। इसमें **चार चैत्य गुफाएँ हैं** जिनका समय प्रारंभिक चरण यानी ईसा पूर्व दूसरी और पहली शताब्दी (गुफा संख्या **10** और **9)** और परवर्ती चरण यानी ईसा की पाँचवी शताब्दी (गुफा संख्या **19** और **26)** है।
- इसमें बड़े-बड़े **चैत्य विहार हैं** और ये प्रतिमाओं तथा चित्रों से अलंकृत हैं।
- **गुफा संख्या 10, 9, 12 और 13** आरंभिक चरण की हैं, **गुफा संख्या 11, 15 व 6, ऊपरी तथा निचली गुफा और गुफा संख्या 7 ईसा की पाँचवी शताब्दी** के उत्तरवर्ती दशकों से पहले की हैं। बाकी सभी गुफाएँ पाँचवी शताब्दी के परवर्ती दशकों से ईसा की छठी शताब्दी के पूर्ववर्ती दशकों के बीच खोदी गई हैं।
- **चैत्य गुफा संख्या 19 और 26** विस्तृत रूप से उत्कीर्ण की गई हैं। उनका मोहरा बुद्ध और बुद्धि तत्त्वों की आकृतियों से सजाया गया है।
- **गुफा संख्या 26 बहुत बड़ी है और भीतर का संपूर्ण बड़ा कक्ष (मंडप) बुद्ध की अनेक प्रतिमाओं से उकेरा गया है और उनमें सबसे बड़ी प्रतिमा महापरिनिर्वाण की है।**
- **गुफा संख्या 1, 2, 16 और 17 में अनेक चित्र आज भी शेष हैं।**

अजंता के संरक्षक राजा

- **बराहदेव** (गुफा संख्या 16 का संरक्षक), जो वाकाटक नरेश हरिसेन का प्रधानमंत्री था।
- **उपेन्द्रगुप्त** (गुफा संख्या 17-20 का संरक्षक) जो उस क्षेत्र का स्थानीय शासक और वाकाटक नरेश हरिसेन का सामंत था।
- **बुद्धभद्र** (गुफा संख्या 26 का संरक्षक) और मथुरादास (गुफा संख्या 4 का संरक्षक)।

अजंता गुफा में चित्रकारी

- चित्रों में अनेक शैली/प्रकारगत अंतर पाए जाते हैं। रेखाएँ अत्यंत स्पष्ट हैं और उनमें पर्याप्त लयबद्धता देखने को मिलती है। शरीर का रंग, बाहरी रेखा के साथ मिल गया है जिससे चित्र का आयतन फैला हुआ प्रतीत होता है। **आकृतियाँ, पश्चिमी भारत की प्रतिमाओं की तरह भारी हैं।**
- **चित्रकला का चरण**

चित्र 8.13: (a) बुद्ध, यशोधरा एवं राहुल का चित्र (गुफा सं. 17, अजंता); (b) अप्सरा (गुफा सं. 17, अजंता)

Search On TG: @apna_pdf

Join Telegram: @apna_library

- **चित्रकला का पहला चरण:** गुफा संख्या **9** और **10** में मौजूद चित्र ईसा पूर्व प्रथम शताब्दी के हैं। इन चित्रों में रेखाएँ पैनी हैं, रंग सीमित हैं। इन गुफाओं में आकृतियाँ स्वाभाविक रूप से बिना बढ़ा-चढ़ा कर अलंकृत किए हुए रंगी हैं।
- **चित्रकला का दूसरा चरण:** गुफा संख्या **10** तथा **9** की दीवारों व स्तंभों पर बनी बुद्ध की आकृतियों से इसका अध्ययन किया जा सकता है। ये बुद्ध आकृतियाँ पाँचवीं शताब्दी ईसवी के चित्रों से भिन्न हैं।
- **विकास का अगला चरण:** अगले चरण के चित्र मुख्यत: गुफा संख्या **16, 17, 1** और **2** में देखे जा सकते हैं। हालाँकि, इसका अर्थ यह नहीं है कि अन्य गुफाओं में चित्र निर्माण नहीं हुआ। वस्तुत: प्रत्येक खुद ही गई गुफा में चित्र बनाए गए परंतु उनमें से कुछ ही शेष रह गये। इन चित्रों में प्रतीकात्मक वर्गीकरण पाया जाता है।

चित्रकला की विशेषताएँ

- गुफा संख्या **1** एवं **2** के चित्र सलीके से बने हुए हैं एवं स्वाभाविक हैं जो गुफा की मूर्तियों से सामंजस्य रखते हैं। वास्तु का संयोजन सामान्य है और आकृतियों को त्रि- आयामी बनाने हेतु एवं विशेष प्रभाव लाने के लिए गोलाकार संयोजन का प्रयोग किया गया है।
- स्वाभाविक भंगिमाएँ एवं बढ़ा-चढ़ा कर न बनाए गए चेहरों का प्रयोग विशिष्ट रूप से किया गया है। इन प्रतिमाओं के विषय **बुद्ध के जीवन की घटनाओं, जातक और अवदान कथाओं के प्रसंग हैं।**
- **सिंहल अवदान, महाजनक जातक** और **विधुरपंडित जातक** के प्रसंग गुफा की संपूर्ण दीवार को ढके हुए हैं।
- यह बात ध्यान देने योग्य है कि **छद्दंत जातक** की कथा आरंभिक काल की **गुफा संख्या 10** पर विस्तारपूर्वक चित्रित की गई है और भिन्न-भिन्न घटनाओं को अनेक भौगोलिक स्थलों के अनुसार एक साथ रखा गया है, जैसे कि जंगल में घटित घटनाओं को राजमहल में घटित घटनाओं से अलग दिखाया गया है।
- **गुफा संख्या 10 में छद्दंत** का दृश्य पूरी तरह पालि पाठ का अनुसरण करता है, जबकि **गुफा संख्या 17 में वही प्रसंग भिन्न रूप से** चित्रित किया गया है।
- अन्य महत्त्वपूर्ण चित्रकलाएँ हैं- **गुफा संख्या 1 में प्रसिद्ध पद्मपाणि और वज्रपाणि।** तथापि, यह द्रष्टव्य है कि पद्मपाणि और वज्रपाणि की आकृतियाँ अजंता में आम हैं, लेकिन वे गुफा संख्या 1 में सर्वोत्तम रीति से सुरक्षित हैं।
- यह भी देखा जा सकता है कि आकृतियों में विभिन्न **त्वचा रंगों का** उपयोग किया गया है जैसे- भूरा, पीला भूरा, हरा, पीला गेरू आदि, जो एक बहुरंगी आबादी का प्रतिनिधित्व करते हैं।
- गुफा संख्या **2** की कुछ आकृतियाँ, **वेन्गी की प्रतिमाओं से संबंध रखती है** जबकि दूसरी ओर, कुछ प्रतिमाओं के निरूपण में **विदर्भ की मूर्तिकला का प्रभाव भी दृष्टि-गोचर होता है।**

एलोरा की गुफाएँ

- एलोरा गुफा स्थल महाराष्ट्र के **औरंगाबाद** जिले में स्थित है। यह अजंता से **100** किलोमीटर की दूरी पर स्थित है और इसमें **बौद्ध, ब्राह्मण व जैन तीनों तरह की 34 गुफाएँ हैं।**

चित्र 8.14: गजासुर वध, गुफा सं.15, एलोरा

Search on TG: @apna_pdf

PW ONLYIAS BY PHYSICS WALLAH

Join Telegram: @apna_library

धर्मों का सम्मिश्रण

- देश में कलाओं के इतिहास की दृष्टि से यही एक अनुपम स्थल है जहाँ ईसा की पाँचवीं शताब्दी से लेकर ग्यारहवीं शताब्दी तक के **तीन भिन्न-भिन्न धर्मों के मठ/धर्म भवन एक साथ पाए जाते हैं।**
- इसके अलावा यह **अनेक शैलियों के संगम** के रूप में भी बेजोड़ है। एलोरा और औरंगाबाद की गुफाएँ दो धर्मों, विशेष रूप से बौद्ध **धर्म और ब्राह्मण धर्म के बीच चल रहे अंतरों को दर्शाती हैं।**
- **बौद्ध धर्म के वज्रयान** संप्रदाय की अनेक प्रतिमाओं में **तारा, महामयूरी, अक्षोभ्य, अवलोकितेश्वर, मैत्रेय, अमिताभ** आदि की प्रतिमाएँ हैं। बौद्ध गुफाएँ आकार की दृष्टि से काफी बड़ी है और उनमें एक दो, यहाँ तक कि तीन मंजिलें हैं।

एलोरा गुफा की विशेषताएँ

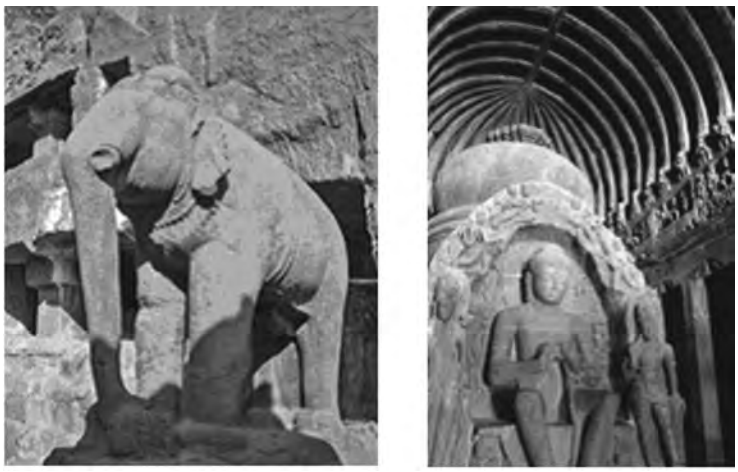

चित्र 8.15: (a) प्रांगण, कैलाश मंदिर (गुफा सं.16, एलोरा); (b) बैठे हुए बुद्ध, चैत्य कक्ष (गुफा सं.10, एलोरा)

- बौद्ध गुफ़ाएँ आकार की दृष्टि से काफ़ी बड़ी है और उनमें एक दो, यहाँ तक कि तीन मंजिलें हैं। उनके स्तंभ विशालकाय हैं। **अजंता में भी दो मंजिली गुफ़ाएँ खुदी हुई हैं, मगर एलोरा में तीन मंजिली गुफ़ा** बनाना वहाँ की विशेष उपलब्धि कही जा सकती है। ऐसी गुफ़ाओं पर प्लास्टर और रंग-रोगन किया गया था। **अधिष्ठाता बुद्ध की प्रतिमाएँ आकार में बड़ी हैं और पद्मपाणि तथा वज्रपाणि की प्रतिमाएँ आमतौर पर उनके अंगरक्षक के रूप** में बनाई गई हैं।
- दूसरी ओर, **ब्राह्मण धर्म की एकमात्र दो - मंजिली गुफा, गुफा संख्या 14 है।** स्तंभों के डिजाइन बौद्ध गुफाओं में बनने शुरू हुए थे और जब वे नौवीं शताब्दी की जैन गुफाओं में पहुँचे, तो वे अत्यंत अलंकृत हो गये और उनके सज्जात्मक रुप में भारी उभार आ गया।
- ब्राह्मणिक **गुफा संख्या 13-28 में अनेक प्रतिमाएँ पाई जाती हैं। उनमें से कई गुफाएँ शैव धर्म को समर्पित हैं परंतु उनमें शिव और विष्णु** तथा पौराणिक कथाओं के अनुसार उनके अवतारों की प्रतिमाएँ प्रस्तुत की गई हैं।
- शैव कथा-प्रसंगों में, कैलाश पर्वत को उठाए हुए रावण, अंधकासुर वध,कल्याण-सुंदर जैसे प्रसंग स्थान-स्थान पर चित्रित किए गये हैं जबकि वैष्णव कथा-प्रसंगों में विष्णु के विभिन्न अवतारों को दर्शाया गया है।
- ये प्रतिमाएँ भारी हैं और उनमें मूर्ति कला का शानदार प्रदर्शन किया गया है। एलोरा में अनेक कलाकार विदर्भ, कर्नाटक और तमिलनाडु जैसे विभिन्न स्थानों से आए थे और उन्होंने प्रतिमाओं को उकेरा था।
- गुफा संख्या **16** को **कैलाश लेनी के नाम से जाना जाता है। गुफा संख्या 29 की योजना** मुख्य रूप से एलिफेंटा जैसी ही है।

बाघ गुफाएँ

- बौद्ध भित्ति चित्रों वाली बाघ गुफाएँ मध्य प्रदेश के धार जिला मुख्यालय से **97** किलोमीटर की दूरी पर स्थित हैं।
- ये गुफाएँ **प्राकृतिक नहीं है अपितु चट्टानों को काटकर बनाई गई हैं। ये प्राचीन समय में मुख्यत: सातवाहन काल** में बनाई गई थीं।
- अजंता जैसी बाघ गुफाओं का निर्माण कुशल शिल्पकारों द्वारा सीधे बलुए पत्थर पर किया गया है जिसका मुख बघानी नामक मौसमी नदी की तरफ है।
- आज मूल नौ गुफाओं में से केवल पाँच गुफाएँ बची हैं, जिसमें से सभी भिक्षुओं के **विहार** या **चतुष्कोण** वाले विश्राम स्थान हैं।
- इन पाँच गुफाओं में सबसे महत्त्वपूर्ण **गुफा संख्या 4** है, जिसे आमतौर पर रंग महल के नाम से जाना जाता है, जिसका अर्थ है रंगों का महल, जहाँ दीवार और छत पर चित्र अभी भी दिखाई देते हैं।

Search on TG: @apna_pdf

Join Telegram: @apna_library

- **गुफ़ा संख्या 2, 3, 5 एवं 7** में भी दीवारों और छतों पर भित्ति-चित्रों को देखा जा सकता है। इसमें लाल-भूरे रंग के पत्थर के किरकिरे से तैयार मोटे पलस्तर से इन दीवारों और छतों को बनाया गया था। इनमें सबसे सुन्दर चित्रों में से कुछ गुफ़ा संख्या **4** के बरामदे की दीवारों पर हैं।

एलिफैंटा एवं अन्य स्थल

चित्र 8.16: एलिफैंटा गुफा द्वार

- एलिफैंटा गुफाएँ शैव धर्म से संबंधित हैं। **ये गुफाएँ एलोरा की समकालीन हैं और इनकी प्रतिमाओं** में शरीर का पतलापन नितांत गहरे और हल्के प्रभावों के साथ दृष्टि-गोचर होता है।
- चट्टानों में काटी गई गुफाओं की परंपरा दक्कन में जारी रही। वे गुफाएँ महाराष्ट्र में नहीं बल्कि कर्नाटक में चालुक्य राजाओं के संरक्षण में मुख्य रूप से **बादामी व ऐहोल** में तथा **आंध्र प्रदेश के विजयवाड़ा** क्षेत्र में और तमिलनाडु में पल्लव राजाओं के संरक्षण में मुख्यतः **महाबलीपुरम** में पाई जाती हैं।
- यहाँ मिट्टी की छोटी-छोटी आकृतियों का उल्लेख कर देना भी समीचीन होगा जो देश भर में विभिन्न स्थानों पर पाई गई हैं। उनसे यह प्रकट होता है कि पत्थर की धार्मिक मूर्तिकला की परंपरा के साथ-साथ समानांतर रूप से स्वतंत्र स्थानीय परंपरा भी चलती रही थी।
- पकी मिट्टी की अनेक प्रतिमाएँ भिन्न-भिन्न छोटे-बड़े आकारों में सर्वत्र पाई गई हैं जिससे उनकी लोकप्रियता का पता चलता है। उनमें से कुछ खिलौने हैं, कुछ छोटी-छोटी धार्मिक आकृतियाँ हैं और कुछ विश्वास के आधार पर कष्टों तथा पीड़ाओं के निवारण के लिए बनाई गईं लघु मूर्तियाँ हैं।

पूर्वी भारत की गुफा परंपरा

पश्चिमी भारत के समान, पूर्वी भारत में भी विशेषकर आंध्र प्रदेश और ओडिशा के तटीय क्षेत्रों में बौद्ध गुफाओं का निर्माण हुआ।

गुंटापल्ली गुफा (आंध्र प्रदेश)

मठों की संरचना के साथ पहाड़ों में गुफाओं का निर्माण हुआ है। संभवतः यह एक ऐसा विशेष स्थल है जहाँ स्तूप, विहार एवं गुफाओं का एक स्थान पर निर्माण हुआ है।

गुंटापल्ली गुफा की विशेषता

आंध्र में अन्य स्थल:

गुंटापल्ली के अलावा, अन्य महत्त्वपूर्ण गुफा स्थल **रामपेरमपल्लम** है, जिसमें बहुत ही मामूली खुदाई हुई है, लेकिन पहाड़ी पर चट्टान से बने स्तूप हैं।

विशाखापत्तनम में अनकापल्ली में, गुफाओं की खुदाई की गई थी और चौथी-पाँचवीं शताब्दी ई. के दौरान पहाड़ी से एक विशाल चट्टान से बने स्तूप को उकेरा गया था। यह एक अनोखी जगह है क्योंकि यहाँ देश के सबसे बड़े चट्टान से बने स्तूप हैं। पहाड़ी के चारों ओर कई मन्नत वाले चट्टान से बने स्तूपों की भी खुदाई की गई है।

- गुंटापल्ली के चैत्य की गुफा **गोलाकार है,** जिसके गोलाकार कक्ष में एक स्तूप है तथा प्रवेश द्वार चैत्य के रूप में बना है।
- पश्चिमी भारत की अन्य गुफाओं की तुलना में ये गुफाएँ छोटी हैं। विहार गुफाओं का निर्माण अधिक संख्या में हुआ है।
- अधिक छोटी होने के बावजूद मुख्य विहार गुफाएं, बाहर से चैत्य तोरणों से सजी हैं। ये गुफाएँ आयताकार हैं जिनकी छतें मेहराबदार हैं, जो बिना बड़े कक्षा के एक मंजली या दो मंजिली हैं।
- इनका निर्माण ईसा पूर्व दूसरी शताब्दी में हुआ था इसके बाद के काल में कुछ विहार गुफाओं का निर्माण हुआ।

Search on TG: @apna_pdf

PW ONLYIAS BY PHYSICS WALLAH

Join Telegram: @apna_library

उदयगिरि-खंडगिरि गुफाएँ

चित्र 8.17: (a) उदयगिरि-खंडगिरि गुफाएँ, भुवनेश्वर के समीप; (b) बरामदा, उदयगिरि-खंडगिरि

- ये गुफाएँ फैली हुई हैं जिनमें **खारवेल जैन राजाओं के शिलालेख पाए जाते हैं।** शिलालेखों के अनुसार, ये गुफाएँ जैन मुनियों के लिए थीं।
- इनमें से कई मात्र एक कक्षा की बनी है। कुछ गुफाओं को बड़ी चट्टानों में पशु का आकार देकर बनाया गया है।
- बड़ी गुफाओं में आगे स्तंभों की कड़ी बनाकर बरामदे के पिछले भाग में कक्षाओं का निर्माण किया गया है। इन कक्षों के प्रवेश का ऊपरी भाग चैत्य तोरणों और आज भी प्रचलित स्थानीय लोक गाथाओं के संदर्भ से सुसज्जित है।

उदयगिरि-खंडगिरि गुफाओं की विशेषता

- इस गुफा में आकृतियाँ **बहुत बड़ी हैं** और गुणवत्तापूर्ण नक्काशी का एक उत्कृष्ट उदाहरण हैं। इस परिसर में कुछ गुफाओं की खुदाई बाद में की गई थी, लगभग आठवीं-नौवीं शताब्दी ईसवी में।

मौर्योत्तर कला और वास्तुकला के कुछ प्रसिद्ध उदाहरण

साँची स्तूप

- मध्य प्रदेश की राजधानी भोपाल से लगभग **50** किलोमीटर दूर स्थित साँची एक विश्व धरोहर स्थल है। यहाँ अनेक छोटे-बड़े स्तूप हैं **जिनमें से तीन मुख्य हैं।**
  - **स्तूप-1:** ऐसा माना जाता है कि स्तूप संख्या **1** में बुद्ध के अवशेष हैं।
  - **स्तूप-2:** स्तूप-**2,** में तीन अलग-अलग पीढ़ियों से संबंधित **दस प्रसिद्ध अर्हतों के अवशेष** हैं। उनके नाम उनकी अवशेष पेटिकाओं पर लिखे हुए हैं।
  - **स्तूप-3:** स्तूप-**3** में सारिपुत्त और महामौग्गलायन के अवशेष रखे हैं।

चित्र 8.18: साँची स्तूप

- **स्तूप संख्या 1** जो नक्काशी के लिए प्रसिद्ध है स्तूप वास्तुकला का एक उत्कृष्ट उदाहरण है।
- अपने मूल रूप में यह स्तूप एक ईंटों का छोटा ढाँचा था जो आगे चलकर बड़ा बना दिया गया।
- स्तूप के दक्षिणी भाग में एक शिलालेख सहित अशोक का सिंह शीर्ष स्तम्भ पाया जाता है।
- स्तूप के चारों ओर प्रदक्षिणा पथ भी है।
- बुद्ध को प्रतीकात्मक रूप से खाली सिंहासन, पद, छत्र , स्तूप आदि के साथ दिखाया गया है। चारों दिशाओं में तोरण बनाए गए हैं।
- साँची स्तूपों पर पाई जाने वाली आकृतियाँ आयाम में छोटी होते हुए भी मूर्तिकला की कुशलता दर्शाती हैं। उनमें शरीर के अंग प्रत्यंग का जो रूपाकृतिक चित्रण किया गया है, वो गहराई और आयाम दोनों ही दृष्टियों से अत्यंत स्वाभाविक है।

Search on TG: @apna_pdf

Join Telegram: @apna_library

चित्र 8.19: साँची स्तूप (स्तंभ और तोरण)

- स्तंभों पर संरक्षक आकृतियाँ हैं और **शालमंजिका** (अर्थात वृक्ष की शाखा पकड़े हुए स्त्री) की आकृतियाँ आयतन के प्रस्तुतीकरण में बेजोड़ हैं।
- प्रत्येक तोरण में दो सीधे खड़े स्तंभ और उनके ऊपर तीन छोटी आड़ी दंडीकाएँ हैं। प्रत्येक आड़ी दंडिका आगे से पीछे तक भिन्न-भिन्न प्रतिमा विषयों से अलंकृत है।

विचारणीय बिंदु

मौर्योत्तर काल में कलात्मक और स्थापत्यकला का विकास अधिक विकसित और परिष्कृत था। क्या आप बता सकते हैं कि मौर्योत्तर काल की विशेषताएँ मौर्यकालीन वास्तुकला से किस प्रकार भिन्न थीं?

पद्मासन में बुद्ध, कटरा टीला, मथुरा

- **कुषाण काल** की बहुत सी प्रतिमाएँ मथुरा से प्राप्त हुई हैं। कटरा टीले से प्राप्त बुद्ध की प्रतिमा ईसा की दूसरी शताब्दी की है।
- इसमें बुद्ध को दो सहायक बोधिसत्वों के साथ दिखाया गया है। बुद्ध **पद्मासन** (पालथी भरकर) **में बैठे हैं और दाहिना हाथ अभयमुद्रा** में है, जो कंधे के स्तर से थोड़ा ऊपर उठा हुआ है और बायाँ हाथ बाईं जांघ पर रखा हुआ है।

चित्र 8.20: पद्मासन में बुद्ध, कटरा टीला (मथुरा)

- ऊष्णीय यानी केश ग्रंथि को सिर पर सीधा उठा हुआ दिखाया गया है। मथुरा की मूर्तियाँ इस काल से हल्के आयतन और मांसल शरीर के साथ बनाई गई हैं। कंधे चौड़े हैं।
- **संघति (पोशाक)** एक ही कंधे को ढँकती है और उसे खास तौर पर बाएँ हाथ से ढँकते हुए दिखाया गया है जबकि संगति का स्वतंत्र भाग जो वक्षस्थल को ढके हुए है, शरीर के धड़ तक ही रखा गया है।
- बुद्ध सिंहासन पर विराजमान दिखाए गए हैं। साथ की आकृतियों को **पद्मपाणि और वज्रपाणि बोधिसत्वों** के रूप में पहचाना जाता है क्योंकि एक के हाथ में पद्म और दूसरे के हाथ में वज्र है। वे मुकुट पहने हुए बुद्ध की दोनों ओर स्थित हैं।
- बुद्ध के सिर के चारों ओर जो प्रभामंडल दिखाया गया है वह बहुत बड़ा है और संकेंद्रिक वृत्त में सरल ज्यामितीय आकृतियाँ दिखाई गई हैं।
- प्रभामंडल के ऊपर कोणीय रूप से उड़ती हुई दो आकृतियाँ दिखाई गई हैं। वे चित्र की सीमा के भीतर काफी गति दर्शाती हैं।
- चेहरा **मांसल कपोलों के साथ गोल है**। पेट को कुछ आगे निकला हुआ दिखाया गया है लेकिन वह नियंत्रित है।

Search on TG: @apna_pdf

PW ONLYIAS BY PHYSICS WALLAH

Join Telegram: @apna_library

- यह ज्ञातव्य है कि **मथुरा में कुषाण काल की मूर्तियों के अनेक नमूने मिले हैं,** परंतु यह मूर्ति परवर्ती कालों में बुद्ध की प्रतिमा के विकास को समझने की दृष्टि से बहुत महत्त्वपूर्ण है।

बुद्धमुख की प्रतिमा, तक्षशिला

चित्र 8.21: बुद्धमुख की प्रतिमा, तक्षशिला

- गांधार क्षेत्र के तक्षशिला (जो अब पाकिस्तान में है) से प्राप्त बुद्धमुख की प्रतिमा ईसा की दूसरी शताब्दी के **कुषाण काल की है**।
- यह प्रतिमा गांधार कला में विकसित अनेक चित्रात्मक परिपाटियों का मिला-जुला रूप है। प्रतिमा के स्वरूप में कई यूनानी- रोमन तत्त्व पाए जाते हैं।
- बुद्ध के शीर्ष में अनेक यूनानी किस्म के तत्त्व हैं जो समय के साथ विकसित हुए हैं। बुद्ध के केश घुँघराले और घने हैं और सिर को तेज और रेखीय परत से ढके हुए हैं।
- मस्तक समतल है और उसमें बड़ी-बड़ी पुतलियों वाली अधमिची आँखें दिखाई गई हैं। चेहरा और कपोल भारत के अन्य भागों में पाई गई प्रतिमाओं की तरह गोल नहीं है।
- गांधार क्षेत्र की आकृतियों में कुछ हद तक भारीपन दिखाई देता है। कान लम्बे हैं, विशेष कर उनके लटके हुए भाग (ललरी)। रूप के प्रस्तुतीकरण में रैखिकता है और बाहरी रेखाएँ तीखी हैं।
- नेत्र-कोटरों को मोड़कर तलों और नाक के तिलों का उपयोग किया गया है। **प्रशांतता की अभिव्यक्ति** आकर्षण का केंद्र बिंदु बन गई है। मुखमंडल प्रतिरूपण **त्रि-आयमिता की स्वाभाविकता बढ़ा रहा है।**
- **अकेमेनियाई, पार्थियाई और बैक्ट्रियाई परंपराओं** की विभिन्न विशेषताओं का स्थानीय परंपरा के साथ सम्मिलन गांधार शैली की एक प्रमुख विशेषता है।
- यह भी उल्लेखनीय है कि भारत का पश्चिम उत्तर भाग जो पाकिस्तान में चला गया है, आद्य-ऐतिहासिक काल से ही लगातार विकसित हुआ है।
- ऐतिहासिक काल में भी यह सदा विकसित रहा। गांधार क्षेत्र से बड़ी संख्या में मूर्तियाँ पाई गई हैं। ये मूर्तियाँ बुद्ध और बुद्ध तत्त्वों की है तथा उनमें बुद्ध के जीवन की घटनाओं तथा जातक कथाओं का प्रस्तुतीकरण किया गया है।

आसनस्थ बुद्ध, सारनाथ

चित्र 8.22: आसनस्थ बुद्ध, मथुरा

- सारनाथ से प्राप्त बुद्ध की यह प्रतिमा **पाँचवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध की है और** सारनाथ के संग्रहालय में सुरक्षित है। इसे चुनार बलुआ पत्थर से बनाया गया है।
- इसमें बुद्ध को **पद्मासन** लगाए हुए सिंहासन पर विराजमान दिखाया गया है। यह **धम्मचक्रप्रवर्तन के प्रसंग का प्रतिरूपण** है जैसा कि सिंहासन पर बैठी हुई अन्य आकृतियों में देखा जा सकता है।
- बीच में एक छात्र और दो हिरण मानव आकृतियों के साथ दिखाए गए हैं। इस प्रकार यहाँ एक ऐतिहासिक घटना को प्रस्तुत किया गया है।
- बुद्ध की यह प्रतिमा **सारनाथ शैली की प्रतिमाओं का एक उत्तम उदाहरण है**। शरीर पतला और संतुलित है, लेकिन कुछ लंबा दिखाया गया है। बाह्य रेखाएँ सुकोमल और अत्यंत लयबद्ध हैं। चित्र के स्थान में दृश्य संतुलन बनाने के लिए मुड़ी हुई टांगों को सीधा दिखाया गया है।
- अंग-वस्त्र शरीर से लिपटा हुआ है और एकीकृत आयतन का प्रभाव उत्पन्न करने के लिए पारदर्शी है। चेहरा गोल है, आँखें आधी मिची हैं। नीचे का होंठ आगे बढ़ा हुआ है। कुषाण काल की मथुरा से प्राप्त पहले वाली प्रतिमाओं की तुलना में **कपोलों की गोलाई कम** हो गई है।
- हाथ **धम्मचक्रप्रवर्तन** की मुद्रा में छाती से नीचे रखे दिखाए गए हैं। गर्दन कुछ लंबी है इस पर दो कटी रेखाएँ हैं जो बलन (मोड़) की सूचक हैं।
- ऊष्णीय गोलाकार **घुंघराले केशों** से बना है। प्राचीन भारत में मूर्तिकारों का उद्देश्य सदैव बुद्ध को एक ऐसे महामानव के रूप में प्रस्तुत करना था जिन्होंने निर्वाण यानी क्रोध एवं घृणा से छुटकारा प्राप्त कर लिया था।
- प्रभामंडल का केंद्रीय भाग सादा-समतल है, वहाँ कोई सज्जा नहीं की गई है। इससे प्रभामंडल देखने में बहुत प्रभावशाली बन गया है। प्रभामंडल के भीतर और सिंहासन की पीठ पर की गई सजावट कलाशिल्पी की संवेदनशीलता और विशेष सज्जा के चयन की सूचक है।
- अंग वस्त्र की पारदर्शिता शरीर का हिस्सा बन गई है। ऐसा परिष्कार आने में काफी समय लगा होगा और ये लक्षण आगे भी जारी रहे।

Search On TG: @apna_pdf

Join Telegram: @apna_library

पद्मपाणि बोधिसत्व, अजंता, गुफा संख्या-1

चित्र 8.23: पद्मपाणि बोधिसत्व, अजंता (गुफा सं. 1)

- यह चित्र **अजंता की गुफा संख्या 1 में** पूजा गृह से पहले स्थित आंतरिक बड़े कक्षा की पिछली दीवार पर चित्रित है।
- बोधिसत्व को एक पद्म (कमल) पकड़े हुए दिखाया गया है। उनके कंधे बड़े हैं। शरीर **में तीन मोड़ हैं** जिनसे चित्र में गति उत्पन्न हुई दिखाई देती है। प्रतिरूपण सुकोमल है, बाहरी रेखाएँ शरीर के आयतन में विलीन प्रतीत होती है जिससे त्रि-आयामिता का प्रभाव उत्पन्न होता है।
- सिर **थोड़ा बाईं ओर झुका हुआ है।** आँखें आधी मिची हैं और थोड़ी लम्बी हैं। नाक तीखी और सीधी है।
- चेहरे के सभी उभरे हुए हिस्सों पर हल्के रंग का उपयोग, त्रि-आयामी प्रभाव पैदा करने के लिए किया गया है। मनकों वाले हार में भी ऐसी ही विशेषताएँ पाई जाती हैं।
- **चौड़े और फैले हुए कंधे** शरीर में भारीपन उत्पन्न करते हैं। धड़ का भाग अपेक्षाकृत गोलाकार है। रेखाएँ कोमल और लयबद्ध हैं तथा शरीर की परिरेखा को दर्शाती हैं। **दाहिने हाथ में कमल पुष्प है और बायाँ हाथ खाली जगह पर बढ़ा हुआ है।**
- बोधिसत्व का आगे की और कुछ निकला हुआ दायाँ हाथ आकृति को अधिक ठोस और प्रभावी रूप से गहन बनता है।
- धड़ भाग के ऊपर का धागा आयाम दर्शाने वाली शुंडाकार रेखाओं के साथ दिखाया गया है।
- प्रतिमा के दूसरी ओर **वज्रपाणि बोधिसत्व को** चित्रित किया गया है। वे अपने दाहिने हाथ में वज्र धारण किए हुए हैं और मुकुट पहने हुए हैं। इस प्रतिमा में भी पद्मपाणि जैसी ही चित्रात्मक विशेषताएँ हैं।
- गुफा संख्या-1 में बौद्ध विषयों पर आधारित कई रोचक आकृतियाँ हैं, जैसे **महाजनक जातक, उमंग जातक** आदि। महाजनक जातक की कथा संपूर्ण दीवार पर चित्रित है और यह सबसे बड़ा आख्यान चित्र है।

चित्र 8.24: महाजनक जातक, गुफा सं. 1 (अजंता)

मार विजय, अजंता, गुफा संख्या 26

चित्र 8.25: मार विजय, गुफा सं. 26 (अजंता)

Search @apna_pdf

PW ONLYIAS BY PHYSICS WALLAH

Join Telegram: @apna_library

- अजंता की कई गुफाओं में मार विजय के विषय को चित्रित किया गया है। यही एक मूर्तिकलात्मक प्रतिरूपण है जिसे अजंता की गुफा संख्या **26** की दाहिनी दीवार पर प्रस्तुत किया गया है। इसे महापरिनिब्बाण की विशाल बुद्ध प्रतिमा के पास में बनाया गया है।
- मूर्ति फलक में बुद्ध की आकृति को बीच में मार की पुत्री और सेना से घिरा हुआ दिखाया गया है। यह घटना **बुद्ध के ज्ञानोदय का हिस्सा है।** इसमें सिद्धार्थ के उस मानसिक संक्षोभ की स्थिति का मानवीकरण किया गया है जिससे होकर बुद्ध को बुद्धत्व प्राप्ति के समय गुजारना पड़ा था।
- मार,काम यानि इच्छा का द्योतक है। आख्यान के अनुसार बुद्ध और मार के बीच संवाद होता है और बुद्ध को अपने दाहिने हाथ से धरती की ओर अपनी उदारता के प्रति एक साक्षी के रूप में इशारा करते हुए दिखाया गया है।
- बाईं और निचले सिरे पर मार की प्रतिमा को यह सोचते हुए दिखाया गया है कि सिद्धार्थ (बुद्ध) को कैसे विचलित किया जाए। फलक के आधे हिस्से में मार की सेना को बुद्ध की ओर बढ़ते हुए दिखाया गया है, जबकि फलक के निचले आधे हिस्से में मार की सेना को बुद्ध की आराधना करके वापस लौटते हुए दिखाया गया है।
- बीच में बुद्ध **पद्मासन** लगाकर विराजमान है और उनके पीछे घनी पत्तियों वाला एक वृक्ष दिखाया गया है।
- यह अजंता का सबसे बड़ा मूर्तिकला फलक है। हालाँकि अजंता की गुफाओं में कई बड़ी प्रतिमाएँ हैं, विशेषकर मंदिर के प्रवेश कक्ष और अग्रभाग की दीवारों पर, परंतु प्रतिमाओं का ऐसा जटिल विन्यास बेजोड़ है।

एलीफेंटा की महेशमूर्ति

चित्र 8.26: एलीफेंटा की महेशमूर्ति

- **एलिफेंटा की महेशमूर्ति** की प्रतिमा, ईसा की **छठी शताब्दी** के प्रारंभिक काल में बनाई गई थी। यह गुफा के मुख्य देवालय में स्थापित है। पश्चिमी दक्कन की मूर्ति कला की परंपरा शैलकृत गुफाओं में मूर्ति निर्माण की गुणात्मक उपलब्धि का एक उत्तम उदाहरण है।
- यह मूर्ति आकार में काफ़ी बड़ी है। इसका **बीच का सिर शिव** की मुख्य मूर्ति है और दोनों ओर के दृश्यमान सिर **भैरव और उमा के हैं**।
- बीच का चेहरा (शिव का) गोल आकार में है, मोटे होंठ और पलकें भारी हैं। नीचे के होंठ उभरे हुए हैं जो इस मूर्ति की एक बहुत ही अलग विशेषता है।
- शिव-भैरव के पार्श्व-मुख को, गुस्से में बाहर निकली आँख और मूँछ के साथ दिखाया गया है।
- **स्त्री चरित्र को** दर्शाने वाला दूसरा चेहरा उमा का है, जो शिव की पत्नी हैं।
- यह मूर्ति गुफा की दक्षिणी दीवार पर बनाई गई है। इसके साथ शिव के दो अन्य रूपों **अर्द्धनारीश्वर** और गंगाधर की मूर्तियाँ सतह की समतल चिकनाई, लंबाई और लयबद्ध गति जैसी विशेषताओं के लिए जानी जाती हैं।
- उनकी रचना (संयोजन) बहुत जटिल है। इस गुफा का मूर्ति विन्यास, एलोरा की गुफा संख्या **29** में दोहराया गया है।

भारतीय भित्ति-चित्र परंपरा

चित्र 8.27: अनंत, अनंतपद्मनाभ मंदिर, कसरगोड़

चित्र 8.28: वाराह को मारते हुए शिव-किरातार्जुनीय प्रकरण, लेपाक्षी मंदिर

Search on TG @apna_pdf

Join Telegram: @apna_library

चित्र 8.29: चोल नरेश राजराज एवं राज कवि करूवरदेवेर, तंजावुर (ग्यारहवीं शताब्दी)

चित्र 8.30: त्रिपुरासुर वध करते हुए शिव, तंजावुर

चित्र 8.31: रावण वध करते हुए राम, रामायणपट्ट, मत्तनचेरी महल

चित्र 8.32: शास्त, पद्मनाभपुरम्, थक्कल

- अनंत, अनंतपद्मनाभ मंदिर, कसरगोड़।
- वाराह को मारते हुए शिव- किरातार्जुनीय प्रकरण, लेपाक्षी मंदिर।
- चोल नरेश राजराज और राजकवि करुवरदेवेर, तंजावुर, ग्यारहवीं शताब्दी।
- त्रिपुरासुर का वध करते हुए शिव, तंजावुर।
- रावण वध करते हुए राम, रामायणपट्ट, मत्तनचेरी महल।
- शास्त, पद्मनाभपुरम, थक्कल।

निष्कर्ष

मौर्योत्तर काल के दौरान कला और वास्तुकला के क्षेत्र में एक अभूतपूर्व विकास हुआ। इस युग के दौरान, कलात्मक शैलियाँ और स्थापत्य तकनीक विकसित हुईं, जिसमें **स्वदेशी परंपराओं को विदेशी प्रभावों, विशेष रूप से यूनान और मध्य एशिया** से मिश्रित किया गया। इसके उल्लेखनीय विकासों में शुंग वंश का उदय, पश्चिमी घाट की विस्तृत शैलकृत गुफाएँ और **साँची का महान स्तूप, अजंता और एलोरा** की गुफा आदि की स्तूप-केंद्रित वास्तुकला शामिल हैं। ये कलात्मक उपलब्धियाँ न केवल प्राचीन भारत की धार्मिक और सांस्कृतिक विविधता को दर्शाती हैं, बल्कि देश की समृद्ध कलात्मक धरोहर में एक महत्त्वपूर्ण छाप भी छोड़ती हैं।

Search On TG: @apna_pdf

PW ONLYIAS BY PHYSICS WALLAH

Join Telegram: @apna_library

महत्त्वपूर्ण शब्दावलियाँ

- **भरहुत मूर्तिकला:** ये मौर्य काल के यक्ष और यक्षिणी के समान मूर्तियाँ हैं।
- **साँची स्तूप और मूर्तिकला:** यह मध्य प्रदेश में स्थित यूनेस्को विश्व धरोहर स्थल है। साँची में **तीन मुख्य स्तूप हैं जिनमें** बुद्ध, दस प्रसिद्ध अर्हत और सारिपुत्त व महामौगलायन के अवशेष हैं।
- **अमरावती स्तूप:** अमरावती स्तूप (गुंटूर जिले में), सातवाहनों के शासनकाल के दौरान बनाया गया था। यह आंध्र प्रदेश के पलनाडु जिले के अमरावती गांव में एक खंडहर बन चुका बौद्ध स्तूप है।
- **अजंता गुफा: अजंता महाराष्ट्र में औरंगाबाद के पास** सह्याद्री पर्वतमाला (पश्चिमी घाट) में वाघोरा नदी पर शैलकृत गुफाओं की एक शृंखला है। इसमें कुल 29 गुफाएँ हैं।
- **एलोरा गुफा:** यह महाराष्ट्र के सह्याद्री पर्वतमाला में अजंता गुफाओं से लगभग 100 किलोमीटर दूर स्थित है। यह 34 गुफाओं का एक समूह है जिसमें - 17 ब्राह्मण, 12 बौद्ध और 5 जैन गुफाएँ शामिल हैं।
- **बाघ गुफाएँ:** बाघ गुफाएँ नौ शैलकृत स्मारकों का एक संग्रह है, जो भारत के मध्य प्रदेश के धार जिले में बाघ के पास विंध्य के दक्षिणी ढलानों पर स्थित हैं।
- **एलीफैंटा गुफाएँ: पश्चिमी भारत में मुंबई के पास** एलीफैंटा पर 5वीं और 6वीं शताब्दी के बीच में निर्मित शैव धर्म से प्रभावित शैलकृत गुफाएँ। यह यूनेस्को की विश्व धरोहर स्थल भी है।
- **उदयगिरि-खंडगिरि गुफा:** उदयगिरि और खंडगिरि गुफाओं का निर्माण कलिंग के शासक खारवेल के शासनकाल में पहली और दूसरी शताब्दी ईसा पूर्व में वर्तमान समय के भुवनेश्वर के पास हुआ था। गुफा परिसर में मानव निर्मित और प्राकृतिक दोनों तरह की गुफाएँ विद्यमान हैं।

Search On TG: @apna_pdf

Join Telegram: @apna_library

9 मंदिर स्थापत्य और मूर्तिकला

संदर्भ: इस अध्याय में NCERT पाठ्यपुस्तक की कक्षा-XI (भारतीय कला का परिचय-I) के अध्याय-6 व 7 का सारांश शामिल है।

परिचय

भारतीय मंदिरों की स्थापत्य और कांस्य मूर्तिकला भारतीय कला और संस्कृति की समृद्ध विरासत में एक विशेष स्थान रखती है। भारतीय मंदिर वास्तुकला देश की गहरी आध्यात्मिक और वास्तुकला परंपराओं का प्रमाण है। ये पवित्र संरचनाएँ, जो अपनी जटिल आकृतियों और आध्यात्मिक महत्त्व के लिए जानी जाती हैं, विविध सांस्कृतिक और क्षेत्रीय प्रभावों को दर्शाती हैं जिन्होंने सदियों से भारत की संस्कृति और परंपराओं को आकार दिया है। इसी के साथ, कांस्य मूर्तिकला जटिल और सजीव मूर्तियों को गढ़ने में भारतीय कारीगरों के असाधारण कौशल को प्रदर्शित करती है, जो प्रायः देवी-देवताओं, किंवदंतियों और पौराणिक कहानियों को दर्शाती हैं। लुप्त-मोम तकनीक (Lost Wax Technique) का उपयोग करके बनाई गई ये मूर्तियाँ अपनी कलात्मक कुशलता और धार्मिक प्रतीकवाद के लिए प्रसिद्ध हैं। इस अध्याय में हम इन कला रूपों की सुंदरता और महत्त्व का विश्लेषण करेंगे, उनके ऐतिहासिक विकास, सांस्कृतिक महत्त्व और आधुनिक विश्व में स्थायी विरासत पर प्रकाश डालेंगे।

विचारणीय बिंदु

भारतीय समाज में प्रारंभ से ही मंदिर स्थापत्य महत्त्वपूर्ण संरचना और पवित्र स्थल रहे हैं। वे समय के साथ विकसित हुए हैं और अपने तत्कालीन समाज से ही प्रेरणा लेते रहे हैं। क्या आप सोच सकते हैं कि मंदिरों में देवताओं की रणनीतिक स्थिति (Strategic Placements) और प्रतिमा-विज्ञान (Iconography) प्राचीन भारत में विभिन्न अवधियों और क्षेत्रों के स्थानीय, सामाजिक तथा सांस्कृतिक संदर्भों को कैसे दर्शाता है?

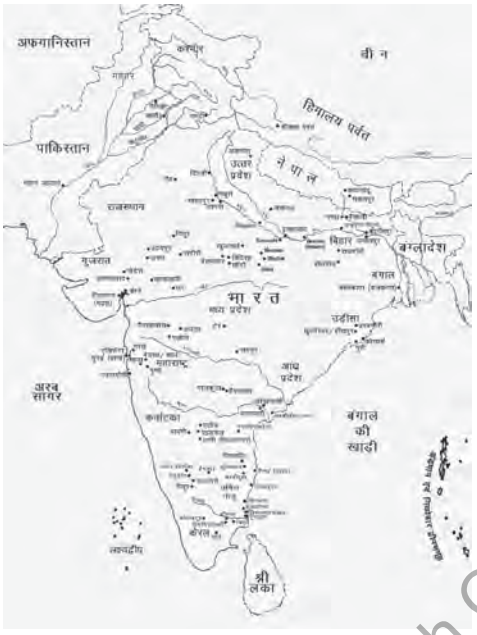

चित्र 9.1: भारत में मंदिर स्थापत्य कला

Search On TG: @apna_pdf

Join Telegram: @apna_library

प्राचीन मंदिर

जहाँ एक ओर स्तूप और उनका निर्माण कार्य जारी रहा, वहीं दूसरी ओर सनातन/हिंदू धर्म के मंदिर और देवी-देवताओं की प्रतिमाएँ भी बनने लगीं। अक्सर मंदिरों को संबंधित देवी-देवताओं की मूर्तियों से सजाया जाता था। पुराणों में उल्लिखित कथाएँ सनातन धर्म की आख्यान-प्रस्तुतियों का हिस्सा बन गईं। प्रत्येक मंदिर में एक प्रधान या अधिष्ठाता देवता की प्रतिमा होती थी। मंदिरों के पूजा गृह तीन प्रकार के होते हैं-

चित्र 9.2: शिव मंदिर, नचना-कुठारा, मध्य प्रदेश (पाँचवी शताब्दी ईसवी)

(i) **संधर किस्म** (जिसमें प्रदक्षिणा पथ होता है);

(ii) **निरंधर किस्म** (जिसमें प्रदक्षिणा पथ नहीं होता है);

(iii) **सर्वतोभद्र** (जिसमें सब तरफ से प्रवेश किया जा सकता है)।

कुछ महत्त्वपूर्ण मंदिर उत्तर प्रदेश में देवगढ़ तथा मध्य प्रदेश में एरण व नचना-कुठार और विदिशा के पास उदयगिरि में देखे जा सकते हैं। ये मंदिर साधारण श्रेणी के हैं जिनमें बरामदा, बड़ा कक्ष/मंडप और पीछे पूजा गृह है।

हिंदू मंदिर का मूल रूप

- **गर्भगृह (Sanctum):** गर्भगृह, जो प्रारंभिक मंदिरों में एक छोटा -सा प्रकोष्ठ होता था। उसमें प्रवेश के लिए एक छोटा-सा द्वार होता था। लेकिन समय के साथ-साथ इस प्रकोष्ठ का आकार बढ़ता गया। गर्भगृह में मंदिर के मुख्य अधिष्ठाता देवता की मूर्ति स्थापित की जाती है और यही अधिकांश पूजा-पाठ या धार्मिक क्रियाओं का केंद्र-बिंदु होता है।
- **मंडप (प्रवेश द्वार) [Entrance (Mandapa)]:** मंडप, अर्थात मंदिर का प्रवेश कक्ष, जो अत्यधिक विशाल होता है। बरामदा या स्तंभयुक्त हॉल, बड़ी संख्या में भक्तों के बैठने के स्थान के रूप में कार्य करते हैं।
- **वास्तुशिल्पीय तत्त्व (Architectural Elements):** पूर्वोत्तर काल में स्वतंत्र मंदिरों में पर्वत जैसे शिखर बनाए जाने लगे, जो उत्तर भारत में घुमावदार शिखर का रूप ले लेते हैं, तथा दक्षिण भारत में पिरामिडनुमा शिखर का रूप ले ते हैं, जिसे विमान कहा जाता है।
- **वाहन और ध्वज (Vahan and Dhvaj):** गर्भगृह के सामने अक्षीय रूप से स्थित वाहन, जो मंदिरों के अधिष्ठाता देवता की सवारी का प्रतिनिधित्व करता है, जिसके साथ एक मानक स्तंभ या ध्वज होता है।

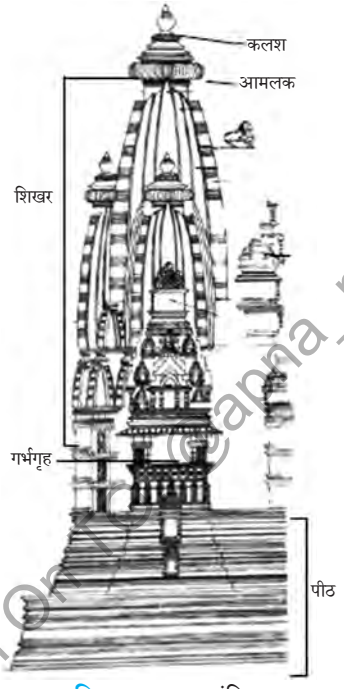

चित्र 9.3: नागर मंदिर

मंदिर की श्रेणियाँ

- **नागर (उत्तर) और द्रविड़ (दक्षिण):** मंदिरों के दो अलग-अलग क्रम प्रचलित हैं - उत्तर भारत में नागर शैली (चित्र 9.3 देखें) और दक्षिण भारत में द्रविड़ शैली। ये वास्तुशिल्प विशेषताओं और शिखर आकृतियों में भिन्न हैं जिनके बारे में हम अध्याय के बाद के भागों में अध्ययन करेंगे।

Search On Telegram @apna_pdf

Join Telegram: @apna_library

- **बेसर शैली:** कुछ विद्वानों के मतानुसार 'बेसर' शैली भी एक स्वतंत्र शैली है जिसमें नागर और द्रविड़, दोनों शैलियों की कुछ चुनी हुई विशेषताओं का मिश्रण पाया जाता है। इन परंपरागत प्रमुख श्रेणियों के अंतर्गत और भी कई उप- शैलियाँ शामिल हैं।

मूर्तिकला, मूर्तिविद्या और अलंकरण

कला इतिहास में मूर्तिविद्या

- **देवताओं की मूर्तियों का अध्ययन**, कला इतिहास (Art history) की एक अलग शाखा के अंतर्गत आता है जिसे मूर्तिविद्या (अथवा प्रतिमाविद्या भी कहा जाता है) के रूप में जाना जाता है। इस क्षेत्र में विशिष्ट प्रतीकों और उनसे जुड़ी पौराणिक कथाओं के आधार पर मूर्तियों की पहचान की जाती है।
- यद्यपि किसी देवता की आधारभूत कथा और अर्थ तो सदियों तक एक जैसा ही बना रहता है किंतु स्थान और समय के सामाजिक, राजनीतिक, या भौगोलिक संदर्भ में उसका उपयोग कुछ बदल जाता है।

मूर्तिविद्या में क्षेत्रीय विविधताएँ

- प्रत्येक क्षेत्र और काल में **देवताओं की मूर्तियों की अलग-अलग शैलियाँ** निर्मित हुई हैं, जो प्रतिमाविद्या में क्षेत्रीय विविधताओं को दर्शाती हैं।
- प्रत्येक क्षेत्र और काल में प्रतिमाओं की शैली सदा एक जैसी नहीं रही। प्रतिमाविद्या में अनेक स्थानीय परिवर्तन आते रहे। मूर्तिकला और अलंकरण शैली में भी व्यापकता आती गई और देवी-देवताओं के रूप उनकी कथाओं के अनुरूप बदलते गए।

मंदिरों में रणनीतिक स्थान

- मंदिर में देवताओं की प्रतिमाओं की स्थापना की योजना बहुत सूझ-बूझ के साथ बनाई जाती रही है।
- उदाहरण के लिए, नागर शैली के मंदिरों में, गंगा और यमुना जैसी नदी देवियों को गर्भगृह के प्रवेश द्वार के पास रखा जाता है जबकि द्रविड़ मंदिरों में द्वारपालों को आमतौर पर मंदिर के मुख्य द्वार यानी गोपुरम् पर रखा जाता है।
- सुरक्षात्मक उद्देश्यों के लिए प्रवेश द्वारों पर कामुक चित्र - मिथुन नवग्रहों (नौ माँगलिक ग्रहों) और यक्षों को द्वार रक्षा के लिए प्रवेश द्वार पर रणनीतिक रूप से रखा जाता है।

बाहरी दीवार चित्रण

- मुख्य देवता अर्थात् मंदिर के अधिष्ठाता देवता के विभिन्न रूपों या पक्षों को गर्भगृह की बाहरी दीवारों पर दर्शाया जाता है।
- **अष्टदिग्पाल** अर्थात आठ दिशाओं के स्वामी को गर्भगृह की बाहरी दीवारों और मंदिर की बाहरी दीवारों पर अपनी-अपनी दिशा की ओर अभिमुख दर्शाया जाता है।

सहायक तीर्थस्थान

- मुख्य देवालयों की चारों दिशाओं में छोटे देवालय होते हैं, मुख्य देवता के परिवार या अवतारों की मूर्तियों को स्थापित किया जाता है, जो मंदिर परिसर को और अधिक महत्त्व प्रदान करते हैं।

मंदिरों में सजावटी तत्व

- अलंकरण के विविध रूपों, जैसे- गवाक्ष, व्याल/यालि, कल्प-लता, आमलक, कलश, आदि मंदिर के भीतर विशिष्ट तरीकों और स्थानों पर उपयोग किए जाते हैं, जो इसके समग्र सौंदर्य और प्रतीकात्मक समृद्धि में योगदान करते हैं।

यह विविध मूर्तिविद्या न केवल कलात्मक अभिव्यक्ति के रूप में कार्य करती है, बल्कि समय के साथ सांस्कृतिक, सामाजिक और भौगोलिक प्रभावों के जटिल अंतर्संबंध को भी दर्शाती है। जैसे-जैसे मंदिर अधिक जटिल होते गए, योगात्मक ज्यामिति का उपयोग किया जाने लगा। इसमें मूल मंदिर योजना से विचलित हुए बिना लयबद्ध रूप से उभरी हुई, सममित दीवारें और आलों को जोड़ना शामिल था। यह संरचनात्मक विकास नागर और द्रविड़ शैली के मंदिरों के विभिन्न रूपों में हुए परिवर्तनों में देखा जा सकता है।

नागर या उत्तर भारतीय मंदिर शैली

- उत्तर भारत में मंदिर स्थापत्य/वास्तुकला की प्रचलित शैली को नागर शैली के नाम से जाना जाता है।
- उत्तर भारत में मंदिरों का निर्माण अक्सर पत्थर के चबूतरे (वेदी) पर किया जाता है, जहाँ तक जाने के लिए सीढ़ियों का निर्माण किया गया है।
- दक्षिण भारत के विपरीत, यहाँ आमतौर पर विस्तृत चहारदीवारी या प्रवेशद्वार का अभाव है। (चित्र 9.4 देखें)

Search On TG: @apna_pdf

PW ONLYIAS BY PHYSICS WALLAH

Join Telegram: @apna_library

- मंदिर की स्थापत्य/वास्तुकला का स्वरूप पाँचवीं शताब्दी से पहले विद्यमान प्राचीन भवन स्वरूपों से प्रभावित है। जैसे, वलभी श्रेणी के शिखर (घुमावदार गुम्बद), बौद्ध शैलकृत चैत्य गुफाओं की आधार योजना के साथ समानता रखते हैं।
- नागर मंदिर वास्तुकला में यह विकास क्षेत्रीय और लौकिक प्रभावों के अनुरूप शैलियों के गतिशील विकास और विविधीकरण को दर्शाता है।

चित्र 9.4: सूर्य मंदिर, कोणार्क

मंदिर के शिखरों का विकास

- प्रारंभिक मंदिरों में एक ही शिखर (घुमावदार गुम्बद) होता था, किंतु बाद के मंदिरों में अनेक शिखर का विकास देखा गया।
- गर्भगृह हमेशा सबसे ऊँचे शिखर के ठीक नीचे स्थित होता है।
- समय के साथ अनेक प्रकार के शिखर विकसित हुए।

रुपाकार शिखर

- यह एक साधारण शिखर है, जिसे 'लैटिना' या 'रेखा-प्रासाद' के नाम से जाना जाता है।
- इसका आधार वर्गाकार होता है तथा इसकी दीवारें अन्दर की ओर मुड़ी हुई या ढलानदार होती हैं, जो चोटी पर एक बिंदु पर मिलती हैं, उसे आमतौर पर रेखा -प्रासाद कहा जाता है।
- इसे प्रायः शिखर का मूल रूप माना जाता है।
- रेखा-प्रासाद इमारतें या भवन कई छोटे शिखरों/टावरों को सहारा देने के लिए विकसित हुए, जो उर्ध्वाधर पर्वत शिखरों की तरह एक साथ समूहबद्ध थे।

फमसाना रुपाकार शिखर

- **फमसाना** किस्म की इमारतें रेखा-प्रासाद इमारतों से अधिक चौड़ी और ऊँचाई में कुछ छोटी होती हैं।
- इनकी छतें अनेक ऐसी शिलाओं की बनी होती हैं, जो भवन के केंद्रीय भाग के ऊपर एक निश्चित बिंदु तक सफाई से जुड़ी होती हैं। जबकि रेखा-प्रासाद सीधे ऊपर उठे हुए लम्बे गुंबदों की तरह दिखाई देते हैं।
- बहुत से उत्तर भारतीय मंदिरों में फमसाना डिजाइन का प्रयोग मंडपों में हुआ है जबकि मुख्य गर्भगृह एक रेखा-प्रासाद में रखा गया है।
- कालांतर में रेखा-प्रासाद जटिल हो गए और वे एक अकेले लंबे गुंबद की तरह दिखने के बजाय, मंदिरों पर कई छोटे-छोटे शिखर के रूप में बनने लगे। ये शिखर पहाड़ की चोटियों की तरह ऊपर उठे होते थे और उनमें सबसे बड़ा शिखर बीच में होता था और यह बीच वाला शिखर हमेशा गर्भगृह के ठीक ऊपर होता था।

वलभी रुपाकार इमारत

- वलभी प्रकार की इमारतों की विशेषता है कि यह आयताकार होती है, वलभी श्रेणी के वर्गाकार मंदिरों में मेहराबदार छतों का निर्माण होता है।
- इस मेहराबी कक्ष का किनारा गोलाकार है, जो प्राचीन शकटाकार बांस या लकड़ी के बने छकड़े की तरह दिखाई देता है।
- इन्हें प्रायः शकटाकार भवन (Wagon vaulted building) कहा जाता है।

शिखर के आकार में भिन्नता के कारण नागर मंदिरों के विभिन्न प्रकार सामने आए।

मध्य भारत

- उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश और राजस्थान के प्राचीन मंदिरों में अनेक समानताएँ पाई जाती हैं।
- मध्य प्रदेश में गुप्तकालीन मंदिर, विशेषकर उदयगिरि और साँची, बलुआ पत्थर से बने हैं।
- प्रारंभिक गुप्त काल के मंदिर अपेक्षाकृत छोटे होते हैं, जिनमें चार स्तंभ हैं जो मंडप और गर्भगृह को सहारा देते हैं।
- दो मंदिर जो आज भी शेष हैं, एक विदिशा के सीमांत क्षेत्र उदयगिरि में और दूसरा मंदिर साँची में स्तूप के निकट स्थित है, एक महत्त्वपूर्ण वास्तुशिल्प विकास का प्रतिनिधित्व करते हैं, जिसमें एक समतल छत है और हिंदू और बौद्ध मंदिर निर्माण में साझा डिजाइन तत्त्वों का संकेत मिलता है।

- **शेषशयन**, विष्णु का वह रूप है जब उन्हें अपने वाहन शेषनाग (जिसे अनंत भी कहा जाता है) पर लेटा हुआ दर्शाया गया है। भगवान विष्णु का यह रूप उन्हें शाश्वत निद्रा में प्रस्तुत करता है।
- **नर-नारायण** जीवात्मा और परमात्मा के बीच की चर्चा को दर्शाता है।
- **गजेंद्रमोक्ष** मोक्ष-प्राप्ति की कहानी है, जिसमें विष्णु को प्रतीकात्मक रूप से एक असुर का जिसने एक मगर का रूप धारण कर लिया था, दमन करते हुए वर्णित किया गया है।

Search On TG: @apna_pdf

Join Telegram: @apna_library

देवगढ़ मंदिर वास्तुकला

- उत्तर प्रदेश में स्थित देवगढ़, छठी शताब्दी के प्रारम्भिक काल का मंदिर है, जो उत्तर गुप्तकालीन मंदिर वास्तुकला का उदाहरण है।

चित्र 9.5: (a) दशावतार विष्णु मंदिर, देवगढ़, पाँचवीं शताब्दी ईसवी (b) शेषशायी विष्णु, दशावतार मंदिर, देवगढ़

- वक्रीय शिखर (घुमावदार लैटिना या रेखा-प्रासाद प्रकार का शिखर) शास्त्रीय नागर शैली का प्रारंभिक उदाहरण दर्शाता है।
- पश्चिमाभिमुखी इस मंदिर के भव्य द्वार के बाएँ कोने पर गंगा और दाएँ कोने पर यमुना का चित्रण हुआ है।
- इसमें विष्णु के अनेक रूप प्रस्तुत किए गए हैं, जिसके कारण लोगों का यह मानना है कि इसके चारों उप-देवालयों में भी विष्णु के अवतारों की मूर्तियाँ ही स्थापित थीं। इसीलिए लोग इसे भ्रमवश दशावतार मंदिर समझने लगे। लेकिन वास्तविकता तो यह है कि हम नहीं जानते कि ये चारों उप-देवालय मूल रूप से किन-किन देवताओं को समर्पित थे।

चित्र 9.6: विश्वनाथ मंदिर, खजुराहो

- मंदिर की दीवारों पर विष्णु की तीन उद्धृतियाँ (उभरी आकृतियाँ) हैं। दक्षिणी दीवार पर शेषशयन, पूर्वी दीवार पर नर-नारायण और पश्चिमी दीवार पर गजेंद्रमोक्ष का दृश्य चित्रित है। इन उद्धृतियों की स्थिति से यह पता चलता है कि इस मंदिर में परिक्रमा दक्षिण से पश्चिम की ओर की जाती थी जबकि आजकल प्रदक्षिणा दक्षिणावर्त (Clockwise) की जाती है। एक बात और भी है, यह मंदिर पश्चिमाभिमुख है, जैसा कि बहुत कम देखने को मिलता है। अधिकांश मंदिरों का मुख पूर्व या उत्तर की ओर होता है।

खजुराहो मंदिरों का विकास

- कालांतर में अनेक छोटे-छोटे आकार के मंदिर बनाए गए। वैषम्य के रूप में अगर हम चंदेल राजाओं द्वारा निर्मित खजुराहो के मंदिरों का अध्ययन करें जो देवगढ़ के मंदिर से लगभग 400 वर्ष बाद दसवीं शताब्दी में बनाए गए थे तो हम पाएँगे कि मंदिर वास्तुकला की नागर शैली रूप में नाटकीय रूप से कितना अधिक विकास हो गया था।
- खजुराहो का लक्ष्मण मंदिर विष्णु को समर्पित है। यह मंदिर चंदेलवंशीय राजा धंग द्वारा 954 ई. में बनाया गया था। नागर शैली में निर्मित यह मंदिर एक ऊँची वेदी (प्लेटफार्म) पर स्थित है तथा उस तक पहुँचने के लिए सीढ़ियाँ बनी हुई हैं। इसके कोनों में चार छोटे देवालय बने हैं और इसके गगनचुंबी शिखर पिरामिड की तरह सीधे आकाश में खड़े हुए उसके उदग्र उठान को प्रदर्शित कर रहे हैं।

Search On TG: @apna_pdf

ONLYIAS BY PHYSICS WALLAH

Join Telegram: @apna_library

चित्र 9.7: नृत्य कक्षा, लक्ष्मण मंदिर, खजुराहो

- इस काल के सभी मंदिरों के शिखर के अंत में एक नालीदार चक्रिका (तश्तरी) है जिसे आमलक कहा जाता है और उस पर एक कलश स्थापित है। ये सभी विशेषताएँ इस काल के नागर मंदिरों में सर्वत्र पाई जाती हैं। मंदिर में आगे निकले हुए बारजे और बरामदे हैं। इस प्रकार यह मंदिर देवगढ़ के मंदिर से बहुत ही भिन्न किस्म का है।

खजुराहो की मूर्तिकला शैली

- खजुराहो स्थित **कंदरिया महादेव** मंदिर का निर्माण भारतीय मंदिर स्थापत्य शैली की पराकाष्ठा है। इस विशाल मंदिर के स्थापत्य एवं मूर्तिकला में मध्य कालीन भारतीय मंदिर निर्माण के वे सभी लक्षण विद्यमान हैं जिनके लिए मध्य भारत की स्थापत्य कला की श्रेष्ठता जानी जाती है।
- खजुराहो की प्रतिमाओं की अपनी एक विशेष शैली है जिसके कुछ विशिष्ट लक्षण हैं, जैसे- वे अपने पूरे उभार के साथ हैं, वे आस-पास के पत्थर से काटकर बनाई गई हैं, उनकी नाक तीखी है, ठुड्डी बढ़ी हुई है, आँख लंबी और मोड़ें लंबी मुड़ी हुई हैं।
- खजुराहो के मंदिर अपनी कामोद्दीप एवं शृंगार प्रधान प्रतिमाओं के लिए भी बहुत प्रसिद्ध हैं। इनमें शृंगार रस को उतना ही महत्त्व दिया गया है जितना कि मानव की आध्यात्मिक खोज को, और इसे पूर्णब्रह्म का ही एक महत्त्वपूर्ण अंश माना जाता था। इसलिए अनेक हिन्दू मंदिरों में आलिंगनबद्ध मिथुन को शुभ मानकर उसकी मूर्तियाँ स्थापित की हुई हैं।

चित्र 9.8: कंदरिया महादेव मंदिर, खजुराहो

खजुराहो के मंदिरों में विविधता

- खजुराहो में अनेक हिन्दू मंदिर, जैन मंदिर और एक चौसठ योगिनी मंदिर हैं; इनमें से अधिकांश हिन्दू देवताओं को समर्पित हैं।
- **चौसठ योगिनी** मंदिर दसवीं शताब्दी से भी पुराना है और तांत्रिक पूजा से संबंधित देवियों को समर्पित है।
- खजुराहो के मंदिर हिंदू मंदिर कला में आध्यात्मिक और कामुक अभिव्यक्तियों के सह-अस्तित्व को प्रदर्शित करते हैं।
- सातवीं और दसवीं शताब्दी के बीच निर्मित योगिनियों के पंथ को समर्पित अनेक मंदिर मध्य प्रदेश, ओडिशा और दक्षिण में तमिलनाडु तक विस्तृत हैं।

पश्चिम भारत

- भारत के पश्चिमोत्तर क्षेत्र में जिसमें गुजरात और राजस्थान शामिल हैं और कभी-कभी शैलीगत विशेषताओं के कारण पश्चिमी मध्य प्रदेश को भी इसमें शामिल कर लिया जाता है, मंदिर इतने अधिक हैं कि उन पर व्यापक रूप से विचार नहीं किया जा सकता। ये मंदिर रंग और किस्म दोनों ही दृष्टि से अनेक प्रकार के पत्थरों से बने हैं।
- इनमें बलुआ पत्थर का प्रयोग हुआ है तथापि दसवीं से बारहवीं शताब्दी के मध्य निर्मित मंदिरों की मूर्तियाँ धूसर स्लेटी से काले बेसाल्ट/असिताश्म से बनी हुई हैं।
- नरम चिकने सफेद संगमरमर का भी भिन्न प्रकार से प्रचुर मात्रा में प्रयोग हुआ है जो दसवीं से बारहवीं शताब्दी के माउंट आबू और रणकपुर (राजस्थान) के जैन मंदिरों में भी देखने को मिलता है।

कला-ऐतिहासिक स्थल: गुजरात में शामलाजी

- गुजरात में शामलाजी एक महत्त्वपूर्ण कला-ऐतिहासिक स्थल है, जिसमें प्राचीन क्षेत्रीय परंपराओं और उत्तर-गुप्त शैली का मिश्रण है।
- गहरे रंग के परतदार पत्थर (**शिस्ट**) की **मूर्तियाँ** इस क्षेत्र में छठी और आठवीं शताब्दी के बीच की कलाकृतियाँ, परंपराओं के मिश्रण से प्रभावित एक विशिष्ट शैली को प्रदर्शित करती हैं।

Search On TG: @apna_pdf

Join Telegram: @apna_library

मोढ़ेरा में सूर्य कुंड और सूर्य मंदिर

- मोढ़ेरा का सूर्य मंदिर (चित्र 9.9 देखें) सोलंकी राजवंश के राजा भीमदेव प्रथम द्वारा 1026 ई. में निर्मित, ग्यारहवीं शताब्दी की एक प्रमुख संरचना है।
- मंदिर के सामने एक विशाल वर्गाकार सीढ़ीनुमा जलाशय है, जिसे सूर्य कुंड के नाम से जाना जाता है। (चित्र 9.9 देखें), जो पवित्र वास्तुकला में जल निकायों के प्रभाव को दर्शाता है।
- मंदिर का तालाब सौ वर्ग मीटर में विस्तृत है तथा इसकी सीढ़ियों के बीच 108 छोटे छोटे देवस्थान बने हुए हैं।
- सभी ओर से खुला सभामंडप, ग्यारहवीं शताब्दी के आरंभ में पश्चिमी और मध्य भारतीय मंदिरों की शैली का अनुसरण करता है।
- गुजरात की काष्ठ-उत्कीर्णन की परंपरा का प्रभाव इस मंदिर में उपलब्ध प्रचुर उत्कीर्णन तथा मूर्ति निर्माण के कार्यों पर स्पष्ट दिखाई देता है (जो भव्य नक्काशी और मूर्तियों में स्पष्ट है, जो कलात्मक शैलियों का मिश्रण प्रदर्शित करती है)।
- केंद्रीय छोटे देवालय की दीवारों पर कोई उत्कीर्णन (कार्य) नहीं किया गया है और दीवारें सादी छोड़ दी गई हैं। चूँकि मंदिर पूर्वाभिमुख है इसलिए प्रत्येक वर्ष विषुव के समय (अर्थात् 21 मार्च) और 23 सितंबर को जब दिन-रात बराबर होते हैं, सूर्य सीधे केंद्रीय देवालय पर चमकता है।
- इस क्षेत्र में तालाबों, नदियों या पोखरों जैसे जल निकायों की निकटता मंदिर वास्तुकला का अभिन्न अंग बन गई है।
- केंद्रीय मंदिर की जानबूझकर सादी छोड़ी गई दीवारें विषुव के दौरान सौर संरेखण को प्रदर्शित करती है, तथा मंदिर के खगोलीय घटनाओं के साथ संबंध पर जोर देती है।

चित्र 9.9: सूर्य मंदिर, मोढ़ेरा, गुजरात

पूर्वी भारत

- पूर्वोत्तर, बंगाल और ओडिशा में मंदिर वास्तुकला के इतिहास से विशिष्ट शैलियों का पता चलता है।
- पूर्वोत्तर और बंगाल में वास्तुकला का इतिहास नवीनीकरण के कारण जटिल है तथा बाद के ईंट या कंक्रीट से बने मंदिर अब भी शेष हैं।
- **चिकनी पकी मिट्टी (टेराकोटा)** ही भवन निर्माण के लिए पटिया/फलक बनाने हेतु मुख्य सामग्री थी। ऐसी मिट्टी की पटिया/फलकों पर बंगाल में सातवीं शताब्दी तक बौद्ध और हिंदू देवी-देवताओं की मूर्तियाँ चित्रित की जाती रहीं हैं।
- असम और बंगाल में भी बड़ी संख्या में प्रतिमाएँ पाई गईं हैं जिनसे उन क्षेत्रों में कुछ महत्त्वपूर्ण क्षेत्रीय शैलियों के विकास का पता चलता है।

असम में मंदिर स्थापत्य का विकास

- असम में, तेजपुर के निकट डापर्वतिया से प्राप्त छठी शताब्दी की नक्काशीदार चौखट से इस क्षेत्र में गुप्त कालीन शैली के आगमन का पता चलता है।
- गुप्तोत्तर कालीन शैली इस क्षेत्र में दसवीं शताब्दी तक विद्यमान रही। किंतु बारहवीं से चौदहवीं शताब्दी के बीच असम में एक अलग क्षेत्रीय शैली विकसित हो गई।
- ऊपरी उत्तरी बर्मा से जब असम में टाई लोगों का आगमन हुआ तो उनकी शैली बंगाल की प्रमुख पाल शैली से मिल गई और उनके मिश्रण से एक नई शैली का विकास हुआ, जिसे अहोम शैली के नाम से जाना जाने लगा। अहोम शैली गुवाहाटी में सत्रहवीं शताब्दी के कामाख्या मंदिर (देवी कामाख्या को समर्पित एक शक्ति पीठ) (चित्र 9.10 देखें) में स्पष्ट दिखाई देती है।

चित्र 9.10: कामाख्या मंदिर, असम

ONLYIAS BY PHYSICS WALLAH

Join Telegram: @apna_library

बंगाल में मंदिर स्थापत्य का विकास

चित्र 9.11: टेराकोटा मंदिर, विष्णुपुर

- बंगाल की मंदिर शैलियाँ पाल शैली (नौवीं से ग्यारहवीं शताब्दी) से लेकर सेन शैली (ग्यारहवीं से तेरहवीं शताब्दी) तक भिन्न-भिन्न हैं।
- बौद्ध मठ स्थलों के संरक्षक पाल शासकों ने मंदिरों में स्थानीय वंग शैली को प्रभावित किया, जैसे कि बराकर में सिद्धेश्वर महादेव मंदिर, जो बाद की शताब्दियों में ऊँचे रूपों में विकसित हुआ। एक बड़े आमलक से सुसज्जित एक ऊँचे घुमावदार शिखर की विशेषता, यह ओडिशा के समकालीन मंदिरों के साथ समानताएँ साझा करता है।
- **टेराकोटा ईंट मंदिर** बंगाल में (चित्र 9.11 देखें) स्थानीय परम्पराओं और इस्लामी वास्तुकला से प्रभावित होकर सत्रहवीं शताब्दी में कला का प्रचलन बढ़ा।
- पुरुलिया जिले के तेलकुपी में जलमग्न हुए मंदिर उत्तर भारत में प्रचलित नागर उप-शैलियों की स्थापत्य शैली को प्रदर्शित करते हैं।
- इन मंदिरों के काले तथा धूसर रंग के बेसाल्ट और क्लोराइट पत्थरों से बने स्तंभों तथा मेहराबी ताकों ने गौर और पाँडुआ में स्थित भवनों को जो प्रारंभिक बंगाल सल्तनत के समय के हैं, बहुत प्रभावित किया।
- बंगाल की अनेक स्थानीय भवन निर्माण की परंपराओं ने भी उस क्षेत्र की मंदिर शैली को प्रभावित किया। इन स्थानीय परंपराओं में सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण था बंगाली झोपड़ी की बाँस की बनी छत का एक ओर ढलान या उसकी मुड़ी हुई शक्ल।
- इस लक्षण/विशेषता को आगे चलकर मुगल कालीन इमारतों में भी अपना लिया गया। ऐसी छत को संपूर्ण उत्तर भारत में बंगला छत कहा जाता है।
- मुगल काल में और उसके बाद पकी मिट्टी (टेराकोटा) की ईंटों से बीसियों मंदिर बंगाल और आज के बांग्लादेश में बनाए गए।
- इनकी शैली में बाँस की झोपड़ियों में प्रयुक्त स्थानीय निर्माण तकनीकों के तत्त्व तो शामिल थे ही, साथ ही पाल शैली के बचे खुचे पुराने रूपों और मुस्लिम वास्तुकला के मेहराबों और गुंबदों के रूपों को भी उनमें शामिल कर लिया गया था।
- इस शैली के भवन विष्णुपुर, बांकुड़ा, बर्द्धमान और बीरभूम में स्थान-स्थान पर मिलते हैं और ये अधिकतर सत्रहवीं शताब्दी के हैं। (चित्र 9.11 देखें)

ओडिशा में स्थापत्य कला की विशेषताएँ

चित्र 9.12: जगन्नाथ मंदिर, पुरी

- ओडिशा की वास्तुकला की मुख्य विशेषताओं को तीन वर्गों में विभाजित किया जाता है, अर्थात् रेखापीड, ढाडकेव और खाकरा।
- वहाँ के अधिकांश प्रमुख ऐतिहासिक स्थल प्राचीन कलिंग क्षेत्र में हैं अर्थात् आधुनिक पुरी जिले में ही स्थित हैं, जिसमें भुवनेश्वर अर्थात् पुराना त्रिभुवनेश्वर, पुरी तथा कोणार्क के क्षेत्र शामिल हैं।
- ओडिशा के मंदिरों की शैली एक भिन्न विशेषता कों दर्शाती है जिसे हम नागर शैली की उप-शैली कह सकते हैं। आमतौर पर शिखर जिसे ओडिशा में देवल कहते हैं, इस उप-शैली के अंतर्गत लगभग चोटी तक एकदम उर्ध्वाधर यानी बिल्कुल सीधा खड़ा होता है, किंतु यह चोटी तक पहुँचकर अचानक तेजी से भीतर की ओर मुड़ जाता है। मुख्य मंदिर की भू-योजना सदैव लगभग वर्गाकार होती है।
- इन मंदिरों में देवालयों से पहले सामान्य रूप से मंडल होते हैं, जिन्हें ओडिशा में जगमोहन कहा जाता है।
- ओडिशा के मंदिरों में आमतौर पर चहारदीवारी होती है, जो उन्हें अन्य शैलियों से पृथक करती है।
- बंगाल की खाड़ी के तट पर स्थित कोणार्क में भव्य सूर्य मंदिर, जिसका निर्माण लगभग 1240 ई. में हुआ था, एक विशाल संरचना है जिसका शिखर 70 मीटर ऊँचा था तथा जो उन्नीसवीं शताब्दी में ढह गया।
- मंदिर का विस्तृत संकुल एक चौकोर परिसर के भीतर स्थित था। उसमें से वर्तमान में जगमोहन अर्थात नृत्य मंडप ही शेष है।
- सूर्य मंदिर एक ऊँचे आधार (वेदी) पर स्थित है। इसकी दीवारें व्यापक रूप से आलंकारिक उत्कीर्णन से ढकी हुई हैं। इनमें बड़े-बड़े पहियों के 12 जोड़े हैं; पहियों में आरे और नाभिकेंद्र (हब) हैं, जो सूर्य देव की पौराणिक कथा का स्मरण कराते हैं।
- हरे पत्थर से निर्मित सूर्य की विशाल मूर्ति तथा रणनीतिक ढंग से रखी गई मूर्तियों ने गर्भगृह में सूर्य की किरणों को कैद कर लिया है।

पहाड़ी क्षेत्र

- कुमाऊँ, गढ़वाल, हिमाचल और कश्मीर की पहाड़ियों ने वास्तुकला के विशिष्ट स्वरूप को जन्म दिया।
- तक्षशिला और पेशावर जैसे गांधार स्थलों की निकटता ने कश्मीर को प्रभावित किया तथा इसमें सारनाथ, मथुरा, गुजरात और बंगाल की गुप्त और गुप्तोत्तर परंपराओं का मिश्रण हुआ है।

Search On TG: @apna_pdf

Join Telegram: @apna_library

- ब्राह्मण पंडितों और बौद्ध भिक्षुओं की लगातार यात्राओं ने पहाड़ियों में बौद्ध और हिंदू परंपराओं के अंतर्मिश्रण में योगदान दिया।

चित्र 9.13: पहाड़ियों में मंदिर परिसर

पहाड़ी क्षेत्र के मंदिरों में काष्ठ की परंपरा

- पहाड़ियों ने ढलवाँ छतों वाली लकड़ी की इमारतों की अपनी परंपरा को बनाए रखा।
- मंदिरों में अक्सर शैलियों का मिश्रण देखने को मिलता है, मुख्य गर्भगृह और शिखर रेखा-प्रासाद या लैटिना शैली में होते हैं, जबकि मंडप काष्ठ की वास्तुकला के पुराने रूप को दर्शाता है।
- कुछ मंदिर शिवालय आकार के हैं, जो पहाड़ी वास्तुकला की विशिष्टता को दर्शाते हैं।

कश्मीर में कारकोटा काल

- कश्मीर में कारकोटा काल, विशेषकर आठवीं और नौवीं शताब्दी के दौरान, मंदिर वास्तुकला के लिए महत्त्वपूर्ण है।
- **पन्द्रेथन मंदिर** संभवतः शिव को समर्पित यह मंदिर कश्मीर की काष्ठ निर्माण परंपरा का उदाहरण है, जिसमें बाहर की ओर झुकी हुई नुकीली छत है।
- मध्यम रूप से अलंकृत, यह गुप्तोत्तर सौंदर्यशास्त्र से भिन्न है, तथा इसमें हाथियों की पंक्ति और सुसज्जित द्वार के साथ सादगी पर जोर दिया गया है।

चंबा मूर्तियाँ और परंपरा का सम्मिश्रण

- चम्बा में स्थानीय परम्पराओं और गुप्तोत्तर शैली का सम्मिश्रण देखने को मिलता है, जो लक्षणा देवी मंदिर में स्थित महिषासुरमर्दिनी और नरसिंह जैसी मूर्तियों में देखा जा सकता है।
- कश्मीर की धातु मूर्तिकला परंपरा से प्रभावित, पीले रंग की इन मूर्तियों में संभवतः जस्ता और ताँबे का मिश्रण है।
- सातवीं शताब्दी में मेरुवर्मन के शासनकाल के दौरान निर्मित इस मंदिर पर लगे शिलालेख से इसके ऐतिहासिक महत्त्व का पता चलता है।

कुमाऊँ में नागर वास्तुकला

- कुमाऊँ में अल्मोड़ा के निकट जागेश्वर और पिथौरागढ़ के निकट चम्पावत के मंदिर इस क्षेत्र में नागर वास्तुकला के उत्कृष्ट उदाहरण प्रस्तुत करते हैं।
- ये मंदिर स्थापत्य शैली के क्षेत्रीय उत्कर्ष को प्रदर्शित करते हैं, तथा पहाड़ी वास्तुकला की समृद्ध विरासत में योगदान देते हैं।

द्रविड़ या दक्षिण भारतीय मंदिर शैली

- नागर मंदिरों के विपरीत, द्रविड़ मंदिर एक परिसर की दीवार के भीतर संलग्न होते हैं।
- चहारदीवारी में एक केंद्रीय प्रवेशद्वार है जिसे गोपुरम् के नाम से जाना जाता है।
- तमिलनाडु में मुख्य मंदिर का शिखर, विमान, ज्यामितीय रूप से ऊपर उठते हुए सीढ़ीदार पिरामिड का रूप लेता है, जो उत्तर भारत के घुमावदार गुंबद से भिन्न है।

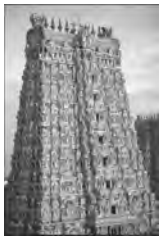
मीनाक्षी मंदिर, मदुरै

गंगैकोंडचोलपुरम मंदिर

तट मंदिर, महाबलीपुरम

Search On TG: @apna_pdf

ONLYIAS BY PHYSICS WALLAH

Join Telegram: @apna_library

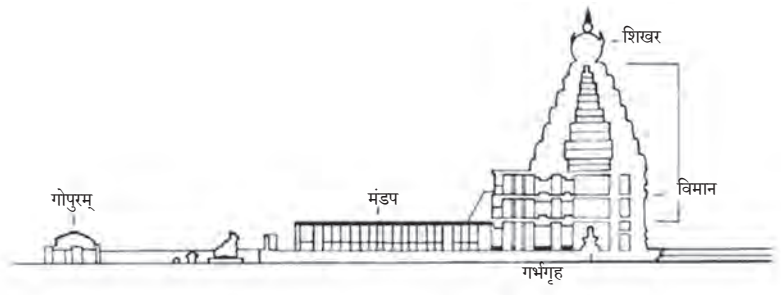

चित्र 9.14: द्रविड़ मंदिर

उत्कृष्ट विशेषताएँ

- दक्षिण भारतीय मंदिरों में, 'शिखर' शब्द का तात्पर्य केवल शीर्षस्थ तत्त्व से है, जो सामान्यतः एक छोटे स्तूपिका या अष्टकोणीय गुंबद (उत्तर भारतीय मंदिरों के आमलक और कलश के समतुल्य) के आकार का होता है।
- प्रवेश द्वार की मूर्तियों में आमतौर पर मंदिर की रक्षा करते हुए विशालकाय द्वारपालों को दर्शाया जाता है।
- मंदिर परिसरों में अक्सर बड़े जलाशय या मंदिर टैंक शामिल होते हैं।

मंदिर के आकार का विकास

- शिखरों के समूह वाले उत्तर भारतीय मंदिरों के विपरीत, दक्षिण भारतीय मंदिरों में अक्सर मुख्य मंदिर के साथ एक सबसे छोटा शिखर होता है, जो इसके ऐतिहासिक महत्त्व को दर्शाता है।
- समय के साथ-साथ, जैसे-जैसे शहर का विस्तार हुआ, मंदिर के चारों ओर ऊँचे गोपुरम् के साथ नई चहारदीवारी का निर्माण किया गया।
- तिरुचिरापल्ली के श्रीरंगम मंदिर जैसे उदाहरण में अनेक संकेन्द्रित वर्गाकर दीवारें हैं, जिनमें से प्रत्येक में अलग-अलग ऊँचाई के गोपुरम् हैं।

शहरीकरण और प्रशासनिक केंद्र

- तमिलनाडु में कांचीपुरम, तंजावुर (तंजौर), मदुरई और कुम्भकोणम् जैसे मंदिर शहरी वास्तुकला के केंद्र बिंदु बन गए।
- आठवीं से बारहवीं शताब्दी के दौरान मंदिर समृद्ध प्रशासनिक केंद्रों में परिवर्तित हो गए और व्यापक भू-भाग पर उनका नियंत्रण हो गया।

द्रविड़ मंदिरों का वर्गीकरण

- द्रविड़ मंदिरों को पाँच आकारों में वर्गीकृत किया गया है:
  - वर्गाकार (कूट या चतुरास्र),
  - आयताकार (शाला या आयतस्र),
  - अण्डाकार (गज-पृष्ठ या वृत्तायत),
  - वृत्ताकार (वृत्तीय), और
  - अष्टकोणीय (अष्टभुजाकार)।
- मंदिर की योजना और विमान के आकार का चयन प्रतिष्ठित देवता की प्रतिमा संबंधी प्रकृति से प्रभावित होता है।

पल्लव: दक्षिण भारतीय वास्तुकला के अग्रदूत

- पल्लव, जो दूसरी शताब्दी से आंध्र क्षेत्र में सक्रिय थे, दक्षिण में तमिलनाडु की ओर चले गए और वहाँ उन्होंने एक महत्त्वपूर्ण वास्तुशिल्प विरासत छोड़ी।
- प्रारंभ में, महेंद्रवर्मन प्रथम से संबंधित भवन शैलकृत (चट्टानों को काटकर बनाए गए) संरचनात्मक इमारतों के साथ मौजूद थे, जो दोनों रूपों में प्रारंभिक निपुणता को प्रदर्शित करते हैं।

विचारणीय बिंदु

भारतीय मंदिर वास्तुकला को सामान्यतौर पर नागर शैली और द्रविड़ शैली के रूप में वर्गीकृत किया जाता है जो क्रमशः भारत के उत्तर और दक्षिण में विकसित हुई। क्या आप इन दो शैलियों में अंतर बता सकते हैं? क्या आपने मंदिर वास्तुकला की अमरावती शैली के बारे में भी सुना है?

Search On TG: @apna_pdf

Join Telegram: @apna_library

- नरसिंहवर्मन प्रथम, जिन्हें मामल्ल के नाम से भी जाना जाता है, 640 ई. के आस-पास पल्लव सिंहासन पर आसीन हुए, साम्राज्य का विस्तार किया और महाबलीपुरम में निर्माण कार्य शुरू कराया।
- महाबलीपुरम स्थित तट मंदिर (चित्र 9.14 देखें), जो संभवतः नरसिंहवर्मन द्वितीय (राजसिंह) के शासनकाल में निर्मित हुआ था, में तीन मंदिर-दो भगवान शिव और एक विष्णु (अनंतशयन) कों समर्पित हैं।
- इस परिसर में एक जल कुंड, प्रारंभिक गोपुरम और नंदी की मूर्तियों के साक्ष्य मौजूद हैं, हालाँकि क्षरण के कारण कुछ नक्काशी प्रभावित हुई है।

चोल राजवंश: स्थापत्य कला का उत्कर्ष

- राजराजेश्वर या ब्रह्देश्वर मंदिर (चित्र 9.15 देखें), जिसका निर्माण चालुक्य वंशीय राजा चोल द्वारा लगभग 1009 ई. में पूरा किया गया था, सबसे विशाल और सबसे ऊँचा भारतीय मंदिर है।
- इसकी विशेषता यह है कि इसमें 70 मीटर ऊँचा एक विशाल पिरामिडनुमा विमान है, तथा इसमें एक अखंड अष्टकोणीय गुम्बदाकार स्तूपिका भी है।
- मंदिर के साथ जटिल मूर्तिकला वाले दो बड़े गोपुरों की भी कल्पना की गई थी।
- राजराजेश्वर सहित चोल मंदिर अपने पूर्ववर्तियों से बड़े पैमाने पर बने थे।
- मंदिर के गर्भगृह में शिव का दो मंजिला लिंग स्थापित है।
- दीवारों पर विस्तृत पौराणिक आख्यान चित्रित भित्तिचित्रों और मूर्तियों के माध्यम से दर्शाए गए हैं।
- विमान पर प्लास्टर की आकृतियाँ, जो संभवतः मराठा काल के दौरान जोड़ी गई थीं, मंदिर की भव्यता में योगदान करती हैं।

चित्र 9.15: (a) बृहदेश्वर मंदिर, तंजावुर; (b) नंदी, बृहदेश्वर मंदिर

दक्कन में वास्तुकला: बेसर और अन्य क्षेत्रीय शैलियों का विकास

- दक्कन क्षेत्र, विशेषकर कर्नाटक में मंदिर वास्तुकला में उत्तर और दक्षिण भारतीय प्रभावों का मिश्रण दिखता है।
- विद्वान बेसर नामक एक संकर शैली को स्वीकार करते हैं, जो सातवीं शताब्दी के मध्य में उभरी, जो नागर और द्रविड़ शैलियों से अलग थी।

राष्ट्रकूट और कैलाशनाथ मंदिर

- सातवीं शताब्दी के अंत या आठवीं शताब्दी के प्रारंभ में राष्ट्रकूटों ने दक्कन पर नियंत्रण कर लिया तथा एलोरा में भव्य वास्तुकला का प्रदर्शन किया।
- एलोरा का कैलाशनाथ मंदिर (चित्र 9.16 देखें), जो शिव को समर्पित है (जिसमें एक नंदी मंदिर और एक गोपुरम जैसा प्रवेश द्वार, आस-पास के मठ, सहायक मंदिर, सीढ़ियाँ और तीस मीटर ऊँचा एक भव्य टॉवर या विमान है), एक पूर्ण द्रविड़ इमारत है जिसे पूरी तरह से एक जीवंत शैलखंड पर उकेरकर बनाया गया है।
- कैलाशनाथ मंदिर के निर्माण के लिए एकाश्म पहाड़ी के एक हिस्से को धैर्यपूर्वक उकेरा (काटा) गया।
- एलोरा में राष्ट्रकूट कालीन वास्तुकला गतिशीलता, अनुपम भव्यता और अत्यधिक ऊर्जा से ओत-प्रोत हैं।

चित्र 9.16: कैलाशनाथ मंदिर, एलोरा

वातापी चालुक्य विरासत और प्रयोगात्मक शैलियाँ

- पुलकेशिन प्रथम ने 543 ई. में बादामी के आस-पास पश्चिमी चालुक्य साम्राज्य की स्थापना की।

Search On TG: @apna_library

PW ONLYIAS BY PHYSICS WALLAH

Join Telegram: @apna_library

- प्रारंभिक पश्चिमी चालुक्यों ने आठवीं शताब्दी के मध्य तक दक्कन के अधिकांश भाग पर प्रभुत्व बनाए रखा, अंततः राष्ट्रकूटों ने उनका स्थान ले लिया।
- कर्नाटक में, पश्चिमी चालुक्यों ने विभिन्न शैलियों का सम्मिश्रण किया, जिससे प्रयोगात्मक संकर बेसर वास्तुकला का विकास हुआ।
- प्रारंभिक चालुक्य स्थापत्य गतिविधि में चट्टान काटकर बनाई गई गुफाएँ शामिल थीं, जो संरचनात्मक मंदिरों में विकसित हुईं (चित्र 9.17 देखें)।
- ऐहोल स्थित रावण फाड़ी गुफा एक विशिष्ट मूर्तिकला शैली को प्रदर्शित करती है, जिसमें नटराज का एक महत्त्वपूर्ण चित्रण है, जो विशालकाय सप्तमातृकाओं से घिरा हुआ है तथा उनकी सुंदर, पतली शारीरिक संरचना और लालित्यपूर्ण पोशाक उनकी विशेषता है।
- चालुक्य इमारतें शैलियों के संकर रूप को दर्शाती हैं, जिनमें पट्टडकल स्थित विरुपाक्ष मंदिर एक उल्लेखनीय उदाहरण है, जो विस्तृत द्रविड़ परंपरा को प्रदर्शित करता है।
- पट्टडकल स्थित पापनाथ मंदिर भगवान शिव को समर्पित है और द्रविड़ परंपरा का उदाहरण है।

चित्र 9.17: मंदिर, बादामी

चित्र 9.18: (a) दुर्गा मंदिर, ऐहोल; (b) विरुपाक्ष मंदिर, पट्टदकल; (c) सोमनाथपुरम मंदिर

- महाकूट और स्वर्ग ब्रह्मा मंदिर जैसे पूर्वी चालुक्य मंदिर ओडिशा और राजस्थान की उत्तरी शैलियों का समावेश दर्शाते हैं।
- ऐहोल स्थित दुर्गा मंदिर (चित्र 9.18 देखें) अद्वितीय है, जिसमें एक प्रारंभिक अर्द्धवृत्ताकार मंदिर है जो बौद्ध चैत्य हॉल की याद दिलाता है, तथा इसके चारों ओर एक बाद के बरामदे में शैलीगत रूप से नागर शिखर (गुंबद) है।
- कर्नाटक के ऐहोल में स्थित लाडखान मंदिर लकड़ी की छत वाले पहाड़ी मंदिरों से प्रेरित है, लेकिन इसका निर्माण पूर्णतः पत्थर से किया गया है।

चित्र 9.19: नटराज, हलेबिड

होयसल और तारा-योजना मंदिर

- चोल तथा पांड्य के बाद होयसल दक्षिण भारत में प्रमुख संरक्षक बन गए।
- दक्षिणी दक्कन में लगभग सौ मंदिर खोजे गए हैं, जिनमें कर्नाटक के हलेबिड स्थित होयसलेश्वर मंदिर प्रमुख है।
- 1150 ई. में होयसल राजा द्वारा गहरे रंग के परतदार पत्थर (शिस्ट) का उपयोग करके निर्मित यह मंदिर बेलूर और सोमनाथपुरम के साथ-साथ तीन सबसे अधिक चर्चित मंदिरों में से एक है (चित्र 9.19 देखें)।
- बेलूर, हलेबिड और सोमनाथपुरम के मंदिरों की विशेषता मौलिक तारकीय भू-योजना और अत्यंत आलंकारिक उत्कीर्णनों की अलग पहचान बनाए रखना है। होयसल मंदिर को संकर या बेसर शैली के मंदिर कहा जाता है क्योंकि उनकी शैली द्रविड़ और नागर दोनों शैलियों से लेकर बीच की शैली है।
- हलेबिड का मंदिर 'नटराज' के रूप में शिव को समर्पित है। यह एक दोहरा भवन है जिसमें मंडप के लिए एक विशाल कक्ष है जहाँ संगीत और नृत्य के लिए मंडप है, उन पर पशुओं तथा देवी-देवताओं की अनेकानेक आकृतियाँ उकेरी हुई हैं।

विजयनगर की संश्लेषित संस्कृति

- सन् 1336 में स्थापित विजयनगर ने इटली के निकोलो-डी-कोंटी, पुर्तगाल के डोमिंगो, पायस, फर्नाओ नूनिज़ तथा दुआर्ते बारबोसा और अफ़गान अब्दुर्रज्जाक जैसे यात्रियों को आकर्षित किया, जिन्होंने इस नगर का विस्तृत विवरण दिया है।
- इनके अलावा अनेक संस्कृत तथा तेलुगू कृतियों में भी इस राज्य की गुंजायमान साहित्यिक परंपरा का उल्लेख मिलता है।
- वास्तुकला की दृष्टि से, विजयनगर में सदियों पुरानी द्रविड़ वास्तु शैलियों और विभिन्न सल्तनतों द्वारा प्रस्तुत इस्लामिक प्रभावों का संश्लिष्ट रूप मिलता है।
- पंद्रहवीं शताब्दी के अंतिम दशकों और सोलहवीं शताब्दी के आरंभिक दशकों के बीच के संकलनवादी (मिश्रित) भग्नावशेषों में उस समय का इतिहास सुरक्षित है।
- विजयनगर की उदार वास्तुकला में सदियों पुरानी परंपराओं का मिश्रण है, जिसमें कभी-कभी विदेशी प्रभाव भी दिखाई देते हैं।

Search On TG: @apna_pdf

Join Telegram: @apna_library

बौद्ध और जैन स्थापत्य कलाओं का विकास

मगध में पाल साम्राज्य

- छठी शताब्दी में गुप्त साम्राज्य के पतन के कारण पश्चिम में राजपूत रियासतें स्थापित हुईं और मगध (बिहार और बंगाल) में पाल साम्राज्य का उदय हुआ।
- दूसरे पाल शासक धर्मपाल ने आठवीं शताब्दी में राजपूत प्रतिहारों पर विजय प्राप्त करके एक शक्तिशाली साम्राज्य स्थापित किया।
- साम्राज्य की मुख्य धन-संपदा उपजाऊ गंगा मैदान में कृषि और अंतरराष्ट्रीय व्यापार से प्राप्त होती थी।

चित्र 9.20: महाबोधि मंदिर, बोधगया

बोधगया और महाबोधि मंदिर

- बोधगया एक तीर्थ स्थल है, जिसका महत्त्व इसलिए है क्योंकि यहीं पर सिद्धार्थ को ज्ञान की प्राप्ति हुई थी।
- **बोधगया में महाबोधि मंदिर** (चित्र 9.20 देखें), जिसे शुरू में राजा अशोक ने बनवाया था, समय के साथ इसमें कई परिवर्तन हुए।
- कहा जाता है कि मंदिर के चारों ओर स्थित वेदिका मौर्य काल के बाद की है, जो लगभग 100 ईसा पूर्व की है।
- वर्तमान मंदिर संरचना मूल सातवीं शताब्दी के डिजाइन के औपनिवेशिक काल के पुनर्निर्माण को दर्शाती है।
- मंदिर का रूपांकन असामान्य किस्म का है। न तो इसे पूर्णतः द्रविड़ है और न ही नागर शैली का मंदिर कहा जा सकता है।
- यह नागर मंदिर के समान संकीर्ण है, लेकिन द्रविड़ मंदिर की तरह बिना मोड़ के सीधे ऊपर की ओर उठा हुआ है।

नालंदा

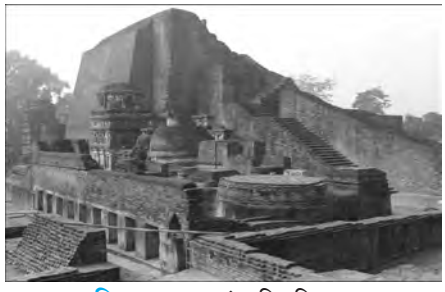

चित्र 9.21: नालंदा विश्वविद्यालय

- नालंदा, एक मठीय विश्वविद्यालय (चित्र 9.21 देखें), बौद्ध शिक्षाओं के केंद्र के रूप में कार्य करता था, तथा विभिन्न क्षेत्रों से विद्वानों और तीर्थयात्रियों को आकर्षित करता था।
- नालंदा का मठीय विश्वविद्यालय एक महाविहार है क्योंकि यह विभिन्न आकारों के अनेक मठों का संकुल है।
- नालंदा के बारे में अधिकांश जानकारी चीनी यात्री ह्वेनसांग के अभिलेखों पर आधारित है। इनमें कहा गया है कि इस मठ की नींव कुमार गुप्त प्रथम द्वारा पाँचवीं शताब्दी में रखी गई थी।
- इसका निर्माण कार्य परवर्ती सम्राटों के शासन काल में भी चलता रहा, जिन्होंने इस विलक्षण विश्वविद्यालय का कार्य संपन्न करवाया किया। इस बात के प्रमाण/साक्ष्य मिलते हैं कि बौद्ध धर्म के सभी तीन संप्रदायों- थेरवाद, महायान और वज्रयान- के सिद्धांत यहाँ पढ़ाए जाते थे।
- उत्तर चीन, तिब्बत और मध्य एशिया तथा दक्षिण पूर्व एशिया में भी श्रीलंका, थाईलैंड, बर्मा और अनेक अन्य देशों के बौद्ध भिक्षु बौद्ध धर्म की शिक्षा प्राप्त करने के लिए नालंदा और इसके आस-पास स्थित बोधगया तथा कुर्किहार आदि केंद्रों में आते थे, जिससे यह बौद्ध शिक्षा का एक प्रमुख केंद्र बन गया।
- नालंदा में मूर्तिकला गुप्तकालीन बौद्ध कला से विकसित हुई, जिसमें स्थानीय बिहार और मध्य भारतीय प्रभावों का संश्लेषण प्रदर्शित हुआ।

चित्र 9.22: (a) मूर्तिकला की बारीकियाँ, नालंदा; (b) नालंदा की खुदाई

Search on TG @apna_pdf

PW ONLYIAS BY PHYSICS WALLAH

Join Telegram: @apna_library

- नालंदा की मूर्तियाँ, प्लास्टर, पत्थर और कांस्य से निर्मित हैं, जिनमें महायान और वज्रयान देवताओं को दर्शाया गया है, जो ग्यारहवीं और बारहवीं शताब्दी के अंत में केंद्र में आए परिवर्तन को दर्शाती हैं।
- सातवीं और बारहवीं शताब्दी के बीच की नालंदा मूर्तियों में मुखाकृतिक विशेषताएँ, अंग-प्रत्यंग, हाव-भाव, वस्त्रों एवं आभूषणों का पहनावा, त्रि-आयामी रूप और प्रतिमाओं के पीछे की पटिया विस्तृत दिखाई देती हैं (चित्र 9.22 देखें)।
- नालंदा की कांस्य मूर्तियों का काल सातवीं और आठवीं शताब्दी से लगभग बारहवीं शताब्दी तक का है। इनकी संख्या पूर्वी भारत के अन्य सभी स्थलों से प्राप्त कांस्य प्रतिमाओं की संख्या से अधिक है और ये पाल राजाओं के शासन काल में बनी धातु की प्रतिमाओं के अधिक बड़े भाग का प्रतिनिधित्व करती हैं।
- नालंदा की प्रतिमाएँ प्रारंभ से महायान संप्रदाय के बौद्ध देवी देवताओं का प्रतिरूपण करती थीं, जैसे कि खड़े बुद्ध, बोधिसत्व जैसे कि मंजुश्री कुमार, कमलासनस्थ अवलोकितेश्वर और नाग-नागार्जुन।

चित्र 9.23: लक्ष्मण मंदिर, सिरपुर

- ग्यारहवीं तथा बारहवीं शताब्दियों के दौरान, जब नालंदा एक महत्त्वपूर्ण तांत्रिक केंद्र के रूप में उभरा, तब इन मूर्तियों में वज्रयान संप्रदाय के देवी-देवताओं, जैसे-वज्रशारदा (सरस्वती का ही एक रूप), खसर्पण, अवलोकितेश्वर आदि का प्रमुख रूप से निरूपण किया गया।
- एक रोचक तथ्य यह भी है कि अनेक ब्राह्मणिक प्रतिमाएँ जो सारनाथ शैली के अनुरूप नहीं थीं, वे भी नालंदा से प्राप्त हुई हैं। उनमें से अनेक प्रतिमाएँ, स्थल के आस-पास स्थित गाँवों के छोटे-छोटे मंदिरों में आज भी पूजी जाती हैं।
- **छत्तीसगढ़ में स्थित सीरपुर** (चित्र 9.23 देखें) आरंभिक प्राचीन ओडिशी शैली (550-800 ई.) का स्थल था जहाँ हिंदू तथा बौद्ध दोनों प्रकार के देवालय थे।
- यहाँ पाई जाने वाली बौद्ध प्रतिमाओं के मूर्तिशास्त्रीय और शैलीगत तत्त्व अनेक रूपों में नालंदा की प्रतिमाओं जैसे ही हैं।
- नागपट्टनम् (तमिलनाडु) का पट्टननगर भी चोल काल तक बौद्ध धर्म और कला का एक प्रमुख केंद्र बना रहा। चोल शैली की कांस्य और पत्थर की प्रतिमाएँ नागपट्टनम् में पाई गई हैं।

चित्र 9.24: भगवान बाहुबली, गोमतेश्वर, कर्नाटक

जैन स्थापत्य विरासत

- जैन धर्मावलंबियों ने भी हिन्दुओं की तरह प्रचुर मात्रा में मंदिरों का निर्माण करवाया, तथा पहाड़ी क्षेत्रों को छोड़कर पूरे भारत में उनके पवित्र स्थल पाए गए।
- बिहार में कुछ प्राचीनतम जैन तीर्थ स्थल हैं, जिन्हें प्रायः प्रारंभिक बौद्ध तीर्थस्थलों से जोड़ा जाता है।
- **एलोरा और ऐहोल** दक्कन में वास्तुकला की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण जैन स्थल हैं।
- देवगढ़, खजुराहो, चंदेरी और ग्वालियर जैसे मध्य भारतीय शहरों में भव्य जैन मंदिर स्थित हैं।
- कर्नाटक में जैन विरासत बहुत समृद्ध है, जहाँ श्रवण बेलगोला में विश्व की सबसे ऊँची विशाल मूर्ति - गोमतेश्वर की प्रतिमा (चित्र 9.24 देखें) स्थित है।
- राजस्थान के माउंट आबू पर स्थित **जैन मंदिर** का निर्माण विमल शाह द्वारा कराया गया जिसकी ऊँचाई 1200 मीटर है।
- काठियावाड़ (गुजरात) में पालिताना के निकट **शत्रुंजय की पहाड़ियों** में एक विशाल जैन तीर्थस्थल है जहाँ एक साथ जुड़े हुए बीसियों मंदिर दर्शनीय हैं।

चित्र 9.25: दिलवाड़ा मंदिर, माउंट आबू

Search On TG: @apna_pdf

Join Telegram: @apna_library

संरक्षण में चुनौतियाँ

- रजत एवं स्वर्ण से निर्मित मूर्तियों को संभवतः पिघलाकर पुनः उपयोग में लाया गया होगा।
- **नाजुक/भंगुर मूर्तियाँ** (Fragile sculptures) काष्ठ एवं हाथी दाँत से बनी कलाकृतियाँ समय के साथ नष्ट हो गईं।
- कई मूर्तियों को, जिनमें संभवतः चित्रित मूर्तियाँ भी शामिल हैं, हमेशा से रंग संरक्षण में चुनौतियों का सामना करना पड़ा है।
- इस अवधि के दौरान चित्रकला की समृद्ध परंपरा का प्रमाण कुछ धार्मिक इमारतों में बचे हुए भित्तिचित्रों से मिलता है।

कुछ प्रतिष्ठित मंदिर वास्तुकला

महाबलीपुरम

- महाबलीपुरम् पल्लव काल का एक महत्त्वपूर्ण तटीय शहर या पत्तन नगर है जहाँ अनेकों शैलकृत एवं स्वतंत्र खड़े मंदिरों का निर्माण सातवीं-आठवीं शताब्दी में हुआ।
- महाबलीपुरम् का यह विशाल प्रतिमा फलक (पैनल) जिसकी ऊँचाई 15 मीटर एवं लंबाई 30 मीटर है, विश्व में इस प्रकार का सबसे बड़ा और प्राचीनतम पैनल है। (चित्र 9.26 देखें)
- चट्टानों के मध्य एक प्राकृतिक दरार है जिसका उपयोग शिल्पियों द्वारा इतनी भव्यता से किया गया है कि इस दरार से बहकर पानी नीचे बने कुण्ड में एकत्रित होता है।
- विशेषज्ञों ने इसे भिन्न प्रकार से वर्णित किया है। कुछ का मानना है कि यह गंगावतरण का प्रकरण है तथा कुछ इसे किरातार्जुनीयम् की कथा से जोड़ते हैं और कुछ अर्जुन की तपस्या से। (किरातार्जुनीयम् पल्लव काल में कवि भारवि की लोकप्रिय रचना थी)
- अन्य विद्वानों के अनुसार, यह पैनल एक पल्लव राजा की प्रशस्ति है जो कुण्ड के मध्य पैनल की अनूठी पृष्ठभूमि में बैठता होगा।
- रिलीफ पैनल में एक मंदिर को महत्त्वपूर्ण स्थान दिया गया है जिसके सामने तपस्वी और श्रद्धालु विराजमान हैं। इसके ऊपर एक टांग पर खड़े योगी का चित्रण है जिसके हाथ सिर के ऊपर उठे हुए हैं जिसे कुछ लोग भगीरथ एवं कुछ अर्जुन मानते हैं।
- इसके समीप वरद मुद्रा में शिव को खड़ा दिखाया गया है। इस हाथ के नीचे खड़ा छोटा सा गण शक्तिशाली पाशुपत अस्त्र का मानवीकरण है।
- सभी चित्रित आकृतियों को कमनीय और सजीव गतिमान दर्शाया गया है। व्यक्तियों के अतिरिक्त उड़ते हुए गंधर्वों, पशुओं और पक्षियों की भी आकृतियाँ बनी हैं जिनमें एक सजीव और सुघड़ हाथी तथा मंदिर के नीचे बने हिरण के जोड़े की आकृति विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।
- इसमें एक हास्य तत्त्व भी प्रस्तुत किया गया है, जिसमें एक बिल्ली अपने पिछले पैरों पर खड़ी है, जो भागीरथ या अर्जुन की नकल कर रही है, तथा उसके चारों ओर चूहे हैं - जो संभवतः अविचलित तपस्या का रूपक है।
- मूर्तिकला पैनल का समग्र विषय अत्यंत विस्तृत और प्रतीकात्मक है, जिसमें धार्मिक और काव्यात्मक आख्यानों का सम्मिश्रण है, जो संभवतः पल्लव राजा के प्रति श्रद्धांजलि के रूप में कार्य करता है।

चित्र 9.26: महाबलीपुरम में मूर्तिकला पैनल

कैलाश पर्वत को हिलाते हुए रावण

- एलोरा के कैलाशनाथ मंदिर (गुफा संख्या-16) में रावण द्वारा कैलाश पर्वत को हिलाने का चित्रण मिलता है, जो आठवीं शताब्दी का है।
- निचले भाग में बहु-मुख, बहु-भुजाधारी रावण की विशाल मूर्ति, जो पर्वत को हिलाने में सहजता को दर्शाती है।

Search On TG: @apna_pdf

ONLYIAS BY PHYSICS WALLAH

Join Telegram: @apna_library

- बहुत से हाथों को गहराईपूर्वक उकेरने से वे त्रि-आयामी प्रभाव उत्पन्न करते हैं।
- ऊपर का आधा हिस्सा तीन श्रेणियों में विभाजित है। मध्य भाग में शिव और पार्वती की आकृति बनी हुई है; पार्वती को नाटकीय प्रकाश और छाया प्रभाव के साथ चित्रित किया गया है और उन्हें स्तंभित मुद्रा में दर्शाया गया है।
- मूर्तिकला में स्पष्ट मात्रा, सहायक आकृतियाँ और गतिशील क्रिया में गण (बौने) आकृतियाँ व्याप्त हैं।
- शिव और पार्वती के ऊपर स्थित दिव्य प्राणी गति में स्थिर हैं।
- एलोरा गुफा के चित्रों में आयतन का बाहर तक निकला होना और खाली स्थान होना एलोरा गुफा की प्रतिमाओं की मुख्य विशेषता है।
- आकृतियों का धड़ भाग पतला है और उनकी सतह को भारी दिखाया गया है, भुजाएँ पूरे घेरे में पतली हैं।
- दोनों ओर की सहायक आकृतियों का मोहरा कोणीय है। संपूर्ण रचना (संयोजन) की सभी आकृतियाँ सुंदर हैं और आपस में एक-दूसरे से गुंथी हुई सी प्रतीत होती हैं।

चित्र 9.27: (a) कैलाश पर्वत को हिलाते हुए रावण; (b) बाहरी दीवारों पर खुदी नक्काशी, कैलाशनाथ मंदिर, एलोरा

खजुराहो में लक्ष्मण मंदिर

- बलुआ पत्थर से बने खजुराहो मंदिरों को चंदेल राजवंश का संरक्षण प्राप्त था।
- चंदेल मंदिर वास्तुकला का प्रतिनिधित्व करने वाले लक्ष्मण मंदिर, के निर्माण का कार्य यशोवर्मन द्वारा 954 ई. में पूरा करवाया गया था।
- मंदिर की योजना पंचायन शैली की है जिसमें एक अर्द्धमंडप, एक मंडप, एक महामंडप और विमान सहित गर्भगृह शामिल हैं।
- एक भारी चबूतरे पर निर्मित, प्रत्येक भाग में पीछे की ओर उठती हुई एक अलग छत है।
- प्रकाश और वायु-संचार के लिए हॉल की दीवारों पर प्रक्षेपित बरामदे हैं, जो आगंतुकों के लिए सुलभ नहीं हैं।
- गर्भगृह की बाहरी दीवारें और प्रदक्षिणापथ (परिक्रमा पथ) की बाहरी और भीतरी दीवारें प्रतिमाओं से सुसज्जित हैं।
- **गर्भगृह पर ऊँचा शिखर** है। यह मंदिर कामुक मूर्तियों के लिए जाना जाता है, जिनमें से कई मूर्तियाँ इसकी चबूतरे की दीवार पर उकेरी गई हैं।
- दीवारों पर स्तरीय व्यवस्था छवि स्थापना के लिए विशिष्ट स्थान प्रदान करती है।
- भीतरी कक्ष भी अत्यंत सुसज्जित है, गर्भगृह का प्रवेश द्वार भारी भरकम स्तंभों और सरदलों से बनाया गया था।
- **चतुर्मुख विष्णु** गर्भगृह में एक प्रतिमा, प्रत्येक कोने में चार मंदिर, जिनमें विष्णु और सूर्य की प्रतिमाएँ हैं।
- मूर्तियों में वस्त्र-सज्जा एवं आभूषणों पर अत्यधिक ध्यान दिया गया है।

चित्र 9.28: लक्ष्मण मंदिर, खजुराहो

Search on TG @apna_pdf

Join Telegram: @apna_library

हमने मध्यकाल में भारत के विभिन्न भागों की प्रमुख कला शैलियों और कुछ सबसे प्रसिद्ध स्मारकों पर ध्यान केंद्रित किया है। यह समझना महत्त्वपूर्ण है कि हमने यहाँ जिन विशाल कलात्मक उपलब्धियों का अध्ययन किया है, वे कलाकारों के अकेले कार्य करने की स्थिति में कभी भी संभव नहीं हो सकती थीं। संभवतः इन बड़ी परियोजनाओं ने वास्तुकारों, निर्माणकर्ताओं, मूर्तिकारों और चित्रकारों को एक साथ लाया होगा।

भारतीय कांस्य मूर्तिकला

- भारतीय मूर्तिकारों ने पकी मिट्टी की मूर्तियाँ बनाने और पत्थर तराशने-उकेरने साथ ही काँसे को पिघलाने, ढालने और उससे मूर्तियाँ आदि बनाने के कार्य में भी प्रवीणता प्राप्त कर ली थी।
- सिंधु घाटी सभ्यता में ही ढलाई के लिए सिरे पेडु यानी 'लुप्त-मोम' की प्रक्रिया का ज्ञान हुआ, साथ ही ताँबा, जस्ता और टिन का उपयोग करके मिश्र धातु तैयार करने की भी खोज हुई, जिसके परिणामस्वरूप कांस्य धातु तैयार की गई।
- बौद्ध, हिन्दू और जैन प्रतीकों की कांस्य मूर्तियाँ और प्रतिमाएँ दूसरी शताब्दी से सोलहवीं शताब्दी तक की हैं।
- अधिकांश प्रतिमाएँ आनुष्ठानिक पूजा के लिए बनाई गई थीं, लेकिन ये रूप एवं सौंदर्य की दृष्टि से अत्यंत आकर्षक एवं उत्कृष्ट हैं।
- आज के जनजातीय समुदाय भी अपनी कला अभिव्यक्ति के लिए लुप्त मोम की प्रक्रिया का प्रयोग करते हैं।

लुप्त-मोम प्रक्रिया (लॉस्ट-वैक्स प्रोसेस)

चित्र 9.29: लुप्त-मोम प्रक्रिया

लॉस्ट-वैक्स यानी लुप्त-मोम प्रक्रिया में कई चरण होते हैं। सबसे पहले किसी प्रतिमा का मोम का प्रतिरूप हाथों से तैयार किया जाता है। इसे मधुमक्खी के विशुद्ध मोम से बनाया जाता है। इसके लिए पहले मोम को आग से पिघलाया जाता है तत्पश्चात एक महीन कपड़े से छानकर ठंडे पानी से भरे बर्तन में उसे निकाला जाता है। यहाँ यह पुनः ठोस हो जाता है, और फिर इसे पिचकी या फरनी से दबाते हैं जिससे मोम तार/धागे के आकार में आ जाता है। इसके पश्चात् बनाई गई प्रतिमा (आकृति) के चारों ओर मोम के इन तारों को लपेटा जाता है। फिर प्रतिमा के चारों ओर मिट्टी, रेत और गोबर के लेप की मोटी परत लगाई जाती है। इसके एक खुले सिरे पर मिट्टी का प्याला बना दिया जाता है। इसमें पिघली हुई धातु डाली जाती है। उपयोग की जाने वाली धातु का वजन प्रयुक्त मोम से दस गुना अधिक रखा जाता है। अधिकांशतः यह धातु टूटे हुए बर्तनों को पिघलाकर बनाई गई होती है। जब मिट्टी के प्याले में पिघली हुई धातु उड़ेलते हैं, उस समय मिट्टी से ढके साँचे को आग पर रखे रहने देते हैं। जैसे ही अंदर की मोम पिघलती है, धातु नालिकाओं में नीचे की ओर बहती है और मोम की प्रतिमा का आकार ले लेती है। धातु ढलाई की समूची प्रक्रिया को एक धार्मिक अनुष्ठान की तरह गंभीरतापूर्वक संपन्न किया जाता है। बाद में प्रतिमा को छेनी एवं रेती से चिकना किया जाता है और चमकाया जाता है। कांस्य प्रतिमा बनाना काफी मेहनत का कार्य है और इसके लिए अत्यधिक कुशलता की आवश्यकता होती है। कभी-कभी कांस्य प्रतिमा बनाने के लिए पाँच धातुओं- सोना, चाँदी, ताँबा, पीतल और सीसे के मिश्रण का उपयोग किया जाता है।

प्रारंभिक कांस्य कला

चित्र 9.30: कालियामर्दन, चोलकालीन कांस्य, तमिलनाडु

- मोहनजोदड़ो से प्राप्त नर्तकी की प्रतिमा सबसे प्राचीन कांस्य मूर्ति है जिसका काल 2500 ई.पू. माना जाता है।
- लगभग 1500 ईसा पूर्व, महाराष्ट्र के दैमाबाद से प्राप्त इसी प्रकार की कांस्य प्रतिमाएँ, लम्बी मानव आकृतियों और मजबूत बैलों वाले 'रथ' जैसे अद्वितीय चित्रण को प्रदर्शित करती हैं।
- बिहार के चौसा से प्राप्त जैन तीर्थंकर की प्रतिमाएँ, जो दूसरी शताब्दी के कुषाण काल की हैं, पुरुषोचित शारीरिक संरचना बनाने तथा मांसपेशियों को सरल बनाने में मूर्तिकारों की निपुणता को दर्शाती हैं।
- आदिनाथ या वृषभनाथ की प्रतिमा का निर्माण बहुत कुशलता से किया गया है, जिसमें उनके लंबे बाल हैं, जो तीर्थंकरों के सामान्य छोटे घुंघराले केश से भिन्न है।
- गुजरात और राजस्थान, जो जैन धर्म के दीर्घकालिक गढ़ रहे हैं, में महत्त्वपूर्ण जैन कांस्य कलाकृतियाँ प्राप्त हुई।
- बड़ौदा के निकट अकोटा का जैन कांस्य का भण्डार, जो पाँचवीं शताब्दी के अंत से सातवीं शताब्दी के अंत तक का है, लुप्त-मोम प्रक्रिया के माध्यम से प्राप्त सुंदर आकृतियों का उदाहरण है।

प्रभाव और शैलीगत विशेषताएँ

- अकोटा के भण्डार से यह प्रमाणित हुआ कि छठी और नौवीं शताब्दी के बीच गुजरात या पश्चिमी भारत में कांस्य ढलाई का कार्य अधिक विकसित हुआ।
- महावीर, पार्श्वनाथ या आदिनाथ जैसे जैन तीर्थंकर सामान्य विषय थे, जिन्हें नवीन स्वरूपों में दर्शाया गया था, या तो एकल, तीन के समूह में संयुक्त, या चौबीस तीर्थंकरों के पूर्ण समूह का प्रतिनिधित्व करते हुए।

Search On TG: @apna_library

PW ONLYIAS BY PHYSICS WALLAH

Join Telegram: @apna_library

- कांस्य धातु से बनी महिला प्रतिमाएँ प्रमुख तीर्थंकरों से जुड़ी यक्षिणी या शासनदेवियों को दर्शाती हैं।
- शैलीगत रूप से, अकोटा की ये कांस्य मूर्तियाँ गुप्त और वाकाटक काल दोनों की कांस्य मूर्तियों के प्रभावों को प्रतिबिम्बित करती हैं, तथा कलात्मक परंपराओं का सामंजस्यपूर्ण मिश्रण प्रदर्शित करती हैं।

चित्र 9.31: शिव परिवार, दसवीं शताब्दी ई., बिहार

बौद्ध केन्द्रों में कांस्य ढलाई

- बिहार और बंगाल में पाल राजवंश के शासन के दौरान (नौवीं शताब्दी), नालंदा जैसे बौद्ध केंद्रों में कांस्य ढलाई की एक शैली उभरी।
- नालंदा के निकट कुर्कीहार के मूर्तिकारों ने गुप्त काल की शास्त्रीय शैली को सफलतापूर्वक पुनर्जीवित किया, जो चार भुजाओं वाले अवलोकितेश्वर जैसी कांस्य मूर्तियों में स्पष्ट दिखाई देता है।
- वज्रयान बौद्ध धर्म का विकास तारा जैसी मूर्तियों की लोकप्रियता में परिलक्षित होता है, जो सिंहासन पर बैठी हैं, एक घुमावदार कमल का डंठल है और दाहिना हाथ अभय मुद्रा में है।

उत्तर भारत में कांस्य मूर्तियाँ

- गुप्त और गुप्तोत्तर काल (पाँचवीं से सातवीं शताब्दी) के दौरान उत्तर भारत, विशेष रूप से उत्तर प्रदेश और बिहार में, दाहिने हाथ में अभय मुद्रा में खड़ी बुद्ध की कई प्रतिमाएँ बनाई गईं।

चित्र 9.32: गणेश, कश्मीर (सातवीं शताब्दी ई.)

- मूर्तिकारों ने संघति या भिक्षु के वस्त्र को चित्रित करने में निपुणता का प्रदर्शन किया तथा परिष्कृत शास्त्रीय शैली का प्रदर्शन किया।
- उत्तर प्रदेश के धनेसर खेड़ा से प्राप्त कांस्य मूर्तियों में मथुरा शैली की परदेकी तहें दिखाई देती हैं, जबकि सारनाथ शैली की कांस्य मूर्तियों में तह रहित परदेकी झलक मिलती है।

हिमाचल प्रदेश और कश्मीर में कांस्य कला

- आठवीं से दसवीं शताब्दी के दौरान हिमाचल प्रदेश और कश्मीर में बौद्ध देवताओं और हिंदू देवी-देवताओं की कांस्य प्रतिमाओं का निर्माण हुआ।
- उल्लेखनीय रूप से, चार सिर वाले विष्णु (चतुराणा या वैकुंठ विष्णु) की पूजा सहित विभिन्न प्रतिमाओं के विकास ने एक अलग क्षेत्रीय शैली को प्रदर्शित किया (चित्र 9.33 देखें)। जिसमे केंद्रीय चेहरा वासुदेव का प्रतिनिधित्व करता है, अन्य दो चेहरे नरसिंह और वराह के हैं।

चित्र 9.33: कांस्य प्रतिमा, हिमाचल प्रदेश

- हिमाचल प्रदेश की उत्कृष्ट कांस्य प्रतिमाएँ नरसिंह अवतार और महिषासुरमर्दिनी दुर्गा को दर्शाती हैं, जो गतिशील और शक्तिशाली चित्रण पर जोर देती हैं।

मध्य भारत में कांस्य मूर्तियाँ

- गुप्त काल के दौरान महाराष्ट्र के फोफनार से प्राप्त वाकाटक कांस्य प्रतिमाएँ, अद्वितीय वस्त्र शैलियों के साथ अमरावती शैली के प्रभाव को दर्शाती हैं।

Search On TG: @apna_pdf

Join Telegram: @apna_library

दक्षिण भारत में कांस्य मूर्तियाँ

- दक्षिण भारत, विशेषकर तमिलनाडु में चोल काल (दसवीं से बारहवीं शताब्दी) के दौरान, सुंदर और उत्कृष्ट कांस्य मूर्तियों का निर्माण हुआ।

चित्र 9.34: देवी, चोलकालीन कांस्य प्रतिमा, तमिलनाडु

चित्र 9.35: नटराज, चोल काल, बारहवीं शताब्दी ई.

- विधवा चोल रानी, सेम्बियन महादेवी, दसवीं शताब्दी के दौरान एक प्रतिष्ठित संरक्षक थीं। (चित्र 9.34 देखें)
- आठवीं शताब्दी में शिव की प्रतिमा तथा चोल काल में नटराज के रूप में शिव की नृत्यरत आकृति का विकास हुआ।
- तंजावुर क्षेत्र (तंजौर) में शिव प्रतिमाओं की एक विस्तृत शृंखला प्रदर्शित की गई, जिसमें शिव और पार्वती के मिलन को दर्शाती अर्द्धनारीश्वर मूर्ति भी शामिल है।
- नौवीं शताब्दी की कल्याणसुंदर मूर्ति इस बात के लिए बेहद उल्लेखनीय है कि इसमें पाणिग्रहण (विवाह समारोह) को दो अलग-अलग मूर्तियों द्वारा दर्शाया गया है। शिव (वर) को अपने दाहिने हाथ से पार्वती (वधू) का दाहिना हाथ पकड़ते हुए दर्शाया गया है, जिसे शर्मीले भाव से एक कदम आगे बढ़ाते हुए दर्शाया गया है।

आंध्र प्रदेश में विजयनगर काल

- सोलहवीं शताब्दी के दौरान, जिसे आंध्र प्रदेश में विजयनगर काल कहा जाता है, मूर्तिकारों ने अपने राजसी संरक्षक की स्मृति को शाश्वत बनाए रखने के लिए उनकी प्रतिमाएँ बनाने का प्रयास भी किया।
- तिरुपति में, कांस्य की आदमकद प्रतिमाएँ बनाई गईं, जिनमें कृष्ण देव राय को अपनी दो महारानियों तिरुमालंबा और चित्र देवी के साथ प्रस्तुत किया गया है, जिसमें मूर्तिकार ने उनके वास्तविक चेहरों की विशेषताओं को कुछ आदर्श तत्त्वों के साथ प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया है।
- आदर्श रूप में प्रस्तुत करने की यह भावना शरीर के अन्य अंगों के प्रसंग में भी दिखाई देती है जिससे शरीर रौबदार और शानदार प्रतीत होता है।
- मूर्ति के रूप में खड़े हुए राजा तथा रानियों को प्रार्थना करते हुए दर्शाया गया है और उनके दोनों हाथ नमस्कार मुद्रा में जुड़े हुए दिखाए गए हैं।

चित्र 9.36: आठवीं शताब्दी के पल्लव काल की कांस्य प्रतिमाओं में अर्द्धपर्यंक आसन (एक पैर लटका हुआ) में बैठे शिव की प्रतिमा है। दाहिना हाथ आचमन मुद्रा में है, जो यह दर्शाता है कि वह जहर पीने वाले हैं।

Search On Tg: @apna_pdf

PW ONLYIAS BY PHYSICS WALLAH

Join Telegram: @apna_library

नटराज

चित्र 9.37: नटराज शिव

इस प्रतिमा में शिव को उनके दाएँ पैर पर संतुलित रूप से खड़े हुए और उसी पैर के पंजे से अज्ञान या विस्मृति के दैत्य 'अपस्मार' को दबाते हुए दिखाया गया है। साथ ही शिव भुजंगत्रासित की स्थिति में अपना बायाँ पैर उठाए हुए हैं जो 'तिरोभाव' यानी भक्त के मन से माया या भ्रम का परदा हटा देने का द्योतक है। उनकी चारों भुजाएँ बाहर की ओर फैली हुई हैं और मुख्य दायाँ हाथ 'अभय हस्त' की मुद्रा में उठा हुआ है। उनका ऊपरी दायाँ हाथ डमरू, जो उनका प्रिय वाद्य है, पकड़े हुए तालबद्ध ध्वनि उत्पन्न करता हुआ दिखाया गया है। ऊपरी बायाँ 'दोलहस्त' मुद्रा में दाएँ हाथ की 'अभयहस्त' - मुद्रा से जुड़ा हुआ है। उनकी जटाएँ दोनों ओर छिटकी हुई हैं और उस वृत्ताकार ज्वाला को छू रही हैं जो नृत्यरत संपूर्ण आकृति को घेरे हुए है। नटराज के रूप में नृत्य करते हुए शिव की सुप्रसिद्ध प्रतिमा का विकास चोल काल में पूर्ण रूप से हो चुका था और उसके बाद तो इस जटिल कांस्य प्रतिमा के नाना रूप तैयार किए गए। शिव को इस ब्रह्माण्ड अर्थात् वर्तमान विश्व के अंत के साथ जोड़ा जाता है और उनकी यह तांडव नृत्य की मुद्रा भी हिंदुओं की पुराण कथा के इस प्रसंग से ही जुड़ी है। तथापि, शिव अपने अनन्य भक्त के दृष्टिजगत में सदा इस नृत्य मुद्रा में उपस्थित रहते हैं। यह पौराणिक कथा चिंदबरम् से जुड़ी है इसलिए शिव को विशेष रूप से इसी रूप में पूजा जाता है। इसके अलावा शिव को भारत में नृत्य कला का अधिष्ठाता देवता भी माना जाता है।

निष्कर्ष

स्पष्ट है कि भारतीय मंदिरों की स्थापत्य कला और मूर्तिकला ने न केवल धार्मिक और सांस्कृतिक पहचान को आकार दिया, बल्कि कालांतर में समय के साथ यह कला का अद्वितीय रूप भी बन गई। मंदिरों की वास्तुकला में विभिन्न कालों के प्रभाव और शैलियों का समागम देखने को मिलता है, जिसमें चोल, पाल, चालुक्य, और होयसल जैसे राजवंशों का महत्त्वपूर्ण योगदान रहा। इन मंदिरों में मूर्तियों की संरचना, उनके सौंदर्यशास्त्र और धार्मिक चित्रण ने भारतीय समाज के आध्यात्मिक दृष्टिकोण को मजबूत किया। भारतीय मंदिरों का निर्माण केवल धार्मिक स्थल नहीं, बल्कि कला, विज्ञान और समाज के विकास का प्रतीक भी है। ये संरचनाएँ भारतीय सांस्कृतिक धरोहर का अभिन्न हिस्सा बनीं, जिनकी विशिष्टता आज भी दुनिया भर में पहचानी जाती है।

महत्त्वपूर्ण शब्दावलियाँ

- **मंडप:** मंदिर के सामने का हॉल या मंडप, जिसका उपयोग सभाओं और अनुष्ठानों के लिए किया जाता है।
- **शिखर:** मीनार या शिखर, प्रायः हिंदू मंदिर का सबसे ऊँचा हिस्सा होता है।
- **गर्भगृह:** गर्भगृह, मंदिर का सबसे भीतरी कक्ष जिसमें मुख्य देवता की प्रतिमा स्थित होती है।
- **विमान:** द्रविड़ शैली के मंदिरों में गर्भगृह के ऊपर पिरामिड के आकार का टॉवर।
- **अमलक:** मंदिर के शिखर के शीर्ष पर गोलाकार पत्थर की डिस्क।
- **कलश:** सजावटी कलश या बर्तन जैसी संरचना अक्सर मंदिर के शीर्ष पर होती है।
- **नंदी मंडप:** वह स्थान जहाँ पवित्र बैल नंदी की मूर्ति स्थापित होती है, जो आमतौर पर मुख्य मंदिर के सामने स्थित होती है।
- **बरामदा:** मुख्य मंदिर संरचना के चारों ओर का ढका हुआ क्षेत्र या बरामदा।
- **कोलोनेड:** स्तंभों की एक समान दूरी वाली पंक्ति जो आमतौर पर छत संरचना के आधार को सहारा देती है।
- **वज्रयान:** बौद्ध धर्म का तांत्रिक रूप, जिसने बाद के काल में प्रतिमा विज्ञान और मूर्तियों को प्रभावित किया।
- **वज्रशारदा:** सरस्वती का तांत्रिक रूप, बाद की कांस्य मूर्तियों में दर्शाया गया।
- **थेरवाद:** बौद्ध धर्म के प्रारंभिक रूपों में से एक, जिसने प्रारंभिक बौद्ध मूर्तियों को प्रभावित किया।
- **महायान पंथ:** मूर्तियों में चित्रित बौद्ध देवताओं और बोधिसत्वों का एक विविध समूह।
- **बोधिसत्व:** बुद्धत्व के मार्ग पर अग्रसर प्रबुद्ध व्यक्ति, जिसे सामान्यतः कांस्य में चित्रित किया जाता है।
- **नटराज:** भगवान शिव का प्रतिष्ठित नृत्य रूप कांस्य मूर्तियों में एक सामान्य विषय है।
- **लिंग:** भगवान शिव का अमूर्त चित्रण, जिसे प्रायः कांस्य मूर्तियों में दर्शाया जाता है।
- **खासर्पण:** देवता जिसे प्रायः प्रजनन क्षमता से जोड़ा जाता है, तथा कांस्य मूर्तियों में दर्शाया जाता है।
- **कास्टिंग:** पिघली हुई धातु को साँचों में डालकर कांस्य मूर्तियाँ बनाने की प्रक्रिया।
- **प्रतीक चिन्ह:** कला में विषयों का प्रतीकात्मक प्रतिनिधित्व और व्याख्या, कांस्य मूर्तियों को प्रभावित करती है।

Search On TG: @apna_pdf

Join Telegram: @apna_library

इंडो-इस्लामिक वास्तुकला के कुछ कलात्मक पहलू

संदर्भ: इस अध्याय में NCERT पाठ्यपुस्तक की कक्षा-XI (भारतीय कला का परिचय-I) के अध्याय-8 का सारांश शामिल किया गया है।

परिचय

इंडो-इस्लामिक वास्तुकला, जो भारतीय और इस्लामी वास्तुकला शैलियों का समामेलन है, मध्यकाल के दौरान प्रमुखता से उभरी, जो दो अलग-अलग सभ्यताओं के सामाजिक-राजनीतिक और सांस्कृतिक एकीकरण को दर्शाती है। इस अनूठे सम्मिश्रण का अध्ययन 19वीं शताब्दी के दौरान, विशेषकर ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन के दौरान प्रारंभ हुआ, जब ब्रिटिश और भारतीय दोनों देशों के विद्वानों ने व्यवस्थित रूप से वास्तुकला के चमत्कारों की विशाल शृंखला का दस्तावेजीकरण और अन्वेषण करना शुरू किया।

इंडो-इस्लामिक वास्तुकला

- ईसा की सातवीं तथा आठवीं शताब्दी में इस्लाम धर्म का, स्पेन और भारत की ओर प्रसार हुआ। वैसे तो मुस्लिम लोगों ने ईसा की आठवीं शताब्दी से ही सिंधु गुजरात आदि प्रदेशों में इमारतों के निर्माण का कार्य शुरू कर दिया था किंतु बड़े पैमाने पर भवन निर्माण का कार्य ईसा की 13वीं शताब्दी के प्रारंभ में तुर्कों का शासन स्थापित हो जाने के बाद शुरू हुआ, जब उन्होंने उत्तर भारत पर विजय प्राप्त कर दिल्ली सल्तनत की स्थापना की।

विचारणीय बिंदु

क्या आपको लगता है कि इंडो- इस्लामिक वास्तुकला में भारतीय और इस्लामी स्थापत्य शैलियों का सम्मिश्रण मुख्यतः कलात्मक और सौंदर्य संबंधी विचारों से प्रेरित था, या सामाजिक-राजनीतिक और सांस्कृतिक कारकों ने इस अनूठे मिश्रण को आकार देने में विशेष भूमिका निभाई?

- **वास्तुकला शैलियों का मिश्रण:** मुस्लिम शासकों ने स्थानीय भारतीय संस्कृतियों की विशेषताओं को अपनी वास्तुकला तकनीकों के साथ अपना लिया। इस मिश्रण के फलस्वरूप संरचनात्मक तकनीकों, रूपों और शैलियों का एक मिश्रण तैयार हुआ, जिसे इंडो-सारसेनिक या इंडो-इस्लामिक वास्तुकला के रूप में जाना जाता है।

वास्तुकला पर धार्मिक प्रभाव

- **हिंदू प्रभाव:** हिंदू यह मानते हैं कि परमेश्वर नाना रूपों में सर्वत्र व्याप्त है। अतः हिंदू हर प्रकार की सतहों पर प्रतिमाओं और चित्रों को उकेरते हैं।
- **मुस्लिम प्रभाव:** मुस्लिमों को किसी भी सजीव रूप की, किसी भी सतह पर प्रतिकृति बनाना मना है इसलिए उन्होंने प्लास्टर या पत्थर पर 'अरबस्क' यानी बेल-बूटे का काम, ज्यामितीय प्रतिरूप और सुलेखन की कलाओं का विकास किया।

वास्तुकला के संरक्षक

भारत में शासकों, कुलीनों, उनके परिवारों, व्यापारियों, व्यापारी संघों, ग्रामीण अभिजात वर्ग और विशिष्ट पंथों के भक्तों सहित धनी व्यक्तियों ने मुख्य रूप से प्रमुख वास्तुकला उपक्रमों को वित्तपोषित और प्रभावित किया।

इंडो-इस्लामिक संरचनाओं की वास्तुकला

- समय के साथ, भारत में मुस्लिम आगमन के समय धार्मिक और धर्मनिरपेक्ष, दोनों प्रकार की वास्तुकला विद्यमान थी। आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु विभिन्न वास्तुशिल्प संरचनाओं का निर्माण हुआ।
- इन प्रमुख संरचनाओं में रोजमर्रा की इबादत के लिए मस्जिदे, मकबरे, **दरगाहें, मीनारें, हमाम या स्नानागार, सुनियोजित बाग-बगीचे, मदरसे (शैक्षिक संस्थान),** सराय या कारवाँ, कोस मीनारें आदि शामिल हैं।
- ये संरचनाएँ, भारतीय उपमहाद्वीप में पहले से मौजूद भवन प्रकारों का पूरक थीं।

Search On TG: @apna_pdf

Join Telegram: @apna_library

इंडो-इस्लामिक वास्तुकला को निर्धारित करने वाले कारक

- यद्यपि इंडो-इस्लामिक वास्तुकला पर सीरियाई, फारसी और तुर्की प्रभाव तो स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होते हैं लेकिन भारतीय वास्तुकलात्मक तथा आलंकारिक शैलियों तथा विचारों ने भी इसके संरचना व निर्माण कार्यों को प्रभावित किया।
- इसके अलावा सामग्रियों की उपलब्धता, संसाधनों तथा कौशलों की परिसीमा, और संरक्षकों की सौंदर्यानुभूति ने भी इस वास्तुकला पर पर्याप्त प्रभाव डाला।

इंडो-इस्लामिक वास्तुकला की शैलियाँ

- इंडो-इस्लामिक वास्तुकला को परंपरा की दृष्टि से कई श्रेणियों में बाँटा जाता है।
  - **शाही शैली** (दिल्ली सल्तनत काल के दौरान उभरी)।
  - **प्रांतीय शैली** (मांडु, गुजरात, बंगाल और जौनपुर जैसे क्षेत्रों से जुड़ी हुई है)।
  - **मुगल शैली** (दिल्ली, आगरा और लाहौर जैसे स्थानों में विशिष्ट रूप से मौजूद है)।
  - **दक्कनी शैली** इसका श्रेय बीजापुर और गोलकुंडा जैसे क्षेत्रों को दिया जाता है।
- ये श्रेणियाँ वास्तुकलात्मक कार्यों की विशिष्टताओं को ध्यान में रखते हुए बनाई गई हैं। इसलिए इन्हें अपरिवर्तनीय खाँचों में बाँधकर नहीं रखा जा सकता।

वास्तुकला प्रभाव

- इंडो-इस्लामिक वास्तुकला में कुछ प्रांतीय शैलियाँ, विशेष रूप से बंगाल और जौनपुर की शैलियाँ, अपनी विशिष्टता के लिए पहचानी जाती हैं।
- गुजरात की वास्तुकला का एक **अलग क्षेत्रीय स्वरूप** था, क्योंकि उसके संरक्षकों ने मकबरों, मस्जिदों और दरगाहों के लिए क्षेत्रीय मंदिर परंपराओं के कई तत्त्व अपना लिए थे, जैसे कि तोरण, मेहराबों में सरदल, लिंटल, घंटी और जंजीर के नमूनों का उत्कीर्णन और उत्कीर्णित फलक जिनमें वृक्ष उकेरे गए थे।
- इसके विपरीत, **सरखेज के शेख अहमद खट्टू** की पंद्रहवीं शताब्दी में सफेद संगमरमर से बनी दरगाह ने रूप और साज-सज्जा में मुगल मकबरों को बहुत प्रभावित किया।

इंडो-इस्लामिक वास्तुकला में अन्य सजावटी रूप

- इन रुपों में कटाव,उत्कीर्णन या गचकारी के जरिए प्लास्टर पर डिजाइन कला शामिल है। इन डिजाइनों को सादा छोड़ दिया जाता था या उनमें रंग भरे जाते थे। नमूने पत्थर पर पेंट किए जाते थे या पत्थर में उकेरे जाते थे।
- इन नमूनों में तरह -तरह के फूल शामिल थे। ये फूल उपमहाद्वीप में और बाहरी स्थानों पर खासतौर पर ईरान में लगते थे।
- चापों/मेहराबों के भीतरी मोड़ों में कमल की कली के नमूने बनाए जाते थे। दीवारों को भी **सरु, चिनार,और अन्य वृक्षों** तथा फूलदानों से सजाया जाता था। भीतरी छत को सजाने के लिए फूलों के अनेक मिश्रित नमूनों को काम में लिया जाता था।
- 14वीं,15वीं और 16वीं शताब्दियों में, दीवारों और गुंबदों की सतहों पर टाइलें भी लगाई जाती थीं। उस समय लोकप्रिय **रंग नीला, फिरोजी, हरा और पीला थे।**
- उसके बाद सतही सजावट के लिए खासतौर पर दीवारों के हाशियों के लिए कारखाना या चौपड़ पच्चीकारी की तकनीक का इस्तेमाल किया जाने लगा। कभी-कभी भीतरी दीवारों और चंदोवों **पर लाजवर्द मणि (लेपिस लेजुली) का भी प्रयोग किया जाता था।**
- **टेसेलेशन (मोजेक डिजाइन) और पित्रादूरा** (चित्र 10.1 देखें) की तकनीकों का उपयोग किया गया, विशेष रूप से दीवारों के **डैडो पैनलों (चित्र 10.2 देखें) में।**

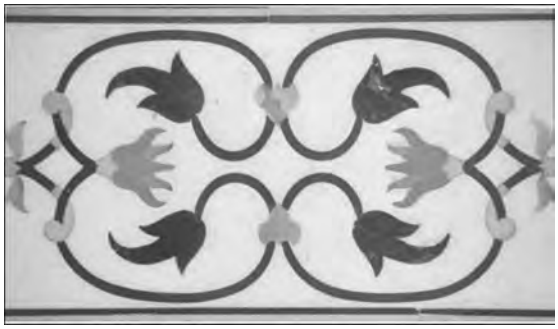

चित्र 10.1: पित्रादूरा कार्य, आगरा

चित्र 10.2: दीवार पर डैडो पैनल, आगरा

Search on TG: @apna_pdf

Join Telegram: @apna_library

- अन्य किस्म की सजावटों में अरबस्क **यानी बेलबूटे के काम, सुलेखन और ऊँचे तथा नीचे उभारदार उत्कीर्णन** शामिल थे। जालियों का प्रयोग भी बहुतायत से होता था।
- **ट्रैबिएशन** शैली में सपाट छतों या छोटे गुंबदों को सहारा देने के लिए ब्रैकेट, खंभे और लिंटल का उपयोग किया गया है।
- समय के साथ चापों के डिजाइन में परिवर्तन होता गया। 16वीं शताब्दी और उससे आगे छापें तिपुलिया यह बहुत से बेल-बूटों वाली बनाई जाने लगी।
- चापों के स्कन्ध, गोल आभूषणों या उभरवाँ नक्काशी से सजे होते थे।
- व्योमरेखा केंद्रीय गुंबद एवं अन्य छोटे गुंबदों, छत्रियों और छोटी-छोटी मीनारों का मिला-जुला दृश्य प्रस्तुत करती थी। केंद्रीय गुंबद की चोटी पर एक उलटे कमल पुष्प का नमूना और एक धातु या पत्थर का कलश होता था।

इंडो-इस्लामिक वास्तुकला में प्रयुक्त सामग्रियाँ

- इंडो-इस्लामिक वास्तुकला के क्षेत्र में, भवनों की दीवारें काफी मोटी होती थीं।
- इन दीवारों को चुनने के बाद उन पर **चूने की लिपाई** की जाती थी या पत्थर के चौके जड़े जाते थे।
- निर्माण के काम में कई तरह के पत्थरों का इस्तेमाल होता था, जैसे-**स्फटिक**,**बलुआ पत्थर**,**पीला पत्थर, संगमरमर** आदि।
- इसके अतिरिक्त, दीवारों को अंतिम रूप देने तथा आकर्षक बनाने के लिए **बहुरंगी टाइलों** का प्रयोग किया जाता था।
- 17वीं शताब्दी के शुरू होते होते भवन निर्माण के कार्य में ईंटों का भी प्रयोग होने लगा।
- इस चरण की मुख्य बात यह थी कि स्थानीय सामग्रियों पर निर्भरता बढ़ गई।

विचारणीय बिंदु

आपके अनुसार स्थानीय सामग्रियों की उपलब्धता और कारीगरों के कौशल ने मध्ययुगीन भारत में इंडो- इस्लामिक वास्तुकला संरचनाओं की आकृतियों और निर्माण को किस प्रकार प्रभावित किया, जिससे भारतीय और इस्लामी वास्तुकला शैलियों का एक अनूठा मिश्रण सामने आया?

इंडो-इस्लामिक वास्तुकला का स्वरूप

किला/दुर्ग

- "किला" शब्द का तात्पर्य किसी भी ऐसी संरचना से है जिसका निर्माण या उपयोग बाह्य आक्रमणों से बचाव के लिए किसी क्षेत्र की रक्षा के उद्देश्य से किया जाता है।
- किले बनाना मध्यकालीन भारतीय राजाओं तथा राजघरानों की विशेषता थी क्योंकि ऐसे अभेद्य किलों को अक्सर राजा की शक्ति का प्रतीक माना जाता था।
- जब ऐसे किलों को आक्रमणकारी सेना द्वारा अपने कब्जे में कर लिया जाता था तो पराजित शासक की संपूर्ण शक्ति और प्रभुसत्ता उससे छिन जाती थी क्योंकि उसे विजेता राजा के आधिपत्य को स्वीकार करना पड़ता था।
- सामरिक और वास्तुकला उत्कृष्टता के प्रतीक ये किले प्रायः अत्यंत ऊँचाई पर बनाए गए थे, जो सामरिक दृष्टि से अत्यंत सुविधाजनक स्थान थे और विस्मयकारी दृश्य प्रदान करते थे।

विचारणीय बिंदु

व्युत्पत्ति की दृष्टि से, शब्द फोर्ट' लैटिन मूल शब्दफोर्टिस या फोर्टे से लिया गया है, जिसका अर्थ है मजबूत या दृढ़। ' फोर्ट' के लिए स्वदेशी शब्ददुर्ग है जिसे संस्कृत शब्द दुर्गम से लिया गया है, जिसका अर्थ है कठिन।

भारत के भव्य किले

- **चित्तौड़गढ़:** यह एशिया का सबसे बड़ा किला है। इस किले के पास सबसे लंबे समय तक किसी सत्ता द्वारा शासित किए जाने का रिकॉर्ड है। इस किले में विभिन्न संरचनाएँ जैसे विजय स्तंभ और कई जलाशय हैं। इस किले के प्रधान सेनापतियों तथा सैनिकों के साथ अनेक वीरगाथाएँ जुड़ी हुई हैं। इसके अलावा इसमें कई ऐसे स्थल हैं जो यहाँ के स्त्री-पुरुषों के त्याग, तपस्या और बलिदान की याद दिलाते हैं।
- **दौलताबाद (पूर्व में देवगिरि):** दौलताबाद के किले में शत्रु को धोखे में डालने के लिए अनेक सामरिक व्यवस्थाएँ की गई थीं, जैसे- उसके प्रवेश द्वार दूर-दूर पर टेढ़े-मेढ़े ढंग से बेहद मजबूती के साथ बनाए गए थे जिन्हें हाथियों की सहायता से भी तोड़ना और खोलना आसान नहीं था। यहाँ एक के भीतर एक यानी दो किले बनाए गए थे जिनमें दूसरा किला पहले किले की अपेक्षा अधिक ऊँचाई पर बनाया गया था और उस तक पहुँचने के लिए एक भूल-भुलैया को पार करना पड़ता था और इस भूल-भुलैया में लिया गया एक भी गलत मोड़ शत्रु के सैनिकों को चक्कर में डाल देता था या सैकड़ों फुट नीचे खाई में गिराकर मौत के मुँह में पहुँचा देता था। (चित्र 10.3 देखें)
- **ग्वालियर किला:** ग्वालियर का किला इसलिए अजेय माना जाता था क्योंकि इसकी खड़ी ऊँचाई एकदम सपाट थी और उस पर चढ़ना असंभव था। इसे आवास की व्यवस्था के अलावा और भी कई कामों में लिया जाता था।

Search On TG: @apna_pdf

Join Telegram: @apna_library

चित्र 10.3: दौलताबाद किला

चित्र 10.4: ग्वालियर किला

मीनारें

- स्तंभ या गुम्बद का एक अन्य रूप मीनार थी, जो भारतीय उपमहाद्वीप में सर्वत्र पायी जाती है। मध्य काल की सबसे प्रसिद्ध और आकर्षक मीनारें थीं-दिल्ली में कुतुब मीनार और दौलताबाद के किले में चाँद मीनार।
- इन मीनारों का दैनिक उपयोग नमाज या इबादत के लिए अजान लगाना था। तथापि इसकी असाधारण आकाशीय ऊँचाई शासक की शक्ति का प्रतीक थी जो उसके विरोधियों के मन में भय उत्पन्न करती रहती थी, चाहे वे विरोधी समानार्थी हों या अन्य किसी धर्म के अनुयायी।

मीनारें

यह शब्द स्तंभ' या टॉवर का व्युत्पन्न है, जो मध्यकालीन समय में भारतीय उपमहाद्वीप में विशिष्ट बन गया।

कुतुब मीनार, दिल्ली

- कुतुब मीनार का संबंध दिल्ली के संत ख्वाजा कुतुबुद्दीन बख्तियार काकी से भी जोड़ा जाता है।
- तेरहवीं सदी में बनाई गई यह मीनार 234 फुट ऊँची है। इसकी चार मंजिलें हैं जो ऊपर की ओर क्रमशः पतली या संकरी होती चली जाती हैं।
- यह बहुभुजी और वृत्ताकार रूपों का मिश्रण है। यह अधिकतर लाल और पांडु रंग के बलुआ पत्थर की बनी है, अलबत्ता इसकी ऊपरी मंजिलों में कहीं-कहीं संगमरमर का भी प्रयोग हुआ है।
- इसकी एक विशेषता यह है कि इसके बारजे अत्यंत सजे हुए हैं और इसमें कई शिलालेख हैं जिन पर फूल-पत्तियों के नमूने बने हैं।

चित्र 10.5: कुतुब मीनार, दिल्ली

चाँद मीनार, दौलताबाद किला

- 15वीं शताब्दी में निर्मित, चाँद मीनार 210 फीट ऊँची है, तथा इसकी चार मंजिले हैं। (चित्र 10.6 देखें)
- अब यह आड़ू रंग से पुती हुई है। इसका बाहरी भाग कभी पकी हुई टाइलों पर बनी द्विरेखीय सज्जापट्टी और बड़े-बड़े अक्षरों में खुदी कुरान की आयतों के लिए प्रसिद्ध था।
- यद्यपि यह मीनार एक ईरानी स्मारक की तरह दिखाई देती है, लेकिन इसके निर्माण में दिल्ली और ईरान के वास्तुकलाविदों के साथ-साथ स्थानीय वास्तु कलाकारों का भी हाथ था।

चित्र 10.6: चाँद मीनार, दौलताबाद

मकबरा

शासकों और शाही परिवार के लोगों की कब्रों पर विशाल मकबरे बनाना मध्यकालीन भारत की एक लोकप्रिय प्रथा था।

प्रमुख मकबरें और उनका महत्व

- इस काल के प्रमुख मकबरों में दिल्ली में गयासुद्दीन तुगलक, हुमायूँ, अब्दुर्रहीम खानखाना और आगरा में स्थित अकबर व एत्मादुद्दौला के मकबरे शामिल हैं। (चित्र 10.7 देखें)
- **वैचारिक प्रेरणा:** मकबरा यह सोचकर बनाया जाता था कि मज़हब में सच्चा विश्वास रखने वाले इंसान को कयामत के दिन इनाम के तौर पर सदा के लिए जन्नत भेज दिया जाएगा जहाँ हर तरह का ऐशो आराम होगा।

चित्र 10.7: एत्मादुद्दौला का मकबरा, आगरा

Search On TG: @apna_pdf

Join Telegram: @apna_library

स्वर्ग को प्रतिबिंबित करने वाले डिज़ाइन तत्व

- **कुरान की आयतें:** प्रारंभ में, इन मकबरों की दीवारों पर कुरान की आयतें लिखी जाती थीं, जो धार्मिक श्रद्धा का प्रतीक थीं।
- **स्वर्गीय तत्त्व:** समय के साथ, मकबरों में जन्नत की याद दिलाने वाले तत्त्व शामिल किए गए। हुमायूँ का मकबरा और ताजमहल जैसे उल्लेखनीय उदाहरण चारबाग शैली के उदाहरण हैं, जहाँ मकबरा बाग-बगीचों के बीच या जलाशय के किनारे बनाया जाने लगा।

सरायें

- ये छोटे विश्राम स्थल,जो सीधे-सादे वर्गाकार या आयताकार डिजाइन के थे, शहरी क्षेत्रों को घेरे हुए थे और उपमहाद्वीप की विशालता को दर्शाते थे।
- भारतीय और विदेशी यात्रियों से लेकर तीर्थयात्रियों और व्यापारियों तक, सभी तरह के लोगों की आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर बनाए गए ये भवन सिर्फ रहने के स्थान नहीं, वरन इनका महत्त्व इससे कहीं अधिक था।
- विभिन्न सांस्कृतिक पृष्ठभूमियों के लोगों से भरे ये जीवंत सार्वजनिक स्थान अंतर-सांस्कृतिक विनिमय के केंद्र बन गए।
- सराय की चहल-पहल भरी प्रकृति ने अलग-अलग मूल और संस्कृतियों के लोगों को आपस में घुलने-मिलने का मौका दिया, जिससे सांस्कृतिक मानदंडों का मिश्रण हुआ। लोगों के बीच साझा या समन्वित प्रथाओं के इस उद्भव ने उस युग के सांस्कृतिक ताने-बाने को आकार देने में सराय की महत्त्वपूर्ण भूमिका को दर्शाया।
- इनके माध्यम से, मध्यकालीन भारत ने एक सामंजस्यपूर्ण संगम देखा, जिसने इसके विविध निवासियों के बीच एकता को बढ़ावा दिया।

जामा मस्जिद

- बड़ी मस्जिदें या जामा मस्जिदें मध्यकालीन भारत के शहरी ढाँचे का केंद्रीय हिस्सा बन गईं। धार्मिक स्थलों से कहीं ज्यादा, इन संरचनाओं ने बहुआयामी भूमिकाएँ निभाईं। (चित्र 10.8 देखें)
- प्रत्येक शुक्रवार को नमाज अदा करते समय वहाँ रौनक छा जाती थी।
- इन सभाओं के लिए **खुतबा आवश्यक था**, जहाँ धार्मिक शिक्षाओं के अलावा, शासक के कानूनों की घोषणा की जाती थी।
- दिलचस्प बात यह है कि एक शहर में आम तौर पर एक ही जामा मस्जिद होती है, जो इसे धार्मिक और सामाजिक दोनों गतिविधियों का केंद्र बनाती थी।
- जामा मस्जिद के जीवंत वातावरण का हिस्सा न केवल मुस्लिम बल्कि गैर-मुस्लिम भी थे और इस तरह से वाणिज्यिक और सांस्कृतिक आदान-प्रदान होता था।
- वास्तुकला की दृष्टि से, ये मस्जिदें काफी बड़ी होती थी और उनमें एक खुला सहन होता था। (चित्र 10.9 देखें)

चित्र 10.8: जामा मस्जिद, दिल्ली

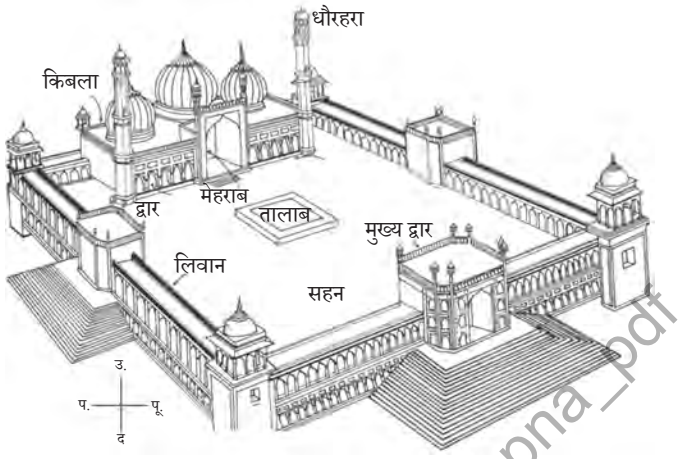

चित्र 10.9: जामा मस्जिद का रेखा-चित्र

- नमाजी अपनी इबादत (प्रार्थना) पेश करते समय मेहराब की ओर ही अपना मुख रखते थे क्योंकि यह मक्का में काबा की दिशा में होती थी।

इंडो-इस्लामिक वास्तुकला के कुछ उदाहरण

मांडू

समुद्र तल से करीब 2,000 फीट ऊपर स्थित मांडू भारत की समृद्ध वास्तुकला धरोहर का प्रमाण है। यह उत्तर में मालवा पठार और दक्षिण में हरी-भरी नर्मदा घाटी के बीच रणनीतिक रूप से स्थित है।

Search On TG: @apna_pdf

PW ONLYIAS BY PHYSICS WALLAH

Join Telegram: @apna_library

ऐतिहासिक महत्त्व और आवास

- मांडू की सामरिक विशेषता को देखकर **परमार**, **राजपूतों**, **अफगानों और मुगलों** ने इसे अपना आवास बनाया।
- **होशंगशाह के अधीन गौरी राजवंश** की राजधानी के रूप में इसे अपार प्रसिद्धि मिली।
- मांडू का इतिहास सुल्तान बाज बहादुर और रानी रूपमती के प्रेम प्रसंगो से जुड़ा रहा। मुगल बादशाह यहाँ वर्षा ऋतु में भोग विलास के लिए आया करते थे।

वास्तुकला का चमत्कार

- मांडू मध्यकालीन प्रांतीय कला और वास्तुकला का एक प्रमुख उदाहरण है। यहाँ आधिकारिक और आवासीय महलों, मनोरंजन मंडपों, मस्जिदों, कृत्रिम जलाशयों और बावलियों का खूबसूरती से मिश्रण है।
- अपनी विशालता के बावजूद, मेहराबदार मंडपों के रूप में डिज़ाइन की गई ये संरचनाएँ हवादार और ठंडी हैं। स्थानीय पत्थर और संगमरमर का बेहतरीन प्रयोग मांडू के पर्यावरण के साथ इसकी वास्तुकला के जुड़ाव को और भी बढ़ाता है।

मांडू की संरचनात्मक विशेषता

- **रिहायशी इमारतें:**इमारतें, दो कृत्रिम झील के चारों ओर निर्मित थी।
- **हिंडोला महल:** यह बड़े रेलवे पुल जैसा दिखता है। यहाँ सुल्तान का दीवान-ए-आम था, जहाँ आकर सुल्तान अपनी प्रजा को दर्शन दिया करता था। (चित्र 10.10 देखें)
- **जहाज महल: सुल्तान गयासुद्दीन खिलजी** द्वारा निर्मित एक सुंदर इमारत, जिसमें खुले मंडप और एक छत वाला स्विमिंग पूल है। (चित्र 10.11 देखें)
- **रानी रूपमती मंडप:** यह नर्मदा घाटी का मनोरम दृश्य प्रस्तुत करता है।

चित्र 10.10: हिंडोला महल, मांडू

चित्र 10.11: जहाज़ महल, मांडू

- **बाज बहादुर का महल:** इसमें हॉल और छतों से घिरा एक भव्य प्रांगण है।
- **होशंगशाह का मकबरा:** इसे अफगान शैली के पौरुष का उदाहरण माना जाता है लेकिन इसका जालीदार काम,उकेरे हुए टोड़े और तोरण निर्माण कार्य की कोमलता प्रकट करते हैं। (चित्र 10.12 देखें)
- **जामा मस्जिद:** यह शुक्रवार की नमाज़ के लिए बड़ी संख्या में इकट्ठे होने वाले नमाजियों के लिए बनाई गई थी। इसमें लाल बलुआ पत्थर, एक भव्य प्रवेशद्वार और जटिल नक्काशीदार कोष्ठक हैं। (चित्र 10.13 देखें)

चित्र 10.12: होशंगशाह का मकबरा

चित्र 10.13: जामा मस्जिद, मांडू

वास्तुकला आख्यान में विरासत

- यदि स्थानीय परंपराओं का साहसिक उल्लेख करें तो यह कहा जा सकता है कि मांडू की प्रांतीय शैली की वास्तुकला, दिल्ली के शाही भावनाओं की कला के बहुत नजदीक है। तथापि मान्डू की वास्तुकला की तथाकथित पौरुषपूर्ण और आडंबरहीन शैली जिसमें फर्शी जालियाँ, उकेरे गये टोड़े और संरचनाओं का हल्कापन पाया जाता है, इंडो इस्लामिक वास्तुकलात्मक अनुभव की कहानी का एक महत्त्वपूर्ण अध्याय है।

Search on TG: @apna_pdf

Join Telegram: @apna_library

ताज महल

चित्र 10.14: ताजमहल

- ताजमहल का निर्माण **शाहजहाँ ने** अपनी प्रिय पत्नी **मुमताज महल की याद में करवाया था**। ताजमहल न केवल स्थायी प्रेम का प्रतीक है, बल्कि यह भारत के आगरा में मुगल वास्तुकला के विकास के शिखर को भी दर्शाता है। (चित्र 10.14 देखें)

ताजमहल का सौंदर्य

- ताजमहल की भव्यता व शालीनता, उसकी आडंबरहीन तथा सरल योजना व उठान, उसके विभिन्न अंगों के बीच समानुपात एवं सुडौलता, संगमरमर के प्रयोग, यमुना नदी के किनारे उसकी स्थिति और ऊँचे आकाश में खड़ी उसकी भव्य इमारतों के कारण आती है।
- ताज की गरिमा दिन और रात के अलग-अलग समयों पर अलग-अलग रंगों का आभास कराती है।

चित्र 10.15: ताजमहल का प्रवेश द्वार

संरचनात्मक डिजाइन और लेआउट

- **प्रवेश द्वार:** ताज के विशाल परिसर में प्रवेश पाने के लिए लाल पत्थर से बने एक विशाल द्वार से होकर गुजरना पड़ता है। (चित्र 10.15 देखें)
- **चारबाग शैली:** मकबरा चारबाग शैली में बना है जिसमें फव्वारे और पानी के बीच से रास्ता है।
- **नदी तट की सुंदरता**: मकबरे की इमारत को बाग के मध्य न बनाकर उत्तरी किनारे पर बनाया गया है ताकि नदी तट की सुंदरता का लाभ उठाया जा सके।

प्रमुख वास्तुकला विशेषताएँ

चित्र 10.16: मीनारें

- **मीनारें:** छत के कोने पर चार खूबसूरत मीनारें हैं, जिनमें से प्रत्येक 132 फीट ऊँची है। (चित्र 10.16 देखें)
- **गुंबद और गुमटी:** इमारत के मुख्य भाग की चोटी पर गोलाकार गुंबद है और चार गुमटियाँ हैं जो सुंदर नम रेखा बनाती हैं।
- **संतुलित अनुपात:** इमारत की कुर्सी, उसकी दीवारों और गुंबद तथा गुमटियों के बीच पूर्ण समानुपात है।
- **पूरक संरचनाएँ:** लाल बलुआ पत्थर से बनी एक कब्रगाह पश्चिम में स्थित है। संतुलन बनाने के लिए पूर्व में भी एक ऐसी ही इमारत बनी हुई है।
- **सामग्री का चयन: राजस्थान की मकराना खानों** से प्राप्त शुद्ध सफेद संगमरमर, आस-पास की लाल बलुआ पत्थर की संरचनाओं के साथ खूबसूरती से मेल खाता है।

मकबरे का डिजाइन

- **आकार और छाया का खेल:** मकबरे की इमारत वर्गाकार है और इसके खाँचे आठ बगलें/बाइडेन बनाते हैं। उनके बीच गहरी छापें हैं। यह संरचनात्मक विशेषताएँ संपूर्ण इमारत के उठाव में भिन्न-भिन्न सतहों, छायाओं, रंगो आदि का आभास उत्पन्न करती है।
- **माप:** इमारत की ऊँचाई फर्श से छत तक 186 फुट और छत से शिखर के फगूरों तक भी 186 फुट है।

अंदरूनी वास्तुकला

- **स्थानिक लेआउट:** नीचे एक तहखाना है, जिसके ऊपर एक अष्टकोणीय विशाल कक्ष है। इसके दोनों ओर कमरे हैं, जो गलियारों के माध्यम से आपस में जुड़े हुए हैं।
- **प्रकाश:** इमारत के प्रत्येक हिस्से में रोशनी जाली- झरोखों से आती है जो भीतरी मेहराबों के आस-पास बने हुए हैं।
- **स्थानिक भव्यता:** अग्रभाग की ऊँचाई से मेल खाती ऊँची छत, एक भव्य अनुभूति उत्पन्न करती है।

उत्कृष्ट सजावट

- **पत्थर की कलात्मकता:** दीवारें उत्कृष्ट पत्थर की नक्काशी से सुशोभित हैं, जो स्पष्ट और सूक्ष्म उभार दोनों में हैं। (चित्र 10.17 देखें)
- **संगमरमर की कारीगरी:** जाली-झरोखों में जड़े संगमरमर में बारीक या सुकोमल नक्काशी की हुई है।
- **पिएत्रा द्यूरा तकनीक:** दीवारों और मकबरे के पत्थरों पर पीले संगमरमर, जेड और जैस्पर की जड़ाई का काम किया हुआ है। (चित्र 10.18 देखें)
- **पवित्र सुलेख:** अंत में, सफेद संगमरमर पर जैस्पर की जड़ाई के द्वारा कुरान की आयतें लिखी गई है। इस सुंदर लिखावट से दीवारों की सुंदरता में चार चाँद लग गए हैं। (चित्र 10.19 देखें)

Search on TG: @apna_pdf

PW ONLYIAS BY PHYSICS WALLAH

Join Telegram: @apna_library

चित्र 10.17: पत्थर की कलाकृतियाँ

चित्र 10.18: पित्रादूरा

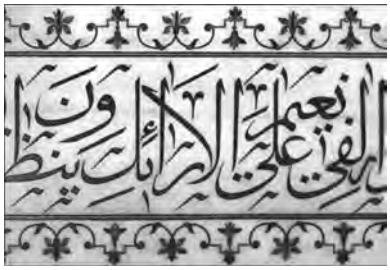

चित्र 10.19: पवित्र सुलेख

गोल गुम्बद

- गोल गुम्बद **आदिल शाही राजवंश** की वास्तुकला की भव्यता का प्रतीक है, जिसमें विभिन्न मध्यकालीन भारतीय शैलियों का सुंदर मिश्रण है। (चित्र 10.20 देखें)
- गुंबद, कर्नाटक के बीजापुर जिले में बीजापुर में स्थित है।

चित्र 10.20: गोल गुम्बद

ऐतिहासिक संदर्भ

- इसे आदिलशाही राजवंश (1489-1686) के सातवें सुल्तान मुहम्मद आदिलशाह के मकबरे के रूप में बनाया गया था।
- यह स्मारकीय इमारत आदिल शाही राजवंश के वास्तुकलात्मक योगदान को दर्शाती है, जिसने 1489 से 1686 के बीच बीजापुर पर शासन किया था।

वास्तुकला वैभव

- **गुम्बद परिसर:** मुख्य मकबरे के अलावा, परिसर में एक प्रवेश द्वार, एक **नक्कार खाना** (एक औपचारिक ड्रम हाउस या गुम्बद का ढोल)), एक मस्जिद और एक सराय शामिल है। ये सभी एक विशाल दीवार वाले बगीचे के भीतर बने हैं।

संरचनात्मक विशेषताएँ

- यह गहरे स्लेटी रंग के बेसाल्ट पत्थर से बना है।
- वर्गाकार इमारत एक भव्य गुंबद में परिणत होती है, जिसकी कुल ऊँचाई 200 फीट से अधिक है, तथा प्रत्येक दीवार की लंबाई 135 फीट, ऊँचाई 110 फीट तथा मोटाई 10 फीट है।
- अकेले इसका गुम्बद, 125 फीट के प्रभावशाली व्यास के साथ, 18,337 वर्ग फीट में फैला हुआ है, जो इसे विश्व का दूसरा सबसे बड़ा गुम्बद बनाता है।

मकबरे का आंतरिक गर्भगृह

- **शाही विश्राम स्थल:** मकबरे के कक्ष में सुल्तान, उनकी बेगमों और करीबी सगे-संबंधियों की स्मृतियाँ हैं। हालाँकि, उनकी वास्तविक कब्रें नीचे तहखाने के कक्ष में स्थित हैं, जहाँ सीढ़ियों के जरिए पहुँचा जा सकता है।
- **संरचनात्मक महारत:** एक चौकोर आधार पर विशाल गुंबद बनाने के लिए सरल तकनीकों की आवश्यकता थी। बगली डांटों ने गुंबद को उसका आकार प्रदान करने के साथ-साथ उसके भार को नीचे की दीवारों पर डाल दिया। बंगाली डांटों में चाप-जालियों या तारकाकार रूपों वाली प्रणालियों बनी हुई है जिनसे प्रतिच्छेदी चापों द्वारा बने कोण ढक जाते हैं।

ध्वनिक और सौंदर्य संबंधी नवाचार

- **ध्वनि गतिकी:** गुंबद के ढोल के साथ एक फुसफुसाहट दीर्घा भी है। (चित्र 10.21 देखें)
- **ऊँचा डिजाइन:** गुम्बद के प्रत्येक कोने पर मीनारों की नकल करते हुए चार, सात मंजिला अष्टकोणीय शिखर हैं। इन मीनारों में सीढ़ियाँ बनी हैं, जो गुम्बद के सबसे ऊपरी हिस्से तक पहुँच प्रदान करती हैं।
- **दृश्यात्मक आकर्षण:** गुंबद के ढोल को बेहतरीन पत्तियों से सजाया गया है। इसके अतिरिक्त, अग्रभाग में एक स्पष्ट ब्रैकेटे वाली कार्निस बनी हुई है। (चित्र 10.22 देखें)

Search On TG: @apna_pdf

Join Telegram: @apna_library

चित्र 10.21: फुस्फुसाहट दीर्घा

चित्र 10.22: गुम्बद का ढोल

स्थापत्य शैलियों का संगम

- यह मध्यकालीन भारत में प्रचलित अनेक वास्तु शैलियों का सुंदर संगम है।
- इसके गुंबदों, मेहराबों और ज्यामितीय आकृतियों में तैमूर और फारसी प्रभाव स्पष्ट दिखाई देते हैं।
- स्थानीय सामग्रियों को दक्कन के लोकप्रिय अलंकरणों के साथ मिश्रित किया गया है।
- कोने की मीनारें दिल्ली के किला- ए-कुहना जैसी प्रसिद्ध इमारतों में देखी गई बुर्जों से समानता रखती हैं।

निष्कर्ष

स्पष्ट है कि भारतीय उपमहाद्वीप में इस्लामी वास्तुकला ने भारतीय शिल्प और स्थापत्य पर विशेष प्रभाव डाला। दिल्ली सल्तनत और मुगल साम्राज्य के दौरान, इस्लामी वास्तुकला में भारतीय परंपराओं और इस्लामी स्थापत्य के तत्त्वों का अद्वितीय मिश्रण देखने को मिला। भारतीय कलात्मकता में समृद्ध रूपों और इस्लामी आकृतियों में सरलता और भव्यता का संतुलन स्थापित किया गया। मस्जिदों, मकबरों और किलों में लगे सुंदर मेहराब, गुंबद, जाली और चांदनी चौक जैसे तत्त्व भारतीय वास्तुकला में नवीनता का परिचायक बने। इन संरचनाओं में रचनात्मकता, ज्यामिति और सजावट का सामंजस्य भारतीय कलात्मक दृष्टिकोण से अद्वितीय था। इस्लामिक वास्तुकला ने भारतीय स्थापत्य कला को नया आयाम दिया, जिसमें ताम्र-शिल्प, पत्थर की नक्काशी और रंगीन टाइल्स का समावेश किया गया, जिससे एक नई कलात्मक शैली का विकास हुआ।

महत्त्वपूर्ण शब्दावलियाँ

- **ताजमहल:** मुगल बादशाह शाहजहाँ द्वारा भारत के आगरा में अपनी पत्नी मुमताज महल की याद में बनवाया गया सफेद संगमरमर का मकबरा।
- **चारबाग:** वर्गाकार भागों में पानी के चैनलों से अंतर्विभाजक चार भागों में विभाजित उद्यान।
- **मकराना:** राजस्थान की खदानों से प्राप्त उच्च गुणवत्ता वाला एक प्रकार का सफेद संगमरमर, जिसका प्रयोग ताजमहल में बड़े पैमाने पर किया गया है।
- **पित्रादूरा:** अर्द्ध कीमती पत्थरों के प्रयोग से बना मोसैक (पच्चीकारी का काम) जो ताजमहल में दीवारों, छत्रियों और संगमरमर पर देखने को मिलता है।
- **गोल गुंबद:** कर्नाटक के बीजापुर में स्थित, यह मुहम्मद आदिलशाह का मकबरा है और अपने विशाल गुंबद के लिए उल्लेखनीय है।
- **बीजापुर:** भारत के कर्नाटक राज्य का एक शहर, जो अपने मध्ययुगीन स्मारकों, विशेष रूप से आदिलशाही वंश के स्मारकों के लिए जाना जाता है।
- **इंडो-इस्लामिक वास्तुकला:** एक वास्तुशिल्प शैली जो भारतीय और इस्लामी परंपराओं के तत्त्वों को जोड़ती है।
- **पुरातात्त्विक अन्वेषण:** ऐतिहासिक संस्कृतियों और सभ्यताओं के बारे में अधिक जानने के लिए प्राचीन स्थलों का व्यवस्थित अध्ययन और जाँच।
- **कला-ऐतिहासिक स्थल:** वे स्थल जो वास्तुकला, मूर्तिकला और चित्रकला सहित कला के इतिहास के अध्ययन में महत्त्वपूर्ण महत्त्व रखते हैं।

Search On TG: @apna_pdf

PW ONLYIAS BY PHYSICS WALLAH

Join Telegram: @apna_library

इस शृंखला की अन्य पुस्तकें

₹279/-

PHYSICS WALLAH

PW APP

PWONLY IAS WEB

ISBN 978-93-6897-633-2

31a800cd-57d8-44a6-9b16-4c6731ef1ab0